भूमिका

श्री जवाहरलाल नेहरू राष्ट्र के प्राण थे। अंतिम समय तक आयु और युग भारत के ऋतुराज को प्रभावित न कर सके। किन्तु अचानक २७ मई, १९६४ को लाल गुलाब मुर्झा गया। भारत और संसार के करोड़ों लोगों के लिए, श्री नेहरू ही सर्वस्व थे। सबके हृदय शोकाकुल थे। सबको ऐसा लगा था जैसे कोई अपना प्रिय अचानक अपने बीच से उठ गया हो। आखिर उनमें ऐसी कौन-सी विशेषताएँ थी जिनके कारण हर आयु और हर श्रेणी के लोग उनके निधन पर अपने-आपको अनाथ जैसा अनुभव करने लगे।

श्री आनन्दशंकर शर्मा, सहायक निदेशक जन सम्पर्क, दिल्ली, ने इस पुस्तक में श्री नेहरू के उन विशेष गुणों की झांकी प्रस्तुत की है जिनके कारण जनता ने उनको अपना हृदय सम्राट बनाया। स्वतन्त्रता संग्राम के प्रमुख सेनानी, आधुनिक भारत के निर्माता और विश्व शांति के विधायक और निर्णायक—इन पहलुओं का श्री शर्मा ने संक्षिप्त रूप में सुन्दर विवेचन किया है। उनके विवरण में शुष्कता नहीं, सजीवता है। पुस्तक को पढ़कर उस महानतम व्यक्ति का साकार रूप नेत्रों के सामने आ जाता है, जिसने अपनी अमरवाणी से जनता जनार्दन को ५० वर्षों तक मंत्रमुग्ध रखा, उसका नेतृत्व किया और उसे अपने प्रेम रस में विभोर किया।

मुझे स्वयं कुछ वर्षों तक उस दिव्य पुरुष के साथ कार्य करने का अवसर मिला। उस समय को मैं कदापि नहीं भुला सकता। वह मेरे जीवन का अनमोल समय था। उस समय की कुछ घटनाएं मेरे हृदय-पटल पर सदा अंकित रहेंगी।

मुझे आशा है, श्री शर्मा की यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होने के अतिरिक्त साहित्यिक जगत में भी आदर की दृष्टि से देखी जायेगी।

—धर्मवीर

निवेदन

असंख्य हृदयों के सम्राट, श्री जवाहरलाल नेहरू के महाप्रयाण पर भारत और विश्व के सभी समाचार पत्रों ने अपनी-अपनी भाव भरी श्रद्धांजलि अर्पित की। सभी पत्रों ने उनके मानवीय गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा की और उनके अलौकिक व्यक्तित्व की विश्व रंग मंच पर जो छाप पड़ी, उसका अपने-अपने ढंग से विवेचन किया।

हिन्दी के दैनिक समाचार पत्रों ने भी अपना पवित्र कर्त्तव्य निभाने में कोई कसर उठा न रखी। उन्होंने अपने अनूठे ढग से नेहरू जी के अद्वितीय जीवन के सभी पक्षों पर मार्मिक शब्दों में इस प्रकार प्रकाश डाला जो पाठकों के हृदय में सदा के लिये घर कर गया। उन दिनों पाठकों को नेहरू जी के विषय में नई-नई सामग्री पढ़ने को मिलती, वे उन्हें रुचि लगाकर पढ़ते और साथ ही अपनी आंख भी भीगी कर लेते। यह क्रम कई दिनों तक चलता रहा। उन्हीं दिनों में मेरे परम मित्र श्री हरिदत्त शर्मा, समाचार संपादक नवभारत टाइम्स, के लेख कुछ ऐसे प्रभावपूर्ण एवं भाव भरे निकले कि वे मेरे अन्तरतम को छू गये। उनसे प्रेरित होकर मैंने भी नेहरू जी के प्रति पुस्तक के रूप में अपनी भाव सुमनांजलि अर्पित करने का निश्चय किया। इस कठिन कार्य में श्री हरिदत्त जी मुझे निरंतर प्रेरणा देते रहे। उन्होंने मुझे बहुमूल्य सुझाव भी दिये जो मैंने सहर्ष स्वीकार किये।

नेहरूजी की जीवनी पर अनेकों ग्रंथ और बड़ी-बड़ी खोजपूर्ण पुस्तकें समयानुसार लिखी जायेंगी। किन्तु उनके महान् प्रतिभाशाली व्यक्तित्व, उनके चमत्कारी गुणों और उनकी बहुमुखी प्रतिभा को एक छोटी पुस्तक में बांधना सहज कार्य न था। येन केन प्रकारेण, मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका। जैसा भी बन पाया, पुस्तक पाठकों के समक्ष है।

—आनंदशंकर शर्मा

इस पुस्तक में

पल्लव विजयोल्लास से प्रफुल्लित हो रहे हैं। इस अवसर पर यह स्वाभाविक है कि बसन्त ऋतु के समान ही राष्ट्र में नव जीवन का संचार भी हो। और जवाहरलाल ऋतुराज है—वह नव यौवन और विजयोल्लास का प्रतीक बनकर, अन्याय से निरन्तर संघर्ष करते हुए, स्वाधीनता का निष्ठावान सेनानी है।"

महान साधना

महाकवि रवीन्द्र ने यह उद्गार उस समय प्रकट किये थे, जब नेहरू जी कमला जी के निधन पर शोकाकुल थे। नेहरू जी के जीवन में व्यक्तिगत सुख, आराम, अवकाश, सम्पदा आदि का कोई महत्त्वपूर्ण स्थान न था। विधाता से उन्होंने दु:ख, वेदना, त्याग, बलिदान, पीड़ा और यातना को ही वरदान के रूप में पाया था। नेहरू जी ने इन सबको सहर्ष स्वीकार किया। उन्होंने अपने दुख-दर्द को कुछ न समझा और ४५ करोड़ जनता के दुःख-दर्द को सदैव अपना ही समझते रहे। चारों ओर अपनी प्यारी जनता से घिरे रहने पर भी, वे अकेले रहे। जनता के बीच में रहकर भी, उनका जीवन एकाकी रहा। यह कितना बड़ा तप था। यह कितनी महान् साधना थी। यह कितना महान त्याग था।

सुख, शान्ति और विजय का उनके जीवन में कोई मूल्य न था वे तो दुर्गम और कटीले मार्ग पर चलकर अपने देश और संसार की त्रस्त मानवता की पराधीनता से मुक्ति चाहते थे। अपने इन्हीं गुणों के कारण, वे भारतवासियों के हृद सम्राट बन गये। जहां कहीं भी वे जाते, जन समुदाय उनको घेर लेता। सारे नर और नारी उनके पीछे हो लेते। और बच्चे 'चाचा नेहरू' के नारे लगाते हुए, उनके पास आ जाते। वह जनता के समूह में हंसते, खिलखिलाते, फूलों की सुरभि बिखराते और सबको मंत्र-मुग्ध कर लेते।

अन्तिम विदा

२७ मई, १९६४ को अचानक लाल गुलाब मुरझा गया। राष्ट्र का ऋतुराज सदैव के लिए दूसरे लोक में चला गया। भारत का भाग्य पुरुष अपनी प्यारी जनता को अकेला छोड़कर आकाश में लीन हो गया। संसार के मुक्तिदाता ने संसार से अन्तिम विदाई ली।

वे राष्ट्र के प्राण थे। वे अपने समय के महा-मानव थे। उनका स्थान हर स्थान में ऊंचा था। उनके हृदय में जनता जनार्दन के प्रति जो सहानुभूति थी, जो करुणा थी, जो उदारता थी और जो प्रेम था, उसकी कोई सीमा नहीं। कोटि-

उसी ऐतिहासिक रामलीला मैदान में उनके निधन के दो दिन बाद, २६
१९६४ की संध्या को विदेशों से आये हुए विशिष्ट नेताओं ने अपनी भाव
श्रद्धांजलियां अर्पित की। इस शोक सभा में श्री नेहरू को श्रद्धांजलि अर्पित क
के लिए विशाल जन समूह उमड़ पड़ा। सभा में अमरीका और रूस दोनों म
देशों के प्रतिनिधियों—श्री डीन रस्क और श्री ए० एन० कोसिगिन—के अतिरि
स्वयं लंका की प्रधान मन्त्री श्रीमती भंडारनायके, संयुक्त अरब गणराज्य, घ
मोरक्को, अल्जीरिया, ट्यूनिशिया, युगोस्लाविया, युगांडा, जापान आदि देशों
विशेष प्रतिनिधियों ने भी श्री नेहरू के प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित किये।

पीड़ित मानवता के सेवक

राष्ट्रपति डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने स्वयं इस शोक सभा की अध्यक्षता
और बाहर के देशों से आये हुए विशिष्ट अतिथियों और नेताओं का धन्यवाद क
हुए, नेहरू जी के प्रति इस प्रकार, अपने उद्गार व्यक्त किये—

"जवाहरलाल नेहरू केवल भारत के ही सेवक नहीं, पीड़ित मानवता के से
थे। परमाणु शक्ति की स्वयं प्रलयंकारी विभीषिका को देखकर उन्होंने यह अनु
किया कि आज मनुष्य का शत्रु मनुष्य नहीं, राष्ट्र का शत्रु नहीं, वरन् सारी मनु
जाति का सबसे बड़ा शत्रु युद्ध है। युद्ध के इस खतरे को उन्होंने विश्वशां
अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्द्र और सहयोग तथा शान्तिपूर्ण सहजीवन के सिद्धान्तों
हटाने के लिए आजीवन प्रयत्न किया। वे राष्ट्रों के वैमनस्य और गलतफहमी औ
विवादों को सुलझाने और सौहार्द्र से दूर करने का सतत प्रयत्न करते रहे।

गांधी जी की मृत्यु के बाद जवाहरलाल की मृत्यु देश की सबसे बड़ा सदम
है। जवाहरलाल जन्म भर गांधी जी के आदर्शों को अमल में लाने के लिए प्रयत
करते रहे। गांधी जी का ध्येय—वाक्य था—"मैं हर मनुष्य की आंख से आं
पोंछना चाहता हूं। जवाहरलाल का भी यही ध्येय—वाक्य था।" वे विज्ञान औ
शिल्प की शक्ति से, सामाजिक न्याय के आधार पर, समाज की रचना से सबक
दुख दूर करना चाहते थे। वे चाहते थे कि इस देश में हर पुरुष, स्त्री और बालक
को पूर्ण समानता प्राप्त हो और उन्नति के पूरे और समान अवसर मिलें। यही
उनका मूल मन्त्र था, यही उनके कार्यों की प्रेरक शक्ति थी।

"जवाहरलाल नैतिक मूल्यों को सबसे ऊपर रखते थे। उनका विश्वास था कि
यदि नैतिकता को भुला दे, यदि धर्म-बुद्धि या अन्तःकरण को खो दे तो चाहे
कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो जाए, अन्त में उसका पतन होकर रहेगा।

जवाहरलाल का यह विश्वास था कि जिस प्रकार व्यक्तित्व नैतिकता से बंधा है, उसी प्रकार राष्ट्र भी नैतिकता से बंधे हैं। हमारे मनीषियों ने कहा है, धर्मो रक्षति रक्षित —यदि हम धर्म की रक्षा करेंगे, तो धर्म हमारी रक्षा करेगा और यदि हम धर्म को छोड़ देंगे तो धर्म भी हमको छोड़ देगा। इसका अर्थ केवल यही है कि अपने जीवन में हमें अपने क्षुद्र स्वार्थों के ऊपर राष्ट्र के हित को—सबके हित को रखना पड़ेगा। यदि नैतिक मूल्यों के रास्ते में राजनीतिक व आर्थिक हित आड़े आवें तो नैतिक मूल्यों को ही प्रधानता देनी होगी। भारत की स्वतन्त्रता की घड़ी में सन् १९४७ की १४ अगस्त को जवाहरलाल की क्रान्तिदर्शिनी दृष्टि ने भारत के अतीत और वर्तमान को देखा। सारे इतिहास के पृष्ठ उनके सामने खुले थे और उन्होंने यह घोषित किया कि नया भारत तब तक अपने अतीत के गौरव को नहीं प्राप्त कर सकता, जब तक वह अपने इस सिद्धान्त का पालन न करे कि धर्म—नैतिकता—साधन की पवित्रता सबसे ऊपर है। राष्ट्र और मानवता का हित ही उनके सारे कर्मों की कसौटी थी।"

जग सूना हो गया

उपराष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन ने आर्द्र स्वर में श्री नेहरू जी की पवित्र स्मृति में यह कहा—

"इन तीन दिनों में देश में कोई आंख नहीं होगी जिसमें आंसू नहीं निकले, कोई दिल नहीं होगा जो सिसका नहीं। किसी को ऐसा लगा कि भाई चला गया, किसी को ऐसा लगा कि दोस्त चला गया और सबको ऐसा लगा कि उनका प्यारा, उनका महबूब चला गया। इसलिए कि जो आदमी चला गया है उसने अपनी याद में ऐसी अच्छाइयां जमा कर ली थी, और ऐसी खूबियां इकट्ठा कर ली थी कि ऐसा लगता था कि वह सबका महबूब है, और सबका प्यारा है। उसपर जान निछावर करने को जी चाहता था, उसे बार-बार देखने को जी चाहता था। उससे बातें कर लेते थे तो ऐसा मालूम पड़ता कि वह हमारा भला चाहता है। उसके पास बैठने से ऐसा मालूम पड़ता था कि हम किसी अच्छी चीज के पास बैठे हैं, उससे दिल को तसकीन मिलती थी।

वह चीज तो चली गई, अब नहीं मिल सकेगी। लेकिन एक चीज है जो नहीं गई, और वह चीजें हैं जिन्होंने पण्डित नेहरू को हमारा महबूब बनाया था, जिनकी वजह से हमारा दिल उन पर आया था, जिनकी वजह से हम उनको देखने के लिए बेताब रहते थे, वह चीज इस देश की सेवा थी, इसको बड़ा बनाना था,

इसके सोते हुए लोगों को झिझोड़कर जगाना था, ऐसे लोगों को जो पुराने ढंग पर खेती करना चाहते थे, नये ढंग पर चलाना था, नई योजनाएं बनानी थीं, और इस देश की काया पलट देनी थी।

ऐसा आदमी चला गया। आंखों को तो ऐसा लगता है कि जैसे सन्नाटा हो गया है।"

उन्होंने कवि गालिब का यह शेर दोहराया :

> हर एक मुकाम वहीं है मकी से सफर असर।
> मजनूं जो मर गया तो जंगल उदास है ॥

और यह उदासी हम पर छाई है। माना कि यह उदासी सही है, इसमें भाग भी नहीं सकते लेकिन पण्डित जवाहरलाल नेहरू को अपने दिलों में जिन्दा रखना है, उनको अमर बनाना है।

कल जब उनकी अर्थी उठ रही थी, हमारे बच्चे, पुकार रहे थे, "चाचा नेहरू अमर है', तो हम सबकी यही पुकार होनी चाहिए और सच्ची पुकार होनी चाहिए। वे कैसे अमर होंगे। वह हमारे दिलों में अमर होंगे, हमारे काम से अमर होंगे, हमारे देश की उन्नति से अमर होंगे। वह आपके दिलों में ही बस कर अमर होंगे; आपकी मुहब्बत और आपकी मेहनत से अमर होंगे।

इसलिए अब आंसू बहाने का वक्त जाता रहा। आंसू सूख भी जाते हैं, बहते हैं और फिर सूख जाते हैं। हमारे-आपके आंसू भी सूख जाएंगे, लेकिन दिल की गर्मी को नहीं बुझने देना चाहिए। इरादे को मजबूत रखना चाहिए और आगे जिन्दगी को अच्छी तरह चलाना चाहिए।

पण्डित नेहरू ने और उनसे पहले उनके गुरु महात्मा गांधी ने हमारे जीवन की जड़ को इस तरह बोया था कि जब तक हम में एकता नहीं होगी, हम अच्छी जिन्दगी नहीं बना सकेंगे, अच्छा जीवन नहीं बना सकेंगे। उसे अकेले के लिए अपने दिल में आप यह दान लीजिए कि "कोई हिन्दुस्तानी का हाथ चाहे वह हिन्दू का हो, मुसलमान का हो, सिख हो या पारसी का हो, किसी दूसरे हिन्दुस्तानी पर नहीं उठेगा। अगर उठेगा तो आपको रोकना होगा। पण्डित नेहरू के नाम पर रोकना होगा, महात्मा गांधी के नाम पर रोकना होगा। इस देश के साथ रहना चाहिए और इसकी जिम्मेदारी हम पर, आप पर, सब पर है। मुझे उम्मीद है कि पण्डित नेहरू के नाम पर उनके गुरु महात्मा गांधी के नाम पर आप अपने दिलों को मजबूत करेंगे।

अकीदत के दो फूल मैं भी चढ़ाता हूं, आपने भी चढ़ाए हैं और मैं क्या चढ़ा

सकता हूं। लेकिन अगर हम यह अहद कर लें, यह पक्की नीयत कर लें, तो हमें यकीन है कि हम सोया साहस पैदा कर लेंगे। वैसे जिन्दगी में एक कमी तो जरूर रहेगी, लेकिन उसको पूरा करने की पूरी कोशिश करनी चाहिए।

"जब सुना है तेरे बगैर आंखों का क्या हाल करें।
अब भी उतनी बरसी थीं और अब भी उतनी बरसी हैं।।"

अन्तर्राष्ट्रीय नेता

श्री लाल बहादुर शास्त्री के हृदय पर जो घाव लगा, उसको उन्होंने बड़े दुख के साथ इन शब्दों में बतलाया—

"वैसे तो दुनिया में मौत सदा बना रहता है, लेकिन जो घटना परसों घटी वह ऐसी अचानक हुई कि उसने हमारे ऊपर एक बड़ा घाव किया। अगर जवाहर-लाल जी के कदमों में बैठकर हमने कुछ सीखा है, तो यही सीखा है कि चाहे कितना बड़ा घाव हो और चाहे कितना बड़ा जख्म हो, हम चाहे लड़खड़ाएं, लेकिन हिम्मत नहीं हारेंगे, खड़े होंगे, मजबूती से खड़े होंगे और आगे बढ़ेंगे।

"जवाहरलाल जी आज भारत के नहीं, सारी दुनिया के हैं और यह पहला मौका है, आज जिनकी याद में यहां दुनिया के बड़े से-बड़े लोग, बड़े-से-बड़े देशों के प्रतिष्ठित व्यक्ति और महानुभाव आकर इकट्ठे हुए हैं।

"इससे आप अन्दाजा लगा सकते हैं कि जवाहरलाल जी केवल राष्ट्रीय नेता ही नहीं, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय नेता थे। अलग-अलग दुनियाओं में बसने वाले अलग-अलग ख्याल में रहने वाले और काम करने वाले, यदि उनको इस दुनिया में किसी एक व्यक्ति ने कुछ अपने तरीके से नजदीक-से-नजदीक लाने की कोशिश की है, तो उसका श्रेय पण्डित जवाहरलाल जी को है।

जवाहरलाल जी एक सिपाही थे और सिपहसालार भी थे। एक सिपाही की हैसियत से गांधी जी के झण्डे के नीचे आजादी का झण्डा उन्होंने पकड़ा। मुझे वह बात भूलती नहीं जब १९२९ में लाहौर की कांग्रेस हुई। तब पण्डित मोती लाल नेहरू ने—उसके पिछ कांग्रेस के प्रेसीडेण्ट थे—जवाहरलाल जी को अपनी गद्दी देते हुए कहा, "जो बात पूरा नहीं कर सका हूं, उसे बेटा पूरा करेगा।" एक-एक अक्षर जो पिता ने कहा था, उसको जवाहरलाल ने पूरा किया। किस तरह से वह आजादी की लड़ाई लड़े और एक सिपहसालार की हैसियत से लड़े और उसको जीता।

जवाहरलाल जी कर्मनिष्ठ थे, हमेशा काम करते रहते थे और लगातार करते

थे, लेकिन उनका बड़प्पन यह था कि वह रचना भी जानते थे, वह बनाना
जानते थे।

इसीलिए जब गांधी जी ने उन पर बड़ी जिम्मेदारी सौंपी कि वे देश
काम को आजादी के बाद उठाएं और चलाएं; उस समय जवाहरलाल जी ने व
का काम अपने ऊपर लिया और पिछले १७ साल का इतिहास यह दिखल
है कि जवाहरलाल जी के नेतृत्व में किस तरह से देश के विकास का काम
बढ़ा। पिछले १७ साल का इतिहास अगर भारत का उठाकर देखा जाए, तो
दुनिया में ऐसी मिसाल कम पाएंगे कि इतना बड़ा मुल्क, जहां करोड़ों की आब
हो, वहां लोकतन्त्र और पंचायती ढंग से देश का विकास किया जाए और देश
आर्थिक दशा बनाई जाए। देश में एक नया वायुमण्डल पैदा किया जाए।

"देश में क्रान्ति दीपक जवाहरलाल जी ने जलाया कि हमें गरीबी की जंज
को तोड़-फोड़ करके मिटा देना है, और अपने देश में हमें हरेक को काम देना
हरेक बाल-बच्चे को हंसता और खेलता हुआ देखना है। वह नया समाज, जिस
दीपक जवाहरलाल जी ने जलाया है, उस मशाल को लेकर हमें आगे बढ़ना है।

प्यारा नाम

• रूस के प्रथम उप प्रधान मन्त्री श्री ए० एन० कोसिगिन ने नेहरू जी को
का एक महान् राजनेता, आजादी का सिपाही और सच्चा देशभक्त कहकर उ
अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। उन्होंने कहा कि "नेहरू जी ने सारी जिन्दगी अप
देश की जनता को अर्पित की थी। उनके निधन से सोवियत जनता को भारी सद
पहुंचा है। जवाहरलाल नेहरू का नाम सोवियत जनता के लिए बड़ा प्यारा ना
है; क्योंकि यह उपनिवेशवाद को खत्म करने और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को शांति
पूर्ण तरीकों से हल करने की कोशिशों से जुड़ा हुआ है। उनकी सादगी, नम्रत
इंसानियत, सच्चाई और सद्भावना की छाप सदा अमिट रहेगी।

नेहरू जी की मृत्यु से होने वाली क्षति पूरी नहीं हो सकती। वर्तमान युग के
इस असाधारण राजनेता, महान् मस्तिष्क और विशाल हृदय रखने वाले नागरिक
और इन्सान का सबसे बढ़िया स्मारक यह होगा कि इस विश्व को युद्ध-संघर्ष औ
अशान्ति से मुक्त किया जाए।"

लोकतन्त्र के प्रतीक

अमरीका के विदेश मन्त्री श्री डीनरस्क ने कहा, "इस महान् अवसाद में

सम्मिलित होने के लिए विश्व के नेताओं ने अपने मतभेदों को भुला दिया। संसार के साधारण जन नर-नारी और बच्चे सभी यह अनुभव करते हैं कि शान्ति, सौजन्य तथा मानव मात्र का पोषक उनसे छीन लिया गया है।

यदि हमें अपनी शोक-विह्वलता में सान्त्वना की आवश्यकता हो, तो हमें उसे उस नेता के कामों में ढूंढ़ना चाहिए जो हमसे बिछुड़ चुका है। भारतीय लोकतन्त्र, जो विश्व का सबसे बड़ा लोकतन्त्र है, हमारे युग पर पण्डित नेहरू की महान् छाप का प्रतीक है। उन्होंने भारतीय लोगों और विश्व के हक में यह विरासत छोड़ जाने के लिए अपना समस्त जीवन ही उत्सर्ग कर दिया।'

समान आदर्श

श्री लंका की प्रधान मन्त्री श्रीमती भण्डारनायके ने कहा, "यह कितना दुखद और अजीब लगा होगा कि जब हिन्दुस्तान में किसी सुप्रभात को उठते ही यह मालूम हो कि देश जवाहरलाल नेहरू को खो बैठा। हिन्दुस्तान के करोड़ों लोगों को ऐसा महसूस हुआ होगा।

अपनी व्यक्तिगत बातों का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा, "मेरे स्वर्गीय पति श्री भण्डारनायके और नेहरू जी के आदर्शों में बहुत समानता थी—मिसाल के तौर पर विश्व शान्ति के लिए सतत प्रयास, गुलाम देशों की आजादी और जन-साधारण की खुशहाली इत्यादि।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में भी नेहरू जी की आवाज़ पवित्र, नैतिक और आशाप्रद होती थी।"

महान् राजनीतिज्ञ

संयुक्त अरब गणराज्य के उप-राष्ट्रपति श्री हुसैनशफी ने राष्ट्रपति नासिर और वहां की जनता की संवेदना व्यक्त करते हुए कहा, "पण्डित जवाहरलाल नेहरू जैसे महापुरुष संसार में बहुत कम पैदा होते हैं। उनकी अंत्येष्टि के मौके पर अपनी श्रद्धांजलि भेंट करने के लिए जो मानवता उमड़ रही थी, वह सबूत था इस बात का कि भारत की जनता उन्हें कितना प्यार करती थी। वह एक महान् राजनीतिज्ञ और महान् विचारक थे जिन्होंने अपना सारा जीवन मानवता की सेवा में लगाया।"

उन्होंने कहा, "नेहरू जी की मृत्यु पर अरब गणराज्य में भारी मातम मनाया गया है। हालांकि नेहरू जी अब नहीं रहे, मगर उनके ऊंचे आदर्श हमेशा लोगों को

स्वतन्त्रता और प्रगति के लिए प्रेरित करते रहेंगे।"

भूमि और आकाश रो पड़े

जापान के विदेशमंत्री श्री ओहिरो ने प्रधान मंत्री नेहरू की दुखद मृत्यु प
जापान के लोगों की ओर से हार्दिक दुःख प्रगट करते हुए कहा, "उनके निधन
जापान की जनता को जितना दुःख पहुंचा है, आप उसकी कल्पना नहीं कर सकेंगे
नेहरू जी के निधन के बाद दिल्ली में तूफान और भूचाल आया उससे लगता
कि उनकी मृत्यु पर भूमि और आकाश दोनों रो पड़े।"

उन्होंने भारत के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए आशा व्यक्त की
"प्रधान मन्त्री नेहरू भारत और जापान की मित्रता की जो नींव रख गये हैं व
दिन पर दिन सुदृढ़ होगी।"

हम इतने छोटे हैं कि उस दिव्य पुरुष को क्या श्रद्धांजलि अर्पित कर सकें
हैं। हम उनकी महानता का स्मरण ही कर सकते हैं और उनके पद-चिह्नों पर च
सकते हैं। उनके चले जाने से एक सपना अधूरा रह गया, एक ज्योति चली गई
एक लौ अनन्त में विलीन हो गई। हमारे जीवन की अमूल्य निधि हमसे सदैव
लिए अलग हो गई।

●●●

अद्वितीय

इस भारतीय नेता से अधिक व्यक्ति-स्वातंत्र्य में विश्वास रखने वाला और कोई दूसरा आदमी मैंने इस संसार में नहीं देखा है।

जान एफ. केनेडी
(अमरीका के भूतपूर्व राष्ट्रपति)

२

अमर ज्योति

"यह देवदूत जैसा चेहरा और यह मीठी-मीठी आदतें। भारतीयो, इसे राजनीति की नजर से बचाओ—बीस साल पहले मैंने नेहरू को देखकर कहा था। मगर आज कहता हूं कि पंखुड़ी ने फौलाद को काट लिया है।"
—एल्डुअस हक्सले

जवाहरलाल नेहरू त्रिवेणी के मूर्तिमान रूप थे। उनका जन्म प्रयाग में—जहां परम पावन गंगा, यमुना और अन्तर्मुखी सरस्वती हैं—१४ नवम्बर, १८८९ को हुआ। १५ अगस्त, १९४७ से लेकर २७ मई, १९६४ तक वे राजधानी के तीन मूर्ति भवन में रहे। उसके बाद, उनकी मिट्टी इस देश की मिट्टी में मिल गई। और जो ऊपर बगूलों में चली गई, वह बादलों के साथ पानी बनकर धरती पर आ जाएगी। बंगाल की खाड़ी और अरब सागर भी नेहरू जी की मिट्टी से ओत-प्रोत है। और उनमें उठने वाली भाप भी उसी गरिमा से युक्त है। बरसने पर वह गरिमा भी इसी धरती पर आ जाएगी। नेहरू जी का खून-पसीना इसी धरती पर गिरेगा। भारत नेहरू मय है और नेहरू भारत मय है।

प्रेम का प्रतिदान नहीं

प्रेम के देवता जवाहरलाल ने, जिन्होंने आधी शताब्दी तक खून-पसीने से देश की सेवा की, अपनी वसीयत में देश के लोगों का उनके लिए जो असीम प्यार था, उसका विशेष रूप से जिक्र किया।

२१ जून, १९५४ को लिखी वसीयत में, उन्होंने कहा, "भारतीय जनता से मुझे इतना प्रेम व स्नेह मिला है कि मैं कुछ भी क्यों न करूं इस प्रेम व स्नेह का एक कतरा भी मैं प्रतिदान में दे नहीं सकता और दरअसल प्रेम जैसी बेशकीमती

चीज का कोई प्रतिदान हो भी नहीं सकता है। बहुत लोग सराहे गये हैं, कुछ
श्रद्धा मिली है। पर भारतीय जनता के सभी वर्ग के लोगों का स्नेह मुझे इ
ज्यादा मिला है कि मैं उसके बोझ से दब गया हूं, अभिभूत हो गया हूं। मैं के
यही कामना कर सकता हूं आगे जितने वर्ष भी मैं जीऊं अपने लोगों के लायक
और उनके प्रेम पाने की पात्रता मुझमें हो।

अपने असंख्य साथियों और सहयोगियों के प्रति मेरी कृतज्ञता और भी ग
है। हम महान् कार्यों में साथी रहे हैं और इनकी सफलता और इनके सुख,
उनके साथ निश्चित रूप से जुड़े ही रहते हैं, हमने साथ जाने है।"

नेहरू जी ने अपनी वसीयत में भारत की जनता के प्रति इतनी गहरी कृतज्ञ
दर्शाई है कि उसे देखकर रोमांच हो आता है। वास्तव में देश की जनता उन
पाकर सब कुछ भूल गई थी। जनता को उन पर इतना विश्वास था कि उसकी
धड़कन में अपने दिल की ही धड़कन सुनाई देती थी। जनता को यह पूरा अहस
था कि नेहरू जी का हर काम 'जन सुखाय, जन हिताय' ही होता है।

दुनियां यह देखकर अचम्भा करती थी कि भारत के सभी वर्गों की जन
नेहरू जी को क्यों इतना चाहती है, क्यों उन्हें इतना प्यार करती है, क्यों उन
इशारे पर चलती है। पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित, कुलीन सभ्यता के प्रतिनि
कैसे जनता से अपना तारतम्य कर लेते थे। उनके सुख में सुखी और दुःख में दु
होते थे। उनके दुःख-दर्द को अपना दुःख-दर्द समझते थे। ऐसा क्या था ?

संवेदन शीलता

नेहरू जी ने अपने चिन्तन को सदा ऐतिहासिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्री
संदर्भों में रखा। उनके लिए तो इतना काफी था कि उनकी निष्ठा मानवता औ
उससे भी कहीं अधिक पीड़ित मानवता में थी और उसकी मुक्ति के लिए वे सदै
चिन्तित रहते थे और उसी में जुटे रहते थे। उनकी यह निष्ठा वास्तव में ए
कलाकार की संवेदन शीलता थी। उनके हृदय में पीड़ित मानवों का दुःख-दर्द का
की तरह चुभता था और उससे वे छटपटाते थे। उसी से उनके हृदय में पीड़ा पैद
होती थी। उसी तड़प से उनके कर्म, उनके भाषण, उनके विचार, उनके लेख
निकलते थे। केवल अन्तर इतना है कि कलाकार की संवेदनशीलता के साथ उनमें
दार्शनिक की सूक्ष्म दृष्टि और विवेचन की प्रगाढ़ शक्ति भी थी। वे बार-बा
आत्म निरीक्षण करते थे और उसके प्रकाश में जन सेवा के पथ को पुष्ट करते थे

बचपन से ही नेहरू जी का मन एक कलाकार का मन था। वे नवयुग के

नवशिक्षित कुलीन परिवार की देन थे। उन्होंने उसी प्रकार से अपनी कार्य प्रणाली भी बनाई। उन्होंने भारतीय संस्कृति और इतिहास का गहरा अध्ययन किया और उसमे जो ज्ञान मिला, उसको उन्होंने अपने व्यक्तित्व का एक अंश बनाया। किन्तु साथ ही उनके दिल और दिमाग के दरवाज़े विस्तृत रूप से खुले थे। पूर्व या पश्चिम जहा से भी उनको कोई चीज़ आकर्षक लगी, उसी को उन्होंने ग्रहण किया। इस तरह उन्होंने समय के साथ-साथ कदम-से-कदम मिलाया और भारत की ४५ करोड जनता, बिना किसी हिचकिचाहट के, उनके पीछे चलती गई। निःसंदेह उनकी रफ्तार तेज़ थी, उनकी चाल विशेष थी। उनकी गति रुक नही सकती थी और न मंद पड सकती थी। उनका दिमाग प्राचीनता के साथ आधुनिकता से भी ओत-प्रोत था। भारतीय संस्कृति के साथ विश्व संस्कृति से भी वे ओत-प्रोत थे। राष्ट्रीयता के साथ अन्तर्राष्ट्रीयता का भी उनके मन में प्रमुख स्थान था। इन सब कारणों से वे भारतीय परम्परा के पथ से अपने को सदैव आगे पाते थे। वे दूरदर्शी थे, युग द्रष्टा थे और भारतीय जनता को अपने साथ ले जाने में कितने सफल हुए? यह आज सारा संसार जानता है। किन्तु इसका मूल्यांकन इतिहास करेगा।

जो लोग इस पीढ़ी के है, उन्होंने तो उनके व्यक्तित्व का चमत्कार सैकडो बार, हज़ारो बार देखा है। पीड़ित मानवता के लिए संघर्ष के सैकडो नज़ारे जनता के सामने चलचित्र की नाईं गुज़रे है। जनता स्वयं सदैव उनके साथ रही है। नेहरू जी के हृदय की विशालता है कि उन्होंने अपनी वसीयत मे, जनता के अगाध स्नेह को ऐसे मार्मिक शब्दों में अंगीकार किया है, अपने को जनता का साथी माना है और सारी सफलताओं का श्रेय जनता को ही दिया है।

यह थी उनके प्यार की गहराई, यह थी उनके स्नेह की निर्मलता, और यह थी उनके पवित्र प्रेम की चरम सीमा।

मुट्ठी-भर भस्मी गंगा में

अपनी भस्मी गंगा मे प्रवाहित किये जाने की इच्छा के बारे मे उन्होंने कहा :

"मुट्ठी भर भस्मी इलाहाबाद मे गंगा मे प्रवाहित करने की मेरी इच्छा के पीछे कोई धार्मिक बात नही है। इस बारे मे मेरी कोई धार्मिक भावना नही है। बचपन से ही इलाहाबाद मे गंगा और यमुना से मेरा लगाव रहा है, जैसे-जैसे बड़ा होता गया हूं, वैसे-वैसे यह लगाव बढता ही गया है। मैने मौसम बदलने के साथ इनके बदलते रंगो और मूडो को देखा है और इतिहास, किवदन्तियो, परम्पराओ, गीतो

और कहानियों की उन सभी बातों पर अक्सर सोचा है जो युगों से इनसे जुड़ती चली आई हैं।

खासकर गंगा, हमारे देश की नदी है, लोगों की प्यारी है और उसकी विजय का हर्ष और हार व जीत सभी चीजें तो उससे जुड़ी हैं। गंगा हमारी शताब्दियों पुरानी सभ्यता व संस्कृति का प्रतीक रही है। हरदम बदलती हुई और हरदम बहती हुई है। वह मुझे हिमालय के हिमाच्छादित शिखरों व वादियों की याद दिलाती है जिनसे मेरा लगाव और प्यार बहुत ज्यादा रहा है। गंगा मुझे नीचे के उन सम्य श्यामल फैले हुए मैदानों की याद दिलाती है जहां मेरी जिन्दगी और काम ढले हैं। सुबह की रोशनी में मुस्कराती नाचती गंगा मुझे याद आती है और शाम के सायों के साथ श्याम, उदास और रहस्यों में ओत-प्रोत होती हुई भी मुझे वह याद आती है। जाड़ों में सकरी, धीमी पर उसकी मोहनेवाली लोच याद आती है, वर्षा में फैलती हुई समुद्र होती हुई गरजती याद आती है। गंगा में वही समुद्र जैसी विनाश की सारी शक्ति मेरे लिए अतीत का प्रतीक व उसकी स्मृति है जो वर्तमान में प्रवाहित है और भविष्य के महासमुद्र में आगे बढ़ते रहने की है।"

"यद्यपि मैंने अतीत की बहुत-सी परम्पराओं को त्याग दिया है और मैं चाहता हूं कि भारत उन सभी बन्धनों से मुक्त हो जो उसे कसे हुए हैं और संकुचित करते हैं, उसकी जनता में अलगाव पैदा करते हैं और उनमें से बहुतों का दमन करते हैं और देह व मन के उन्मुक्त विकास में बाधा खड़ी करते हैं। यद्यपि मैं यह सब चाहता हूं फिर भी मैं अपने को अतीत से पूरी तरह काटना नहीं चाहता। उस महान विरासत व परम्परा के लिए, जो हमारी है, मुझे गर्व है। मैं इस बात के प्रति भी जागरूक हूं कि मैं भी, हम सभी की तरह, उस अटूट शृंखला की एक कड़ी हूं जो इतिहास के ऊषाकाल से युगों-युगों से चली आ रही है। यह शृंखला मैं तोड़ना नहीं चाहता क्योंकि मैं उसे बहुमूल्य मानता हूं। और इससे प्रेरणा प्राप्त करता हूं। अपनी इच्छा के साथ और हमारे महान सांस्कृतिक विरासत के प्रति श्रद्धांजलि रूप में, मैं यह अनुरोध करता हूं कि मेरी मुट्ठी भर भस्म इलाहाबाद की गंगा में प्रवाहित की जाए और जो गंगा में प्रवाहित होकर उस महा समुद्र में जाए जो हमारे देश के तट पखारता है।"

गंगा को अद्वितीय श्रद्धांजलि

यह थी नेहरूजी की गंगा को अद्वितीय श्रद्धांजलि। ऐसी हमारी [illegible]

संस्कृति की प्रतीक है। अनेक धार्मिक, सांस्कृतिक परम्पराओं को अपने आंचल में लिए, गंगा, अनन्तकाल से, स्नेहमयी जननी की भांति भारतीयों के जीवन का पोषण करती रही है।

वास्तव में गंगा बिना भारत की कल्पना ही अधूरी है। इस कारण भारतवासी सबसे विरक्त हो सकता है, सबकी उपेक्षा कर सकता है, मगर गंगा से वह अपना नाता नहीं तोड़ सकता। गंगा भारत मां की शरीर, सजीव ममता है। ममता की अविरल धारा है। भारतवासी बड़ा भाग्यवान है, वह एक न एक दिन गंगा की धारा पकड़कर समुद्र तक चला जाता है और सारे जगत् के तट पर पहुंच जाता है।

यहां नेहरू जी के अन्तर से आवाज आई कि गंगा के साथ एकरूप होकर वे इस घर को प्राप्त कर सकते हैं। गंगा ही उन्हें महासागर के द्वार पर ले जाएगी—महासागर का यह द्वार सर्वमानव-मिलन का द्वार है। इतिहास ने साक्षी दी और पण्डित जी की कलम से गंगा की महिमा में उद्गार निकले। शायद ही किसी कवि की वाणी से ऐसा रस—निर्झर बहा होगा और धार्मिक-से-धार्मिक हिन्दू ने भी शायद ही कभी गंगा को हृदय से ऐसी श्रद्धांजलि अर्पित की होगी।

गंगा का द्वार सदैव सबके लिए खुला रहता है। अर्पण में गंगा क्या लेती है? हमारी अस्थियां। संसार की सारी ममताओं को, तकाजों को तृप्त करने के बाद जो कूड़ा-करकट हमारे पास बच जाता है, उसे ही गंगा को हम चढ़ाते हैं। शरीर हम संसार को चढ़ाते हैं और उसकी राख चढ़ाते हैं गंगा को। और गंगा उसे स्वीकार कर लेती है—संसार से जो जूठन बच जाती है अस्थियों के रूप में, गंगा उसे लेने से इन्कार नहीं करती।

जीवन की अनन्त आकांक्षाओं को तृप्त कर उनके शरीर ने अन्त में गंगापूजा में ही अपनी परम सार्थकता देखी है।

नेहरू जी को अपने जीवन-काल में गंगा से अपार प्रेम था, मरने पर भी गंगामय हो जाना चाहते थे—गंगा के माध्यम से सारे भारत और विश्व के साथ एकरूप हो जाना चाहते थे।

आदि कवि वाल्मीकि, स्वामी रामतीर्थ, भर्तृहरि आदि सभी गंगा की छवि पर नेहरू जी की तरह मुग्ध थे। सभी ने गंगा से इस प्रकार का अनुरोध किया था। सभी अपने पार्थिव शरीर को गंगार्पण करना चाहते थे।

कर्मयोगी को जीवन के विरति काल में जिस क्षणभंगुरता के दर्शन होते हैं, उसकी गहराई को कोई विषाद, कोई करुणा नहीं नाप सकती। नेहरू जी की वसीयत के साथ भी ऐसी ही मनःस्थिति का योग है। सारी रिक्तता उन्होंने गंगा

को अर्पण करके पूर्ण की है। भर्तृहरि ने भी अपने वैराग्य की गोधूलि में ऐसी ही रिक्तता देखी थी और उसे भरने के लिए गंगा की शरण ली थी।

खेतों की मिट्टी में

श्री नेहरू ने अपनी वसीयत में यह भी कहा, "मेरी भस्मी का अधिकांश हिस्सा दूसरी तरह काम में लाया जाए। खेतों के ऊपर जहां हमारे किसान मेहनत करते हैं, *बिखराया जाए ताकि वह भारत की धूल और मिट्टी में घुल-मिल जाए और उसमें इस तरह समाहित रहे कि उसे पहचाना न जा सके।"*

नेहरू जी को भारत की मिट्टी के प्रति इतना गहरा खिंचाव था, इतना सच्चा अनुराग था, इतना कोमल अनुरोध था, ऐसी हार्दिक इच्छा थी, ऐसी बड़ी श्रद्धा थी, ऐसा प्रगाढ़ प्रेम था जो लेखनीबद्ध नहीं किया जा सकता।

इससे नेहरू जी का किसानों और मेहनतकशों के प्रति प्रगाढ़ प्रेम टपकता है। उनकी आत्मा के सामने यह तकाजा था कि उनकी मिट्टी भारत की मिट्टी से मिलकर एक हो जाए। नेहरू और भारत में कोई अन्तर न रहे। और सदा के लिए उनके हृदय की आवाज ४५ करोड़ भारतवासियों के हृदय की आवाज बन जाए। उनमें और भारतवासियों में जन-जन्मान्तर तक पूर्ण एकाकार हो जाए।

नेहरू जी ने एक बार कहा था, ***"इस धरती की ताजा गंध मुझे बुद्ध की याद दिलाती है।"* अब इस धरती की ताजा गंध भारतवासियों को सदैव नेहरू जी की याद दिलाती रहेगी।**

अखंड चेतना

इस प्रकार देश को जागृत करके उसे एक सामूहिक चेतना में बांधना, नेहरू जी की सबसे बड़ी साधना थी। उन्होंने इस महान् कार्य में अपना सारा जीवन लगा दिया और मरने के बाद भी अपनी मिट्टी को जनता की धरोहर समझकर जनता को ही सौंप गए। यह थी नेहरू जी की अन्तिम श्रद्धांजलि भारत माता को।

नेहरू जी ने अपने एक पत्र में शंकराचार्य जी का जिक्र करते हुए लिखा है कि बुद्ध के बाद शंकराचार्य भारत की आत्मा थे। बुद्ध ने अपने जीवन काल में भारत की बिखरी चेतना को इतना एक नहीं किया जितना उनके शिष्यों ने उनकी मृत्यु के बाद किया था। मृत्यु के बाद उनकी अस्थियों पर जो स्तूप बने, वे वस्तुत: भारत की अखंड चेतना के प्रहरी हैं। शंकराचार्य ने भी यही किया था। हिमालय

से कन्याकुमारी तक उन्होंने भारतीय चेतना को चार छोरों में चार धाम स्थापित करके ऐसा बांध दिया जिसमें भारतीय चेतना एक सूत्र में बंध गई।

बुद्ध की इस परम्परा को नेहरूजी ने महात्मा गांधी के स्वर्गवास के बाद फिर से प्रचलित करवाया। गांधीजी की भस्म को उन्होंने देश की सारी नदियों में प्रवाहित करवाया। अपने फूलों को भी वे इस परम्परा का माध्यम बनाना चाहते थे। बल्कि इसमें भी कहीं अधिक चमत्कार होने की उनकी कामना थी। देश की सिर्फ पवित्र नदियों में ही नहीं, गंगा और यमुना में ही नहीं, बल्कि खेतों और खलिहानों में भी, अर्थात् देश के कोने-कोने में उनके फूल बिखेर दिए जाएं। इस कामना के पीछे छिपी हुई थी उनकी यह भावना—कि सामूहिक चेतना में बंधकर देश एक हो जाए। उनके कण-कण देश की मिट्टी में मिलकर सारे भारतवासियों को एक कर दें। उनके हृदय से अपने पराए का भेदभाव मिट जाए। क्योंकि इस देश की मिट्टी इसी की रहेगी। और जब नेहरूजी की मिट्टी देश के कण-कण में फैल जाएगी, मिलकर एक हो जाएगी, तो सारे देश की सामूहिक चेतना एक हो जाएगी।

महर्षि अरविन्द ने एक स्थान पर लिखा है

"कैलाश से कन्याकुमारी तक
समुद्र से समुद्र तक
मां का ही महोच्छ्वास है।"

अरबी संस्कृति के मशहूर कवि मुहम्मद नासिर ने अपनी वसीयत में यह कामना प्रकट की

"मुझे जलाकर, मेरी राख को नदियों और समुद्रों में फेंकना, पहाड़ों और मैदानों में बिखेरना और हर मजहब के देवालयों की उन सीढ़ियों पर बिछाना जहां लोग इबादत के लिए आते हैं।"

थाईलैंड के बौद्ध पंडित मगुवाम ने अपने अंतिम समय में, अपने शिष्य से यह शब्द कहे:

'मेरे मरते ही मेरे शव के जितने टुकड़े हो सकें उतने टुकड़ों में काटकर जहां तक तुम जा सको, वहां तक धरती के कोने-कोने में बिखेर देना। मेरी देह जब धरती में घुल-मिल जाएगी तो मैं सही अर्थों में सर्व मानव के [illegible] हो जाऊंगा।"

नेहरूजी भी ऐसे ही कलाकार थे। इस प्रकार के अनुभव करनेवाले मनीषी इस देश में युग-युग से आते रहे हैं और उस कामना को इस प्रकार की दिव्य अनुभूति

कराते रहे है।

अब जब कि उनका पार्थिव शरीर इस ससार मे नही है, उन्होंने अपने फूलों से देश की सामूहिक चेतना को, देश के कण-कण को, हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक और सौराष्ट्र से लेकर नेफा तक—एक साथ जोड़ दिया। क्या कभी हमारा देश महान् पृथ्वी पुत्र को कभी भूल सकता है ? कदापि नहीं। उनकी वसीयत का एक-एक शब्द युग-युगों तक गूंजता रहेगा और भारतवासियों का पथ प्रदर्शन करता रहेगा।

अक्षरशः पालन

नेहरूजी की वसीयत का अक्षरश पालन किया गया। ७ जून, १९६४ की *ऊषा की वेला मे प्रधानमंत्री भवन मे रखे हुए नेहरूजी के अवशेष अमलतास* के पेड के नीचे से उठाये गये। वह दृश्य-हृदय विदारक था। उस दिन अमलतास ने अस्थि कलशों पर सबसे ज्यादा सुनहरे फूल बिखेरे थे। मानो यह एक जड़ पदार्थ की भी अतिम श्रद्धाजली हो।

जिस समय अमलतास, वृक्ष के नीचे नेहरूजी के दौहित्र राजीव और संजय ने अस्थि कलश उठाकर तोपगाडी पर रखा तो वायुसेना के बैंड ने धीमे स्वर में शोक धुन बजाई। राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, तत्कालीन प्रधानमत्री नन्दाजी तथा अन्य मंत्री भी उस समय वहा उपस्थित थे। महिलाए भक्ति के गीत गा रही थी। पंडित वेदमत्रों का उच्चारण कर रहे थे।

अस्थि कलश को प्रयाग ले जाने के लिए नई दिल्ली के रेल जकशन पर एक स्पेशल गाडी तैयार खड़ी हुई थी। इस ढंग की यह दूसरी स्पेशल गाडी थी। पहली स्पेशल गाडी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की अस्थियो को संगम ले जाने के लिए १६ वर्ष पूर्व तैयार की गई थी, जो इसी स्थान से गई थी। नेहरू स्पेशल मे २० डिब्बे थे जो ३५० लोगों से भरी हुई थी। इसमे २५ व्यक्ति नेहरूजी के परिवार के, २५ नेहरूजी के कर्मचारी, २० मत्री, १०० ससद सदस्य और ६० पत्रकार थे।

हर स्टेशन पर भारी भीड़

हजारों की संख्या मे जनता नई दिल्ली के प्लेटफार्म पर सवेरे ६ बजे से ही जमा थी। जैसे ही गाड़ी चलने को हुई वैसे ही सारी जनता सुबक-सुबककर रो पड़ी। पत्थर के भी हृदय पिघल गए और जड़-चेतन सभी दुःख से दुःखी हो गए। सबने एक कण्ठ से कहा, "चाचा नेहरू अमर रहें," और शीघ्र ही रेलगाड़ी आंखों से

ओझल हो गई। इस प्रकार राजधानी के नागरिकों ने नेहरूजी को अपनी अन्तिम भावभरी श्रद्धांजलि अर्पित की। अब उनको नेहरूजी के दर्शन फिर कभी नहीं होंगे। लेकिन वे तो राजधानी के हर एक नागरिक के हृदय में सदैव रहेंगे।

गाजियाबाद, खुरजा, अलीगढ़, हाथरस, फिरोजाबाद, इटावा, फफूंद के स्टेशनों पर नेहरूजी के पुष्पों के अन्तिम दर्शन के लिए जनता का सागर उमड़ पड़ा। फीरोजाबाद स्टेशन पर जनता के सिर ही सिर नजर आते थे। कानपुर स्टेशन पर जनसंख्या और भी अधिक थी। जनता हर स्टेशन पर अथाह थी। लेकिन जनता की श्रद्धांजलि उससे भी अधिक अथाह थी। जैसे-जैसे अस्थि स्पेशल मैदानों, खलि-हानों, झोपड़ियों, कच्चे मकानों व अशिक्षित-शिक्षित और गरीब किसानों के पास से गुजरती थी, तो यह देखने में आता था कि सभी नर और नारियाँ, बूढ़े, बच्चे और जवान—दोनों हाथ जोड़े, आंखों में आंसू भरे अपनी मूक श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं। सारे दिन भर और रात्रि के अंधेरे में जहां तक नजर जाती थी, लोग-बाग पहले से खड़े दिखाई पड़ते थे।

सैकड़ों बार नेहरूजी ने पहले भी रेलगाड़ी से यात्राएं की थीं। जहां जनता को पता हो जाता था, वहां दिन रात समय और मौसम की परवाह न करते हुए जनता उनके दर्शन को उमड़ पड़ती थी। किन्तु यह उनकी अन्तिम यात्रा थी और जनता, उनके पुष्पों के आखिरी दर्शन के लिए बेताब थी। उनको यह मालूम था कि अब उनके दर्शन जीवन में फिर कभी नहीं हो सकेंगे। फिर कभी नहीं।

त्रिवेणी की वापसी

और ८ जून, १९६४ को प्रातः अस्थि स्पेशल प्रयागराज पहुंची। दूर-दूर से आई हुई जनता लाखों की संख्या में पहले से ही एकत्रित थी। सभी के हृदय शोका-कुल थे। सभी के हृदय श्रद्धा से भरे थे। सभी के हृदयों में दुःख की ज्वाला थी। सभी के कण्ठ भरे हुए थे। सभी की आंखें भरी थीं।

यह एक महामानव की शानदार यात्रा का शानदार अन्त हो रहा था। यह थी त्रिवेणी के पुत्र की त्रिवेणी की वापसी। परम-पावन गंगा, यमुना व सरस्वती की धरोहर, उन्हीं के अर्पण। उन्हीं को पूर्ण समर्पण।

हृदय विदारक

चौकी कस्बाम के पास अस्थि कलश रेलगाड़ी से विधानकर उतार एक विशेष मोटरगाड़ी पर रखा गया जो फूलों से सजाई हुई थी। स्टेशन के बाहर जाती और

थी। सब लोग हाथ बांधे खड़े थे। शांति का वातावरण चारों ओर छाया हुआ था। सारा प्रयाग शोकमग्न था। कहीं से कोई शब्द नहीं सुनाई पड़ता था। सभी का दिल रो रहा था।

यद्यपि दुनिया ने एक महान नेता खो दिया था। लेकिन प्रयाग ने अपना अनन्य पुत्र खो दिया था।

श्रीमती इन्दिरा गांधी की इच्छानुसार अस्थि कलश आनन्द भवन के आंगन में ले जाया गया जहां नेहरू परिवार के व्यक्ति ही मौजूद थे। वहां का दृश्य हृदय-विदारक था। इसी स्थान पर नेहरूजी ने अपना बचपन बिताया था। इसी स्थान पर गांधीजी ने असहयोग आंदोलन की बुनियाद रखी थी। इसी स्थान पर नेहरू जी और उनके परिवार ने विदेशी कपड़ों की होली जलाई थी। क्योंकि उन्होंने ब्रिटिश सरकार द्वारा लगाये गये जुर्माने देने से मना कर दिया था। इस कारण, पुलिस इस स्थान पर बार-बार आती थी और आनन्द भवन से बहुमूल्य वस्तुएं जुर्माने की वसूली के रूप में ले जाती थी।

इन आंदोलनों और संघर्षों के मुख्य नायक जवाहरलाल ही थे। किन्तु अब उनके केवल फूल ही शेष थे। अस्थि कलश गुलमोहर पेड़ की छाया में रखा गया। बच्चे, जिनके लिए स्वराज्य भवन दे दिया गया था, रो रहे थे। पुराने कर्मचारी आंसू बहा रहे थे। आनन्द भवन का तिरंगा झंडा नीचे झुक गया था।

संगम पर

आनन्द भवन से संगम तक लाखों लोगों ने अपने स्वर्गीय नेता के अस्थि कलश के अंतिम दर्शन किए। जनता इतनी नियंत्रित थी कि बच्चों तक को अस्थि कलश के दर्शन अच्छी तरह हुए। किसी दूसरे स्थान पर बच्चों को ऐसा सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था।

गंगा ने अपनी चिर संगिनी यमुना और सरस्वती के साथ, अपने अनन्य पुत्र को अति पवित्रता, सौम्यता व कोमलता से अपने वक्ष में सदैव के लिए छिपा लिया। सूर्य के प्रकाश में निर्मल गंगा जल आलोकित हो रहा था। गंगा की लहरें शांत थीं। कोई कलरव नहीं, कोई कलकल नहीं, कोई कोलाहल नहीं। चारों ओर पूर्ण शांति का वातावरण था। जिस बिंदु पर अस्थि विसर्जन किया गया वहां यमुना की तीव्रधारा और गंगा की सरल धारा एक अनोखे ढंग से मिलीं। दोनों ओर से आती हुई धाराएं, इस प्रकार मिलीं जैसे उन्होंने भारत की सबसे अधिक मूल्यवान निधि को अपने अंक में लेने के लिए, आंचल पसारा हो।

श्रीमती इन्दिरा गांधी अपनी स्वर्गीय माता और दादी की अस्थियां अपने साथ लाई थी। नेहरूजी ने इनको ३८ वर्ष तक रजत मंजूषा में अपने पास रखा था। उन्हें भी नेहरूजी की अस्थियों के साथ विसर्जित कर दिया गया।

उनका अन्त इतना शांतपूर्ण और शोकाकुल नहीं था जितना अनुमान लगाया गया था। हां इस प्रकार की योजना अवश्य थी। लेकिन यह आखिरी रस्म नेहरू जी के योग्य नहीं होती, यदि जनता का इसमें बड़ा हाथ न होता।

नेहरूजी का जीवन आदि से अन्त तक शक्तिपूर्ण था। त्रिवेणी के किनारों पर हजारों लोग जमा थे। उन्होंने अपनी जानकी परवाह न की और जल में कूद गये। पुलिस व अधिकारियों की नावें उनको रोकने के लिए दौड़ी। लेकिन क्या वे गंगा की बाढ़ को रोक सकते थे। उस समय जनता गंगा की बाढ़ की तरह उमड़ती हुई संगम पर पहुंच गई। ऊपर से आकाश गुलाब के फूल चढ़ाकर अन्तिम श्रद्धांजलि दे रहा था। त्रिवेणी में नावों की दौड़ लग रही थी। अस्थि प्रवाहित करते ही सारा वातावरण जनता के इन गगनभेदी नारों से गूंज उठा, "जवाहरलाल नेहरू अमर है।" और यह दृश्य नेहरूजी के जीवन का अन्तिम पृष्ठ बन गया। इतिहास का एक अध्याय समाप्त हो गया।

पति-पत्नी दोनों की अस्थियां एक साथ संगम में अर्पित हो गई। जीवन में वे दोनों एकसाथ बहुत ही कम रहे, किन्तु अब दोनों की आत्मा का एकाकार हो गया। विसर्जन तो सम्पन्न हो गया। लेकिन जनता शांत नहीं रही। वहां नारे लगाती रही "चाचा नेहरू अमर है।" और यही आवाज, दिल्ली से प्रयाग और संगम तक सारे दिन और रात जनता लगाती रही थी। और अब यह आवाज लगाती थी तो लाखों जनता के हृदय में एक अजीब सा सूनापन होता था जिसको शब्दों में अंकित नहीं किया जा सकता। सारी जनता अपने-आपको खोई-सी महसूस करती थी। ऐसा लगता था जैसे उनके अंतर से कोई शक्ति निकल गई हो, कोई चमक खो गई हो, कोई आलोक लीन हो गया हो।

उनकी वसीयत के अनुसार, उनकी भस्मी अनेक नदियों और कई स्थानों पर प्रवाहित कर दी गई। हर स्थान पर लोग लाखों की संख्या पर पहुंचे। उत्तर में श्रीनगर से १२ मील दूर झेलम और सिंध नदी के संगम पर, दक्षिण में कन्याकुमारी में हिन्दमहासागर, अरब सागर और बंगाल की खाड़ी पर, पश्चिम में गोआ की माडवी नदी और अरब सागर के संगम पर और पूर्व में कोहिमा के निकट जुसदुरू नदी पर नेहरूजी की भस्मी का अश्रुपूर्ण विसर्जन हुआ। भारत के करोड़ों लाल जवाहर लाल के फूलों पर श्रद्धा—फूल चढ़ा रहे थे। करोड़ों लाल यह महसूस कर रहे थे

कि "प्रेम जगाने वाली ज्योति उनके बीच से चली गई।"

इस प्रकार नेहरूजी के फूल भारत की नदियों से समुद्रों और समुद्रों से संसार भर के महासागरों तक पहुंच जाएंगे, और वहां के जल से एकाकार हो जाएंगे। वही जल उड़ के मेघों में छिप जाएगा। और बादलों की वर्षा के साथ पानी बन कर सारी धरती पर बरस जाएगा; जहां पर सुन्दर फूल खिलेंगे। नेहरूजी के फूल हर मानव के कान में बहुत धीरे गुनगुनाएंगे और यह कहेंगे—"तुम सब आपस में मिलकर एक हो जाओ और एक-दूसरे को प्यार करो।"

इस प्रकार नेहरूजी की प्रेम और शांति की अमरवाणी विश्व-भर में गुंजायमान होती रहेगी। उनकी अमर ज्योति युग-युगों तक जगमगाती रहेगी।

● ● ●

पूर्ण प्रेम

अगर मेरे बाद कुछ लोग मेरे बारे में सोचें तो मैं चाहूंगा कि वे कहें, "वह एक ऐसा आदमी था जो अपने पूरे दिल व दिमाग से हिन्दुस्तान से और हिन्दुस्तानियों से मोहब्बत करता था और हिन्दुस्तानी भी उसकी खामियों को भुलाकर उससे बेहद, अजहद मुहब्बत करते थे।"

—जवाहरलाल नेहरू

जन जन के जवाहर

"मैं जन समूह का ही एक व्यक्ति रहा हूं, उनके साथ काम करता रहा हूं, कभी उसका नेतृत्व करके उसे आगे बढ़ाता रहा हूं, कभी उससे प्रभावित होता रहा हूं, और फिर भी अन्य दूसरे व्यक्तियों की तरह एक-दूसरे से अलग, जन-समूह के बीच में अपना पृथक् जीवन व्यतीत करता रहा हूं। हमने जो कुछ किया, उसमें बहुत सत्य वस्तु तथा तीव्र निष्ठा रही है, और उसने हमें अपनी क्षुद्र अहंता से ऊंचा उठा दिया। हमें अधिक बल दिया और इतना महत्व दे दिया जो अन्यथा हमें मिल नहीं सकता था। कभी-कभी हमें जीवन की उस पूर्णता को अनुभव करने का सौभाग्य मिला जो आदर्शों को कार्यरूप में परिणत करने से होता है। हमने समझ लिया कि इससे भिन्न कोई भी दूसरा जीवन, जिसमें इन आदर्शों का परित्याग करके, पशुबल के सामने ग्रहण करना होता, व्यर्थ, संतोषहीन तथा अन्तर्वेदना से भरा होता।"

—जवाहरलाल नेहरू (मेरी कहानी)

पण्डित नेहरू में पूर्व और पश्चिम का अद्भुत सम्मिश्रण था। लेकिन उनका यह दृढ़ विचार था कि भारत माता अनेक रूपों में अपने अन्य बालकों की भांति, उनके हृदय में भी विराजमान है। और उनके अन्तर के किसी अनजान कोने में, कोई सौ पीढ़ियों के ब्राह्मणत्व के संस्कार छिपे हुए हैं और वे अपने पिछले संस्कार और नूतन ज्ञान से मुक्त नहीं हो सकते। बल्कि दोनों उनके जीवन के अंग हो गये हैं।

महान् कर्मयोगी

भगवद् गीता के आध्यात्मिक भाग को उन्होंने न तो समझा और न उससे आकर्षित हुए। लेकिन वे उन श्लोकों को पढ़ते थे जिनमें यह समझाया गया है कि

मनुष्य को कैसा होना चाहिए। शांत, स्थिर, गंभीर, अचल, निष्काम भाव से कर्म करने वाला और फल के विषय में अनासक्त। उन्होंने तालमुद की इस उक्ति को पसन्द किया कि "हमें कर्म करने का आदेश है, किन्तु यह हमारे हाथ की बात नहीं कि हम अपने कार्यों को सफल बना सकें।"

गीता का यह श्लोक भी इसी उक्ति का समर्थन करता है "कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।" और यही उनके जीवन का आदि से अन्त तक मूल मन्त्र रहा।

उन्होंने कहा था, "सुदूरवर्ती पर्वत सुगम्य और उस पर चढ़ना सरल मालूम होता है। उसका शिखर आवाहन करता दिखाई देता है, लेकिन ज्यों-ज्यों हम उसके नज़दीक पहुंचते हैं, कठिनाइयां दिखाई देने लगती हैं।

जैसे-जैसे चढ़ते जाते है, चढ़ाई अधिकाधिक मालूम होने लगती है और शिखर बादलों में छिपा दिखाई देने लगता है। फिर भी चढ़ाई के प्रयत्न का एक अनोखा मूल्य रहता है और उसमें एक विचित्र आनन्द और एक विचित्र संतोष मिलता है। जीवन का मूल्य पुरुषार्थ में है, फल में नहीं।"

बचपन और शिक्षा

जवाहरलाल के हृदय पर इन बातों का प्रभाव बचपन से ही पड़ा। बचपन में जवाहरलाल जी को एक बूढ़े मुंशी मुबारक अली कहानियां सुनाया करते थे। वह सन् १८५७ की कहानियां सुनाते थे, जो उनको बहुत पसन्द आती थीं। उनको देश की गुलामी और अंग्रेज़ों के अत्याचार पसन्द न थे और उनके मन में भारत को आज़ाद कराने के विचार उठते रहते थे।

पण्डित मोतीलाल जी ने सन् १६०५ में अपने पुत्र को इंग्लैंड में हैरो विद्यालय में दाखिल करा दिया। सन् १६०७ में वे इंग्लैंड के ट्रिनिटी कालेज में दाखिल हो गये। उस समय भारत के बड़े-बड़े नेता इंग्लैंड आते थे। और भारत की बुरी दशा का वर्णन करते थे और देश सेवा की प्रेरणा देते थे। उन दिनों भारत के वाइसराय लार्ड कर्जन ने बंगाल के दो टुकड़े कर दिये। इससे जनता में बड़ा क्रोध और क्षोभ था। जवाहरलाल जी को भी इस समाचार से बड़ा क्रोध आया। उन्हीं दिनों पण्डित मोतीलाल जी का एक लेख अखबारों में प्रकाशित हुआ जिसमें [illegible] की प्रशंसा की गई थी। जवाहरलाल ने जब यह लेख पढ़ा तो उन्हें अपने [illegible] बहुत गुस्सा आया। उन्हें यह आशा न थी कि वे अंग्रेजी सरकार के पक्ष, [illegible] प्रकार के खुशामद भरे लेख लिखेंगे। उन्होंने तुरन्त अपने पिता को एक पत्र

लिखा जिसमें यह लिखा कि 'अंग्रेज सरकार को आपके इस लेख से बहुत प्रसन्नता होगी।'

पण्डित मोतीलाल जी ने जवाहरलाल की उद्दण्डता को न जाने क्या समझकर सहन कर लिया।

कैंब्रिज की शिक्षा पूर्ण करने के बाद जवाहरलाल ने कानून पढ़ना शुरू कर दिया। दो वर्ष में उन्हें कानून की डिग्री मिल गई। उन्हें साम्यवाद के इस सिद्धांत में रुचि थी कि "सब आदमी बराबर हैं और सबको रोजगार के बराबर अवसर मिलने चाहिए। गरीब, अमीर, छोटे, बड़े का भेदभाव मिट जाना चाहिए।" इन विचारों का जवाहरलाल जी पर बहुत गहरा असर हुआ।

पहली बार जेल में

सन् १९१२ में जवाहरलाल नेहरू इंग्लैंड से बैरिस्टरी पास करके भारत लौट आये। लेकिन वकालत में उनका मन नहीं लगा। उनका मन तो भारत माता की परतन्त्रता की बेड़ी से छुड़ाने के लिए सचेष्ट कर चुका था। सन् १९१६ की वसन्त पंचमी को दिल्ली में कमला कौल के साथ उनका विवाह सम्पन्न हुआ। इधर गांधी जी के दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का उनके मन पर गहरा प्रभाव हुआ। वे मन-ही-मन गांधी जी के भक्त बन गये। उन्होंने आनन्द भवन का आनन्द छोड़ दिया। वे किसानों में घुलने-मिलने लगे और जनता को जागृत करने लगे। अपना परिवार और अपनी पत्नी सबको वे करीब-करीब भूल गये।

रौलट एक्ट के विरोध में देशव्यापी सत्याग्रह शुरू हुआ। १३ अप्रैल, १९१९ को जलियांवाले बाग की सभा पर, लोगों को घेर कर अंग्रेजी सरकार ने गोली चलाई और सैकड़ों आदमियों को मार गिराया। सैकड़ों माताएं अनाथ हो गई। सैकड़ों पत्नियां विधवा हो गई। सैकड़ों बहनें असहाय हो गईं। इस घटना से देश-भर में बड़ी हलचल मची। सन् १८५७ के विद्रोह के बाद, इस घटना ने पहली बार सारे भारत को झकझोर दिया।

देश में असहयोग आन्दोलन शुरू किया गया। गांधी जी की पुकार पर जवाहरलाल जी भी दिलोजान से आन्दोलन में जुट पड़े। उनके शब्दों में "हम लोगों दूर देहातों में चले जाते, दूर-दूर के गांवों में पहुंचते थे और किसानों की सभाओं में भाषण देते थे। मैं रोम-रोम में जनता की सामूहिक भावना का और जनता को प्रभावित करने की शक्ति का अनुभव करता था। मैं हमेशा विश्वास के साथ ऐसी भीड़ में घुस जाता। उन्होंने मेरे प्रति सद्व्यवहार और कृतज्ञता

का परिचय दिया। भले ही मेरी बात उनके गले न उतरी हो।"

६ दिसम्बर, १९२१ को सरकार ने पण्डित मोतीलाल नेहरू और उनके पुत्र जवाहरलाल दोनों को गिरफ्तार कर लिया और ६ महीने की सजा हुई।

नेहरू जी की यह पहली जेल यात्रा थी। सारे देश में राजनीतिक गतिविधियों के सिलसिले में ३० हजार लोग गिरफ्तार किये गये।

जेल में जाने से जवाहरलाल जी को कोई दुःख नहीं हुआ और न वहां की मुसीबतों से वे परेशान हुए। उन्हें तो बड़ी प्रसन्नता थी और इसमें उन्होंने गौरव अनुभव किया। जवाहरलाल जी तीन महीने जेल में रहे।

उधर गांधी जी ने अहमदाबाद में असहयोग आन्दोलन आरम्भ कर दिया। जवाहरलाल जी को भी गिरफ्तार कर लिया गया। फरवरी, १९२२ में चौरी-चौरा काण्ड के बाद गांधी जी ने सत्याग्रह संग्राम बंद कर दिया। जवाहरलाल जी को इस निश्चय से धक्का पहुंचा। फिर भी वे गांधी जी के इस निर्णय के प्रति वफादार रहे।

सन् १९२३ में, वे इलाहाबाद नगरपालिका के अध्यक्ष चुने गये। यहां पर दो वर्षों तक उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये। इसी बीच वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के मंत्री भी चुने गए। सन् १९२७ में वे दोबारा मन्त्री चुन लिये गये। जवाहरलाल जी के शब्दों में "अपनी इच्छाओं के विरुद्ध धीरे-धीरे मैं कांग्रेस का लगभग स्थायी मन्त्री बनता जा रहा था।"

साईमन कमीशन

राजनैतिक दृष्टि से भारत में सन् १९२८ का वर्ष महत्वपूर्ण था। देश भर में हल-चल मची हुई थी। जवाहरलाल जी को ऐसा मालूम होता था कि एक नई ताकत, एक नई हिम्मत और आगे [illegible] जनता में [illegible] की [illegible] का [illegible] रही है। [illegible] में नई शक्ति का संचार हो रहा था। मजदूरों में, किसानों में और मध्यम वर्ग के नौजवानों में विशेष उत्साह था। हर जगह युवक संघ स्थापित हो रहे थे और युवक सम्मेलन किये जा रहे थे।

इसी समय साइमन कमीशन भारत की स्थिति की जांच करने आया। इसमें अंग्रेज थे। इसमें किसी भारतीय को शामिल नहीं किया था। जहां-जहां कमीशन गया, वहां-वहां [illegible] (साइमन गो बैक) [illegible] इस प्रकार देश-भर में [illegible] बहिष्कार किया गया। [illegible]
[illegible]
[illegible]

वहशियाने ढंग से लाला लाजपतराय जी पर हमला किया और उनकी छाती पर जोर से डंडे बरसाये। इस भीषण चोट के कारण, उनकी मृत्यु हो गई। अपने प्राण छोड़ते समय उन्होंने कहा —

"मेरे ऊपर एक-एक डंडे की चोट, ब्रिटिश सरकार के कफन को ठोकने के लिए एक-एक कील का काम करेगी।" यह असरशः सत्य ही निकला। भारत के करोड़ों लोगों के हृदय में नव चेतना जाग उठी।

लखनऊ में जवाहरलाल जी के नेतृत्व में एक विशाल प्रदर्शन किया गया। पहले दिन ही जवाहरलाल जी व स्वयं सेवक दलों पर लाठी की वर्षा की गई। वे सब जवान थे। इस कारण पुलिस के लाठी प्रहारों को सहन कर गये। सबको गहरी चोट आई। लेकिन उन्होंने परवाह न की। अगले दिन साइमन कमीशन लखनऊ आने वाला था। कांग्रेस आफिस से चार-चार की कतार में स्टेशन के लिए बड़ा जुलूस रवाना हुआ। जिसमें कई हजार आदमी थे। इसका नेतृत्व कर रहे थे, हमारे वीर जवाहर।

नेहरू जी के शब्दों में, "हम वहाँ डटे रहे और चूँकि हम हटते हुए नहीं दिखाई दिये, इसलिए उन्हें उसी दम घोड़ों का सहारा लेना पड़ा। घोड़े पिछले पैरों पर खड़े रहे, उनके अगले पैर हमारे सिरों पर लटकते हुए हिल रहे थे। और फिर हम पर पैदल और घुड़सवार पुलिस दोनों की लाठियाँ पड़ने लगीं। वह बहुत भयंकर मार थी और पिछले दिनों जो मेरे दिमाग की विचार शक्ति कायम रही थी, वह जाती रही। मुझे सिर्फ इतना ही ध्यान रहा कि मुझे अपनी जगह पर ही खड़ा रहना चाहिए और गिरना या पीछे हटना नहीं चाहिए।—कई साथियों को बुरी तरह चोट आई थी। गोविन्द वल्लभ पन्त पर, जो मेरे पास खड़े थे ज्यादा मार पड़ी क्योंकि वे छः फुट से भी ज्यादा ऊँचे थे। ज्यादातर अपनी मारपीट तो यूरोपियन सार्जेंटों ने की, हिन्दुस्तानी सिपाही तो हल्के-हल्के ही काम चला रहे थे।"

कांग्रेस के सभापति

लाहौर कांग्रेस के अधिवेशन से पहले, कांग्रेस और सरकार के बीच में समझौते का कोई आधार ढूँढने की कोशिशें की गई। गाँधी जी वायसराय लार्ड इरविन से मिले, किन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला। अब कांग्रेस को अपना अगला कदम बढ़ाना था। रावी के किनारे स्व० लाला लाजपतराय जी की स्मृति में लाजपतनगर बसाया गया और जवाहरलाल जी उसके सभापति चुने गये।

४४ घोड़ों का रथ बनाया गया और जवाहरलाल जी का शानदार जुलूस निकाला गया। उस अधिवेशन का जवाहरलाल जी पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनके शब्दों में, "लाहौर के लोगों ने भारी तादाद में तथा दिल से मेरा जैसा शानदार स्वागत किया, उसे मैं कभी नहीं भूल सकता। मैं अच्छी तरह जानता था कि यह अपार उत्साह मेरे लिए व्यक्तिगत नहीं था, बल्कि एक प्रतीक के लिए, एक आदर्श के लिए था। मगर किसी आदमी के लिए यह भी कोई कम बात नहीं है कि वह, थोड़े समय के लिए ही सही, बहुत लोगों की आंखों में और दिलों में वैसा प्रतीक बन जाए। मेरे आनन्द का पार न था और मैं अपने व्यक्तित्व की मर्यादा को पार कर रहा था। मगर मुझपर क्या असर हुआ, इसका कोई महत्त्व नहीं है क्योंकि वहां तो बड़े-बड़े सवाल सामने थे। सारा वातावरण जोश से भरा हुआ था और अवसर की गम्भीरता का सवाल सब ओर छाया हुआ था।—हमें ऐसी लड़ाई को न्योता देना था। जिससे सारा देश हिल जाने वाला था और जिसका असर लाखों की जिंदगी पर पड़ने वाला था।" इस अधिवेशन में एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुआ और वह था पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति। यह विशेष प्रस्ताव ३१ दिसम्बर, १६२६ की आधी रात के घण्टे की चोट के साथ इनक्लाब जिन्दाबाद के गगन भेदी नारों के बीच स्वीकार किया गया। पिछला वर्ष गुजर रहा था और नया वर्ष इस समय आ रहा था। अंधेरा जा रहा था और प्रकाश आ रहा था।

इस अधिवेशन में देश-भर के सारे नेताओं ने भाग लिया। हजारों की संख्या में जनता ने भाग लिया। सबके हृदय में जोश था। सबके हृदय में देश प्रेम की लगन थी। जवाहरलाल जी के भाषण के एक-एक शब्द से देश प्रेम टपकता था। उनके एक-एक शब्दों में प्रेरणा भरी थी। उनका एक-एक शब्द उत्साह से भरा था। जनता जवाहर के पीछे दीवानी हो चली थी। भारत के इतिहास का नया अध्याय आरम्भ हो चला था।

उसी वर्ष कुंभ हुआ और इलाहाबाद में संगम पर स्नान करने लाखों नर-नारी आये। उनमें बहुत से लोग ऐसे भी थे जिनका झुकाव राजनीति की ओर था। सारे दिन आनन्द भवन राजनैतिक नारों से गूंजता था। सबको जवाहरलाल के दर्शनों की इच्छा होती थी। बहुत से भविष्य के कार्यक्रम के बारे में पूछते थे। लेकिन ज्यादातर गरीब लोग होते थे जिनकी चमकती आंखों में पीढ़ियों की गरीबी और मुसीबतें झलकती थीं। वे जवाहरलाल जी के ऊपर अपनी श्रद्धा और प्रेम बरसाते और उसके बदले में सहानुभूति और हमदर्दी के अतिरिक्त और कुछ नहीं मांगते। जवाहरलाल जी के हृदय पर इसका बड़ा प्रभाव होता। प्रेम और श्रद्धा के इस

सरोवर में वे स्नान करते और सबको अपनी ओर मोहित कर लेते थे।

नमक कानून भंग

२६ जनवरी, १९३० को स्वतन्त्रता दिवस घोषित किया गया था। उस दिन सारे देश में बड़ी सभाएं हुईं जिनमें शान्ति की प्रतिज्ञा ली गई। जवाहरलाल जी के नेतृत्व में सारे देश ने एक बड़ा कदम उठाया। सारा देश जाग उठा। देश के युवक बलिदान के लिए तत्पर थे। उनके हृदय में आजादी की लौ लगी हुई थी।

३१ जनवरी को गांधी जी ने सरकार के सामने ११ सूत्री कार्यक्रम रखा। इनमें और बातों के साथ, नमक पर टैक्स हटाने की बात थी। नमक कानून को तोड़ने का निश्चय किया गया। नमक अचानक एक रहस्यपूर्ण चमत्कारी शब्द बन गया।

१२ मार्च १९३० को गांधी जी का इतिहास-प्रसिद्ध दांडी मार्च आरम्भ हुआ। जवाहरलाल जी ने भी स्वयं समुद्र किनारे तक की पैदल यात्रा की। उन्होंने भी नमक बनाया और नमक कानून तोड़ा। उस समय ऐसा लगता था जैसे कोई बटन दबा दिया गया और अचानक सारे देश में शहरों में गांवों में जिधर देखो नमक बनाने की धूम मची हुई थी।

जवाहरलाल जी स्वयं नेताओं को आवश्यक ट्रेनिंग देते रहे और उनकी पत्नी कमला नेहरू और बहिन कृष्णा भी उसमें शामिल हो गईं और इस काम के लिए उन्होंने मर्दाना लिबास धारण किया।

जवाहर लाल जी १४ अप्रैल, १९३० को फिर बन्दी बना लिए गये। देश-भर में नेताओं की गिरफ्तारी की गई। अंग्रेजी सरकार ने अत्याचार पर अत्याचार किये। किन्तु भारतीय नौजवानों ने उनका सब कुछ सहन किया। पुरुष गोली खाते थे, पर कानून तोड़ते थे। बच्चे कोड़े खाते थे, पर कानून तोड़ते थे। सारे देशवासियों में नई चेतना आ गई। नमक कानून तोड़ने के साथ-साथ विदेशी कपड़ों की दुकानों पर धरने होने लगे और शराब की दुकानों पर पिकेटिंग शुरू हो गया।

इस आन्दोलन का प्रभाव देश की महिलाओं पर बहुत अधिक पड़ा। उन्होंने इस आन्दोलन में महत्वपूर्ण भाग लिया। आन्दोलन ने एक विकराल रूप धारण कर लिया जिसकी अंग्रेज लोग, कल्पना भी नहीं कर सकते थे। जेलें बन्दियों से ठसाठस भर गईं।

स्वदेशी आंदोलन

जवाहरलाल जी ११ अक्तूबर, १९३० को जेल से छोड़ दिये गये। उस समय

४४ घोड़ों का रथ बनाया गया और जवाहरलाल जी का शानदार जुलूस निकाला गया। उस अधिवेशन का जवाहरलाल जी पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनके शब्दों में, "लाहौर के लोगों ने भारी तादाद में तथा दिल से मेरा जैसा शानदार स्वागत किया, उसे मैं कभी नहीं भूल सकता। मैं अच्छी तरह जानता था कि यह अपार उत्साह मेरे लिए व्यक्तिगत नहीं था, बल्कि एक प्रतीक के लिए, एक आदर्श के लिए था। मगर किसी आदमी के लिए यह भी कोई कम बात नहीं है कि वह, थोड़े समय के लिए ही सही, बहुत लोगों की आंखों में और दिलों में वैसा प्रतीक बन जाए। मेरे आनन्द का पार न था और मैं अपने व्यक्तित्व की मर्यादा को पार कर रहा था। मगर मुझपर क्या असर हुआ, इसका कोई महत्त्व नहीं है क्योंकि वहां तो बड़े-बड़े सवाल सामने थे। सारा वातावरण जोश से भरा हुआ था और अवसर की गम्भीरता का सवाल सब ओर छाया हुआ था।—हमें ऐसी लड़ाई को न्योता देना था। जिससे सारा देश हिल जाने वाला था और जिसका असर लाखों की जिंदगी पर पड़ने वाला था।" इस अधिवेशन में एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुआ और वह था पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति। यह विशेष प्रस्ताव ३१ दिसम्बर, १९२९ की आधी रात के घण्टे की चोट के साथ इनकलाब जिन्दाबाद के गगन भेदी नारों के बीच स्वीकार किया गया। पिछला वर्ष गुजर रहा था और नया वर्ष इस समय आ रहा था। अंधेरा जा रहा था और प्रकाश आ रहा था।

इस अधिवेशन में देश-भर के सारे नेताओं ने भाग लिया। हजारों की संख्या में जनता ने भाग लिया। सबके हृदय में जोश था। सबके हृदय में देश प्रेम की लगन थी। जवाहरलाल जी के भाषण के एक-एक शब्द से देश प्रेम टपकता था। उनके एक-एक शब्दों में प्रेरणा भरी थी। उनका एक-एक शब्द उत्साह से भरा था। जनता जवाहर के पीछे दीवानी हो चली थी। भारत के इतिहास का नया अध्याय आरम्भ हो चला था।

उसी वर्ष कुंभ हुआ और इलाहाबाद में संगम पर स्नान करने लाखों नर-नारी आये। उनमें बहुत से लोग ऐसे भी थे जिनका झुकाव राजनीति की ओर था। सारे दिन आनन्द भवन राजनैतिक नारों से गूंजता था। सबको जवाहरलाल के दर्शनों की इच्छा होती थी। बहुत से भविष्य के कार्यक्रम के बारे में पूछते थे। लेकिन ज्यादातर गरीब लोग होते थे जिनकी चमकती आँखों में पीढ़ियों की गरीबी और मुसीबतें झलकती थीं। वे जवाहरलाल जी के ऊपर अपनी श्रद्धा और प्रेम बरसाते और उसके बदले में सहानुभूति और हमदर्दी के अतिरिक्त और कुछ नहीं मांगते। जवाहरलाल जी के हृदय पर इसका बड़ा प्रभाव होता। प्रेम और श्रद्धा के इन

सरदार वल्लभभाई पटेल ने 'करबंदी आंदोलन शुरू कर दिया था। आंदोलन की रफ्तार को तेज करने के लिये यह आवश्यक था कि किसान सम्मेलन आयोजित किये जाएं, जमींदारों और किसानों को करबंदी आन्दोलन में अपना योग दान देने के लिए आह्वान किया जाये। जवाहरलाल जी की अपील का जमींदारों और किसानों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। वे मजबूत रहे। किन्तु कुछ ऐसे जमींदार थे, जिन्हें राष्ट्रीय संग्राम से सहानुभूति न थी, अपना कर दे दिया। १६ अक्तूबर को इलाहाबाद के विशाल किसान सम्मेलन में जवाहरलाल जी ने किसानों से इस आन्दोलन में आगे आने के लिए कहा। किसानों के जोश का क्या ठिकाना था? उन्होंने जवाहरलाल जी के नेतृत्व में आन्दोलन में भाग लेने की प्रतिज्ञा की। किन्तु उसी दिन जैसे ही जवाहरलाल जी भाषण के बाद आनन्द भवन लौटे, उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। इसका नतीजा यह हुआ कि आन्दोलन तेजी के साथ सारे उत्तरप्रदेश में फैल गया। इस आन्दोलन से एक विशेष लाभ हुआ, और वह यह था कि आन्दोलन शहरों से हटकर गांवों में चला गया और उसकी बुनियाद व्यापक और मजबूत हो गई। इससे आन्दोलन में नव जीवन आ गया।

१ जनवरी १९३१ को कमला जी भी गिरफ्तार कर ली गईं। जवाहरलाल जी को जब यह खबर जेल में मिली, तो उन्हें प्रसन्नता हुई क्योंकि उन्हें यह मालूम था कि कमला जी भी उनकी दोनों बहनों की तरह जेल जाने को उत्सुक थीं। कमला जी ने गिरफ्तार होते समय एक पत्रकार को यह संदेश दिया, "आज मुझे बहुत खुशी है और इस बात का गर्व है कि मैं अपने पति के पद चिह्नों पर चल रही हूं। मुझे आशा है कि आप इस ऊंचे झण्डे को नीचे न झुकने देंगे।"

१२ जनवरी १९३१ को जवाहरलाल जी के पिता पं० मोतीलाल जी उनसे नैनी जेल में मिलने आए। जवाहरलाल जी ने देखा कि उनकी हालत चिन्ताजनक है और चेहरे पर सूजन आ गई है।

पंडित मोतीलाल नेहरू का स्वर्गवास

२६ जनवरी को महात्मा गांधी यरवदा जेल से छोड़ दिये गये और इसी दिन जवाहरलाल जी को रिहा कर दिये गए। मोतीलाल जी की हालत दिन-पर-दिन चिन्ताजनक होती गई और ६ फरवरी को वे सदा के लिए इस संसार से चले गये। उनके शव को लखनऊ से मोटरकार द्वारा इलाहाबाद ले जाया गया। वहां पर लोगों की बड़ी भारी भीड़ उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए एकत्रित हो गई। गांधी जी भी इस समय से जवाहरलाल जी और उनकी माता जी

गया कि अंग्रेजी सरकार ने कांग्रेस को समाप्त करने का निश्चय कर लिया है। कांग्रेस के पास दूसरा कोई चारा न था। आन्दोलन फिर से चालू कर दिया गया। ४ जनवरी, १९३२ को गांधी जी और श्री वल्लभभाई पटेल गिरफ्तार कर लिये गये। सरकार ने कांग्रेस को अवैध घोषित कर दिया। चार नये आर्डनेंस जारी किये गये। पुलिस अधिकारियों को अधिकार दे दिये गये। नागरिक स्वतन्त्रता समाप्त कर दी गई। 'उन दिन देश-भर में बहुत-सी घटनाएं हुईं। स्थान-स्थान पर जनता और पुलिस में मुठ-भेड़ हुई। जनता पर बड़े-बड़े अत्याचार किये गये। सैकड़ों नर-नारियों ने अपने प्राण न्योछावर कर दिये। हजारों की संख्या में लोग घायल हो गये। सारी जेलें बन्दियों से भर गईं। और सरकार को अस्थायी जेलें बनानी पड़ीं।'

३० अगस्त, १९३३ को जवाहरलाल जी नैनी जेल से रिहा कर दिये गये। उस समय राजनैतिक दृष्टि से देश शान्त था। लेकिन उस समय की देश की खामोशी महत्वपूर्ण थी। जवाहरलाल जी ने एक लेखमाला —'व्हिदर इंडिया'— लिखी जो सभी समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुई। इस लेख माला में उन्होंने दुनिया की घटनाओं और देश की परिस्थिति के साथ उसका सम्बन्ध बतलाया। अब तक भारतवासी केवल घरेलू मामलों पर ही सोचते थे। दुनिया के दूसरे देशों में क्या हो रहा है, इस पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। इन लेखों का जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा। और उनका बड़ा स्वागत किया गया।

भूकम्प में कार्य

१५, जनवरी, १९३४ को अचानक भीषण भूकम्प आया। जवाहरलाल जी उस समय किसानों से बातचीत कर रहे थे और वे इसी तरह बात करते रहे। बाद में उन्हें पता लगा कि इलाहाबाद में जान माल का बहुत नुकसान हुआ है और बिहार और दूसरे स्थानों में [illegible] कितना भयंकर सिद्ध हुआ है?

उन्हीं दिन जवाहरलाल जी कलकत्ता गए और [illegible] से रवीन्द्रनाथ ठाकुर से भेंट की। और कलकत्ता से पटना गए और बाद में मुजफ्फरपुर गये। मुजफ्फरपुर में भूकम्प से हजारों आदमी मारे गये थे। अंग्रेजी सरकार ने सहायता करने का कोई प्रबन्ध नहीं किया। [illegible] दिन मुर्दे पड़े थे। जवाहरलाल जी ने देखा कि [illegible] के नीचे पड़ी थी, [illegible] हुई [illegible] थी। [illegible]
[illegible]

भीत हो गए थे कि उनसे कुछ कहते नहीं बनता था। उन्होंने इलाहाबाद लौटते ही धन और सामान इकट्ठा करने का काम शुरू कर दिया। उसके बाद उन्होंने डा० राजेन्द्र प्रसाद जी के साथ, बिहार के हर पीड़ित शहर और गांव का दौरा किया, उन्होंने मकानों से दबी लाशें निकलवाईं। लोगों के भोजन, कपड़ा आदि का प्रबंध किया। उत्तर बिहार पर, जिसको बिहार का बाग कहा जाता था, उजड़ेपन और विनाश की गहरी छाप लगी हुई थी। यह इलाका इतना बरबाद हो गया था कि उसकी युद्ध क्षेत्र से तुलना की जा सकती थी। मुंगेर शहर की विनाशपूर्ण हालत को देखकर जवाहरलाल जी का सिर चकराने लगा और उन्हें कंपकपी आने लगी। ऐसे दुःखद समय में बाहर से आए हुए नवयुवक व नवयुवतियों के सेवाकार्य को देखकर जवाहरलाल जी स्वयं चकित हो गए। ११ फरवरी को कड़ी मेहनत से थके मांदे, वे इलाहाबाद पहुंचे। कलकत्ते से अगले दिन वारंट आया और वे फिर गिरफ्तार कर लिये गये। उन दिनों कमला नेहरू का स्वास्थ्य बहुत गिरता जा रहा था। जवाहरलालजी को जेल में दो ही चिन्ताएं थीं—कमला नेहरू की बीमारी और राजनैतिक संघर्ष।

कमलाजी का स्वर्गवास

कमलाजी की हालत दिन-पर-दिन चिन्ताजनक होती जा रही थी। इसलिए सितम्बर, १९३४ में ११ दिन के लिए जवाहरलाल जी को छोड़ दिया गया। कई व्यक्तियों द्वारा यह कहलवाया गया कि अगर वे अपनी जेल की मियाद के बाकी दिनों में राजनीति में भाग न लेने का आश्वासन—चाहे वह लिखित भले ही न हो—दे दें तो उनको कमलाजी की तिमारदारी के लिए छोड़ दिया जाएगा। कमलाजी को इस बात का पता लगा। उन्होंने जवाहरलाल जी को नीचे झुकने का इशारा किया और उनके कान में कहा, "सरकार को आश्वासन देने की यह क्या बात है? ऐसा हरगिज मत करना।" यह था कमलाजी का देश प्रेम, यह थी उनकी देश सेवा। जवाहरलाल जी को स्वयं अपनी पत्नी के उत्तर से बड़ी प्रसन्नता हुई।

कमलाजी की हालत बिगड़ती चली गई। अप्रैल, १९३५ को उन्हें इलाज करवाने के लिए यूरोप भेज दिया गया। ४ सितम्बर, १९३५ को जवाहरलाल जी को अचानक अल्मोड़ा जेल से छोड़ दिया गया। वे तुरन्त स्विट्ज़रलैंड चले गए। कमलाजी की जान बचाने का बहुत प्रयत्न किया गया। लेकिन उनकी दशा बिगड़ती चली गई।

जवाहरलाल जी के वैवाहिक जीवन के यह बीस वर्ष कितने अजीब थे। इनमें

किसने लिखा है। १९३८ के हरिपुरा के कांग्रेस अधिवेशन के लिए नेता श्री सुभा[ष]
चन्द्र बोस सभापति चुने गये। जवाहरलाल जी यूरोप की यात्रा को चले गये। यूरो[प]
में युद्ध के बादल मंडरा रहे थे। बार्सेलोना में उन्होंने रात में आकाश से बमबा[री]
होते देखी। किन्तु फिर भी जनता के हृदय में साहस और दृढ़ता की भावना थी।
वहां से वे इंग्लैंड, चैकोस्लोवाकिया, जेनेवा, पेरिस और मिस्र गये।

जब वे यूरोप से लौटकर वापिस भारत आये, तो उन्होंने देखा कि साम्प्रदायि[क]
द्वेष और तनाव बढ़ गया है और मुस्लिम लीग श्री जिन्ना के नेतृत्व में प्रजातन्[त्र के]
खिलाफ ही नहीं खड़ी हो गई बल्कि देश के टुकड़े करने तक की हामी हो गई है।
ब्रिटिश सरकार ने मुस्लिम लीग की पीठ ठोकी और श्री जिन्ना के दो राष्ट्र [के]
सिद्धान्त का समर्थन किया।

वह धर्म जिससे आशा की गई थी कि आध्यात्मिकता और भाई चारे [का]
प्रचार करेगा, अब घृणा, संकीर्णता और कमीनेपन का स्रोत बन गया।

अहिंसा की नीति

सन् १९३९ के त्रिपुरी अधिवेशन में नेता जी सुभाषचन्द्र बोस फिर सभापति
चुन लिये गये। इससे और उलझनें पैदा हो गई। बाद में उन्होंने कांग्रेस से त्याग[पत्र]
दे दिया और फारवर्ड ब्लाक (अग्रगामी दल) बनाया जो कांग्रेस का [illegible]
बन गया। किन्तु कुछ समय बाद इस दल की ताकत कम हो गई। मगर इससे [illegible]
की राजनीति को धक्का पहुंचा।

जवाहरलाल जी कांग्रेस कार्य समिति से अलग हो गये। इस बीच वे दो [illegible]
महत्वपूर्ण हलचलों में लग गये। एक थी अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परि[षद]
की अध्यक्षता जिसका उद्देश्य था ५५० छोटी-बड़ी रियासतों को समाप्त करना [illegible]
और दूसरी थी राष्ट्रीय निर्माण समिति (नेशनल प्लानिंग कमीशन) की अध्यक्ष[ता]
यह दोनों महत्वपूर्ण कार्य थे जिनके बाद में महान परिणाम निकले और देश [illegible]
[illegible] लाभ हुआ।

अगस्त सन् १९३९ में यूरोप में लड़ाई छिड़ गई। सितम्बर, १९३९ में कांग्रेस [illegible]
कार्य समिति ने ब्रिटिश सरकार से मांग की कि वह अपने युद्ध उद्देश्य, [illegible]
भारत के [illegible] [illegible] के बारे में, स्पष्ट बतलायें। किन्तु ब्रि[टिश]
सरकार अपना उद्देश्य स्पष्ट करने और [illegible] के प्रतिनिधियों से [illegible]
[illegible] को तैयार नहीं थी।

युद्ध की परिस्थितियां उलझती गईं। गांधी जी चाहते थे कि कांग्रेस अहिंसा [illegible]

के सिद्धान्त को अनिवार्य कर दे। किन्तु कांग्रेस इसको नीति के तौर पर मानने को तैयार थी। सिद्धान्त के तौर पर नहीं। इस पर गांधी जी कांग्रेस से आंशिक रूप से हट गये। और इस प्रकार राष्ट्रीय आन्दोलन का एक काल समाप्त हो गया।

कांग्रेस ने श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य के कहने पर ब्रिटेन के सामने एक प्रस्ताव रखा। प्रस्ताव यह था कि "ब्रिटेन भारत की स्वतन्त्रता स्वीकार करे, केन्द्र में तुरन्त अस्थायी राष्ट्रीय सरकार बना दे, जो मौजूदा केन्द्रीय धारासभा को जिम्मेदार हो। अगर यह हो जाय तो रक्षा का भार यह नई सरकार ले ले और इस प्रकार युद्ध प्रयत्नों में सहायता करें। लेकिन जवाहरलाल जी के शब्दों में "साम्राज्यवाद तो उल्टी ही दिशा में सोचता है।" ८ अगस्त, १९४० को वाइसराय ने ब्रिटिश सरकार की उत्तर दे दिया जो साम्राज्यवाद की पुरानी भाषा में था और उसका विषय बिलकुल नहीं बदला था।

जवाहरलाल जी के साथी सब फिर जेल में बन्द कर लिये गये। **'शायद युद्ध राजनीति, फासिज्म और साम्राज्यवाद की इस पागल दुनिया की अपेक्षा जेल के एकांत में जीवन की अखण्डता की भावना उत्पन्न कर लेना अधिक आसान था।'**

बम्बई के अधिवेशन में कांग्रेस ने अहिंसा की नीति में विश्वास प्रकट करते हुए, जनता को ब्रिटिश सरकार के युद्ध प्रयत्नों से अलग रहने का आदेश दिया। व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरू किया गया और आचार्य विनोबा भावे इसके सबसे पहले सत्याग्रही बने। ३१ अक्तूबर, १९४० को जवाहरलाल जी जब वर्धा से वापिस आ रहे थे, तो उनको रास्ते में ही पकड़ लिया गया और गोरखपुर जेल में बन्दी बना दिया गया। ४ दिसम्बर १९४१ को सब सत्याग्रही छोड़ दिये गये। उसके तीन दिन बाद पर्ल हार्बर का पतन हुआ। युद्ध की स्थिति बड़ी गम्भीर हो गई। पूर्वी एशिया में जापान बराबर आगे बढ़ता जा रहा था। उस समय अमरीका भी युद्ध में सक्रिय रूप से आगे आ गया। ११ मार्च सन् १९४२ को इंग्लैंड के तत्कालीन प्रधान मंत्री विंस्टन चर्चिल ने क्रिप्स मिशन को भारत में भेजने की घोषणा की।

भारत छोड़ो

जवाहरलाल जी ने सर स्टेफोर्ड क्रिप्स के साथ वार्ता में महत्त्वपूर्ण भाग लिया। क्रिप्स योजना में असली अधिकार वाइसराय को ही दिये गये थे। इस कारण कांग्रेस ने क्रिप्स योजना को ठुकरा दिया। ठीक इसी समय जापान ने बर्मा पर अधिकार जमा लिया था और भारत पर किसी समय भी जापानी हमले का डर था। जवाहरलाल जी ने यह घोषणा की कि देश जापान के सामने आत्म-समर्पण

नहीं करेगा क्योंकि फिर भारत को दूसरे देश की दासता में रहना पड़ेगा। और आजादी की समस्या ज्यों की त्यों बनी रहेगी।

गांधी जी के नेतृत्व में 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' का नारा बुलंद किया गया। ९ अगस्त, १९४२ को आन्दोलन का प्रस्ताव पास हुआ जिसमें यह कहा गया कि 'हम अंग्रेजी सरकार नहीं चाहते, हम विदेशी सरकार का अत्याचार सहन नहीं करेंगे और उसे हटाकर ही रहेंगे।' जवाहरलाल जी के जोशीले भाषण ने जनता में उत्साह भर दिया। १० अगस्त १९४२ को बम्बई में गांधी जी, जवाहरलाल, सरदार पटेल, डा० राजेन्द्र प्रसाद और कांग्रेस के सारे नेता पकड़ लिये गये। इससे सारे देश में हलचल मच गई। 'देश-भर में सत्याग्रह शुरू हो गया। स्थान-स्थान पर सभाएं हुईं, जुलूस निकाले गये। ब्रिटिश सरकार ने गोली और लाठियां चलाईं। पुलिस और फौजी अधिकारियों ने प्रहार पर प्रहार किए, अत्याचार पर अत्याचार किये। हजारों पुरुष और स्त्रियों ने अपने प्राण निछावर कर दिये। हजारों आजादी के दीवाने फांसी के तख्ते पर झूल गये। किन्तु फिर भी जनता का उत्साह और जोश बना रहा। उनकी शक्ति बनी रही, उनके त्याग और बलिदान की भावना बनी रही।' सन् १९४५ में महायुद्ध समाप्त हो गया। और मित्र राष्ट्रों की विजय हुई। जून १९४५ में १०४१ दिन की सबसे लम्बी जेल यात्रा के बाद सरकार ने जवाहरलाल जी को रिहा कर दिया। कांग्रेस के सभी नेता छोड़ दिये गए।

जेल से निकलने के बाद, जवाहरलाल जी ने देशवासियों के साहस, त्याग और बलिदान की बड़ी प्रशंसा की और कहा कि जनता के इस साहस, त्याग, और बलिदान पर उन्हें गर्व है।

आजाद हिन्द फौज

महायुद्ध के समय में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने एक फौज बनाई थी, जिसका नाम 'आजाद हिन्द फौज' था। इस फौज के द्वारा वे अंग्रेजी सरकार से लड़े। आजाद हिन्द फौज को सफलता नहीं मिली। जब लड़ाई समाप्त हुई तो आजाद हिन्द फौज के अफसर और सिपाही भारत आये। अंग्रेजी सरकार ने उन पर मुकदमे चलाये जवाहरलाल जी को यह बहुत बुरा लगा। उनके विचार से, आजाद हिन्द फौज के सिपाही वीर और देश भक्त थे। सारा देश आजाद हिन्द फौज के सिपाहियों को बचाने के लिए तैयार हो गया। उनको बचाने के लिए जवाहरलाल जी ने स्वयं अपना बैरिस्टरी का चोगा पहिना। और उनकी पूरी जोरदार वकालत की। अन्य बड़े-बड़े वकीलों ने भी जवाहरलाल जी का साथ दिया। अन्त में, आजाद

हिन्द फौज के अफसर और सिपाही छोड़ दिये गये।

'भारत छोड़ो' और आजाद हिन्द फौज' आंदोलनों से अंग्रेजी सरकार घबड़ा गई। और उनके शासन की नींव हिलने लगी। उधर जनवरी १९४६ में केन्द्रीय और राज्यों की विधान सभाओं के चुनावों में कांग्रेस को बहुत सफलता मिली। लेकिन मुस्लिम लीग को अधिकतर मुसलमानों ने वोट दी। १६ फरवरी, १९४६ को अचानक ऐसी घटना घटी जिससे अंग्रेजी सरकार के शासन की नींव पूरी तरह डगमगाने लगी। और वह था बम्बई में जन सेना के नाविकों और दूसरे भारतीय कर्मचारियों द्वारा प्रदर्शन। ब्रिटिश सेना के अधिकारियों के साथ उनकी जोरदार मुठभेड़ हो गई। बम्बई में हिंसा और लूटमार होने लगी, जिसका सारे देश में जोरदार असर हुआ। यद्यपि जवाहरलाल जी ने नाविकों की हिंसा की प्रवृत्ति को नहीं सराहा, लेकिन ब्रिटिश सरकार इस घटना से बुरी तरह हिल गई। कैबिनेट मिशन भारत आया और देश के नेताओं से बातचीत हुई। उसके परिणामस्वरूप भारत में अंतरिम सरकार बनी जिसके उपाध्यक्ष जवाहरलाल जी बनाये गए।

अंतरिम सरकार के अनुभव से यह महसूस हुआ कि मुस्लिम लीग कांग्रेस के साथ मिलकर निर्माण में रोड़े अटकाती है। ब्रिटिश सरकार मुस्लिम लीग की मांग का समर्थन करती थी। अन्त में कांग्रेस के नेताओं को लाचार होकर देश का विभाजन स्वीकार करना पड़ा।

पूर्ण स्वतन्त्र

१४ अगस्त, सन् १९४७ को रात्रि के बारह बजे संसद भवन में लार्ड माउण्टबेटन ने देश की बागडोर जवाहरलाल जी के हाथ में दी। यूनियन जैक नीचे उतार दिया गया। और राष्ट्रीय तिरंगा झण्डा संसद भवन पर फहराने लगा।

भारत पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो गया। जवाहरलाल जी प्रधान मन्त्री बनकर ऐतिहासिक लाल किले में गए। उस समय लाखों नर-नारियों ने उनके स्वागत में अपनी आंखें बिछाईं।

जनता के अपार समूह के बीच, तोपों की गड़गड़ाहट के साथ नेहरू जी ने भारत गणराज्य का राष्ट्रीय झण्डा फहराया।

देश की ४० करोड़ जनता ने अपने हृदय सम्राट नेहरू जी को, जिन्होंने ३० वर्ष तक अथक परिश्रम, लगन और उत्साह से देश की सेवा की थी, राष्ट्रनायक और भाग्य विधाता बना लिया।

४

राष्ट्र नायक नेहरू

राष्ट्र की मृत्यु नहीं होती। पुरुष और स्त्रियां आते और जाते हैं, लेकिन राष्ट्र चलता रहता है। इसमें कुछ सनातन गुण है। और निश्चय ही भारत ऐसे राष्ट्रों में है जिसके विचारों में, विकास में, ह्रास में एक सनातनता है"

—जवाहरलाल नेहरू

राष्ट्रनायक नेहरू जी ने भारत के भविष्य की प्रारम्भिक रूपरेखा अपने मन में पहले से ही बना ली थी। देश के किसान और मजदूरों की दशा बहुत खराब थी। किसान की हालत तो इतनी गिर गई थी कि गांधी जी के शब्दों में, "वह अक्सर अपने स्वच्छ वायुमण्डल वाले गांव को गोबर का ढेर बना डालता है।" उसमें सबके साथ सहयोग करने या आपस में मिलकर सामाजिक हित का काम करने की भावना नहीं होती। लेकिन वह बेचारा करे भी तो क्या, जबकि जीवन खुद ही उसके लिए एक अत्यन्त कटु और लगातार संघर्ष का विषय बन गया था और हरएक आदमी उस पर प्रहार करने के लिए हाथ उठाये खड़ा था। किस तरह वह अपनी ज़िन्दगी बिताता था, यह नेहरूजी के लिए भारी अचम्भे की बात थी। इसी प्रकार से मजदूर वर्ग की हालत भी बहुत खराब थी। उद्योगपतियों का दृष्टिकोण पिछड़ा हुआ था। जब कोई मौका आता था तो वे सबसे ज्यादा लाभ उठाते थे, और मजदूर जैसा का वैसा बना रहता था। छोटे-छोटे, असंगठित उद्योग-धंधों के मजदूरों की स्थिति औद्योगिक मजदूरों से भी ज्यादा खराब थी। नेहरूजी ने कपड़े और जूट मिलों के करोड़पति मालिकों के गगनचुम्बी प्रासाद देखे और उनके विलासी जीवन की अपने मजदूरों की काल-कोठरियों से तुलना की। यह एक दलदल थी। ऐसी गिरी हुई हालत से जनसमूह को उठाने का बीड़ा नेहरूजी ने अपने विशाल कंधों पर लिया।

नेहरूजी पर मानवतावाद की उदार परम्परा का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

उन्होंने मानव हित को ही अपना मुख्य दृष्टिकोण माना। इस की आर्थिक प्रगति का उनपर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने निश्चय कर लिया कि देश में समाजवाद बिना किसी संघर्ष के लाया जा सकता है।

राष्ट्रीय निर्माण समिति

सन् १९३८ में प्रान्तीय सरकारों के सहयोग से, एक राष्ट्रीय निर्माण समिति बनी जिसके नेहरूजी सभापति बने। इस समिति ने देश की बड़ी समस्याओं पर अच्छी तरह विचार किया। यहां तक कि राष्ट्रीय गतिविधि के हरएक पहलू से इसका सम्बन्ध जुड़ गया। कृषि विकास, औद्योगिक विकास, सामाजिक व आर्थिक विकास आदि पर उप-समितियां बनी जिनमें भारत की अर्थव्यवस्था की सरकार योजना बना सके। इस समिति की ७२ बैठकें हुई जिनमें ७१ बैठकों में नेहरूजी ने भाग लिया। उन्होंने लिखा है, "मेरे लिये यह काम बड़ा सुखावना रहा और इसमें मैंने बहुत कुछ सीखा।" इस समिति ने योजना की एक रूपरेखा तैयार की जिसमें सोलह रिपोर्टें पूरी थी और दस रिपोर्ट पूरी होने को थी। नेहरूजी को यह स्पष्ट लगा कि किसी भी उपयोगी योजना में आर्थिक ढांचे का समाजीकरण हो जाना जरूरी है।

सन् १९४६ में जब नेहरूजी अन्तरिम सरकार के उपाध्यक्ष बने, तो एक सलाहकार योजना बोर्ड बनाया गया। इस बोर्ड का यह काम था कि सभी क्षेत्रों में लक्ष्य निश्चित कर दिये जाएं और जिन चीजों को प्राथमिकता देनी है, वे भी निश्चित हो जाएं। स्वतन्त्रता के बाद जनता यह महसूस करने लगी थी कि देश का निर्योजित विकास हो, जिससे आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके। सारे देश में इस विचारधारा को पैदा करने का श्रेय यदि किसी व्यक्ति का है तो वह नेहरूजी का ही है।

१५ अगस्त, १९४७ को देश ने स्वतन्त्रता प्राप्त की। लेकिन विभाजन के बाद की घटनाएं और कश्मीर पर पाकिस्तान के आक्रमण के कारण योजना बनने में देर लग गई। सन् १९४९ के बीच से, नेहरूजी ने अपनी सारी ताकत राष्ट्र समस्या के हल और आर्थिक विकास की ओर लगा दी। फरवरी १९५० में नेहरूजी की अध्यक्षता में योजना आयोग की स्थापना की घोषणा की गई।

प्रजातन्त्रीय योजना

योजना आयोग के कार्य को उन्होंने मौलिक मूल अधिकारों और विधान के निर्देशक राज्यनीति के सिद्धान्तों के निम्न प्रकार जोड़ दिया—

"भारत के विधान में भारतीय नागरिकों के कुछ मूल अधिकारों की रक्षा की गई है और राज्यनीति के कुछ निर्देशक सिद्धान्त निश्चित किये गए हैं। विशेष

कर, राज्य जन-कल्याण की वृद्धि के लिए एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था बनाएगा जिसमें राष्ट्रीय जीवन की सारी समस्याएं सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय पर आधारित होंगी। साथ ही राज्य अपनी नीति का निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निर्देशन करेगा।

(अ) नागरिकों—पुरुषों और स्त्रियों—को भरपूर जिन्दगी के पूरे साधन प्राप्त करने का अधिकार हो।

(आ) समाज के भौतिक साधनों का इस प्रकार नियन्त्रण हो जिसमें सबका भला हो।

(इ) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार की न हो जिसमें धन और पैदावार के जरिये केवल कुछ व्यक्तियों के पास ही चले जाएं, जिससे जनता का अहित हो।

(ई) इन बातों को ध्यान में रखकर, जनता के जीवन स्तर में वृद्धि करना, देश के साधनों का उचित प्रयोग करना, उत्पादन बढ़ाना और हर-एक नागरिक को रोजगार के समान अवसर देना।

नेहरूजी ने इस प्रकार भारत की विकास योजना की नींव प्रजातन्त्र और समाजवाद के आधार पर रखी। पहली पंचवर्षीय योजना जब संसद के सामने रखी गई तो उसका हार्दिक स्वागत किया गया। यह योजना अप्रैल १९६१ शुरू कर दी गई। स्वतन्त्र भारत ने एक ठोस कदम बढ़ाया, जनता में जोश और उत्साह था। जनता ने यह स्वीकार किया कि भारत शान्ति के साथ प्रजातन्त्र के आधार पर ही प्रगति करेगा। नेहरूजी योजना के श्रीगणेश और समाप्ति की तारीखों को बहुत महत्त्व देते थे; क्योंकि उन तारीखों का देश के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान होता था।

क्रान्तिकारी कदम

पहली योजना सफलता के साथ समाप्त हुई। यद्यपि किसी भी देश की पहली योजना बहुत महत्त्वपूर्ण होती है क्योंकि वह भविष्य के विकास का मूल आधार होती है, किन्तु नेहरूजी को पहली योजना में बहुत कमियां महसूस हुईं। उनको सामुदायिक परियोजनाओं का विचार बहुत अच्छा लगा। अमरीका और दूसरे देशों में ग्रामीण विकास पर बहुत तजुर्बे किये गये। मैक्सिको के गावों में भी इसी प्रकार की विकास योजनाएं चलाई गईं, जिनको काफी सफलता मिली। भारत के गांवों की दशा ज्यादातर मैक्सिको के गांवों से मिलती-जुलती है। इन तजुर्बों की ओर नेहरूजी का ध्यान आकर्षित हुआ। उनको सामुदायिक विकास योजना ग्रामीण जनता के

काफी गुंजाइश है, अगर खास उद्देश्य स्पष्ट हो।"

नेहरूजी की इसी प्रेरणा से दिसम्बर १६५४ में संसद में समाजवादी समाज का प्रस्ताव पास हुआ। कांग्रेस के अप्रैल १६५६ के आवादी अधिवेशन में, उनकी प्रेरणा से औद्योगिक नीति के बारे में यह प्रस्ताव पास हुआ कि देश की योजना इस प्रकार की होनी चाहिए जिसमे स्वावलम्बी अर्थव्यवस्था हो जाए और देश शीघ्र से शीघ्र अपने पैरों पर खड़ा हो जाए। विदेशों से मशीन आदि मंगाने की आवश्यकताएं कम-से-कम रह जाए।

सामाजिक और औद्योगिक विकास

दूसरी पंचवर्षीय योजना में नेहरूजी के इन विचारों का समावेश किया गया। और आर्थिक विकास, औद्योगिक और तकनीकी विषयों में उसी प्रकार तब्दीलियां की गईं। विज्ञान और वैज्ञानिक तरीकों का बड़े पैमाने पर प्रयोग स्वीकार किया गया जिसमें तुरन्त की सामाजिक समस्याओं का उपाय हो सके और आर्थिक विकास में जल्दी प्रगति हो सके। इन बुनियादी सिद्धान्तों पर देश में काफी चर्चा हुई और संसद के अन्दर और बाहर तीव्र आलोचनाएं हुईं, लेकिन नेहरूजी उन पर अडिग रहे।

राष्ट्रीय विकास परिषद् की ७ जनवरी और २० जनवरी १६५६ की बैठकों में, नेहरूजी ने यह घोषणा की कि "आज के भारत में, देश की पृष्ठभूमि, जनता की आशाओं और इच्छाओं को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि हम समाजवादी समाज की ओर आगे बढ़ें। यह एक लम्बा रास्ता है। इसके लिए लम्बे अरसे के लिए योजनाओं की ज़रूरत है। जिसमें हमको यह साफ ज़ाहिर हो जाये कि अगले १५ सालों में, हम क्या करना चाहते हैं। थोड़े अरसे की योजनाएं उस बड़े उद्देश्य को सामने रखकर ही बननी चाहिए। अन्त में हमारे समाज का ऐसा ढांचा हो जिसमें सही इच्छाओं को बढ़ावा मिले, गलत इच्छाओं को नहीं, सही तरीके अपनाए जाएं, गलत तरीके नहीं।"

नेहरूजी को भारत के ४० करोड़ लोगों की क्षमता पर विश्वास था और वे जनता के हृदय को जीतने में विश्वास रखते थे, उनसे लड़ने में नहीं। सो [illegible] इस प्रकार की थी जिसमें सामाजिक परिवर्तन और आर्थिक विकास एक ही रास्ते पर चलकर ही सकता था। और वह था लोकतन्त्री तरीके का, [illegible] और [illegible] के [illegible] नहीं थे, उन्होंने [illegible]। नेहरूजी का विश्वास था कि औद्योगिक विकास के लिए [illegible] आवश्यक [illegible], और [illegible] था।

इसी उद्देश्य को सामने रखकर, नेहरूजी ने इस बात पर जोर दिया कि लोकशाही तरीके पर योजना बनाई जाए और सारे भारत में ज्यादा-से-ज्यादा लोगों से उस पर मशवरा किया जाए, लेकिन असली उद्देश्यों में कोई तबदीली न हो। साथ ही वे यह भी चाहते थे कि योजना की प्रगति की समय-समय पर जांच होती रहे। सर्वेक्षण होता रहे और उसकी समीक्षा होती रहे। साथ ही उत्पादन, उपभोग, रोजगार, यातायात, समाज सेवाएं, शिक्षा और स्वास्थ्य—इन सबमें आपसी पूरा तालमेल रहे। जिससे उद्देश्य को सामने रखकर ठीक उसी प्रकार के जरिये और तरीके अपनाये जाएं जिससे सर्वांगीण प्रगति हो सके, और कोई क्षेत्र अछूता न रह जाये।

नेहरूजी यह नहीं चाहते थे कि कुछ निजी उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र में ले लिये जाएं और सरकार उनका मुआवजा दे। वे चाहते थे कि कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्र सरकार के लिए निश्चित कर दिये जाएं जिससे सार्वजनिक क्षेत्र में उनके विकास की पूरी गुंजाइश हो। इस उद्देश्य को रखते हुए, निजी क्षेत्र में औद्योगिक विकास के लिए उद्योगपतियों को पूरा अवसर और आजादी दी जाये जिससे उनके उद्योग खूब फलें फूलें, माल का भरपूर उत्पादन हो और इस प्रकार राष्ट्र निर्माण में सहायता दे सकें।

औद्योगिक नीति

साथ ही नेहरूजी ने भारी मशीनें बनाने के उद्योग पर बहुत जोर दिया क्योंकि यही औद्योगिक विकास का मूल आधार था। इस प्रकार नेहरूजी की प्रेरणा से १६४८ के औद्योगिक नीति सम्बन्धी प्रस्ताव में परिवर्तन हुआ और सन् १६५६ में एक नया औद्योगिक नीति प्रस्ताव पास हुआ। इस प्रस्ताव के जरिये नेहरूजी यह चाहते थे कि 'औद्योगिक ढांचे की जड़ को पहले पकड़ा जाये और उसका आधार पूरी तरह मजबूत किया जाये जिसपर औद्योगिक विकास की इमारत खड़ी हो सके। इसके लिए भारी उद्योगों का विकास अत्यन्त महत्वपूर्ण है, और सब इसके आगे कुछ नहीं है। सिर्फ इतना आवश्यक है कि औद्योगिक सन्तुलन बना रहे। इसलिए भारी मशीन बनानेवाले उद्योगों और भारी उद्योगों की योजना बनाई जाये। इन उद्योगों की स्थापना शीघ्र-से-शीघ्र होनी चाहिए क्योंकि इसमें समय लगता है।'

देश में इस पर काफी वाद-विवाद और आलोचनाएं हुईं। बड़े-बड़े उद्योगपतियों ने नेहरूजी के इन विचारों से मतभेद प्रकट किया। लेकिन वे हिमालय की भांति दृढ़ रहे। इस्पात, कोयला और तेल—इन तीनों उद्योगों को सार्वजनिक क्षेत्र में लिया गया। अगर नेहरूजी अपने इस उद्देश्य पर अटल नहीं रहते तो इस्पात

और तेल के औद्योगीकरण की दिशा में बहुत दूर तक जाना संभव नहीं होता भारी औद्योगीकरण की दिशा में रूस ने जो नेहरूजी को इस समय आर्थिक औ तकनीकी सहायता देने का वचन दिया, वह उल्लेखनीय है।

सहकारिता और पंचायती राज

नेहरूजी योजना बनाने और उसे चलाने के काम को सबसे ज्यादा महत्वपू समझते थे। बल्कि वे इसे एक प्रकार का आंदोलन मानते थे। यह आंदोलन बड़ा व्यापक था—राजनीति से लेकर आर्थिक और सामाजिक, सभी क्षेत्र इस आंदोल के अन्तर्गत आते थे। नेहरूजी को दूसरी योजना बनाते समय जितनी मुश्कि समस्याओं का सामना करना पड़ता, वे उनको सुलझाने में उतनी ही लगन से काम करते। इस महान् कार्य को पूरा करने में उनकी दिलचस्पी उतनी ही अधिक बढ़ती। राष्ट्रीय विकास परिषद् की मई, १९५६ की बैठक में इन समस्याओं का जि करते हुए, उन्होंने कहा, "हर कदम पर जो नई समस्याएं सामने आती हैं, उनसे हमें अपने-आप पर और जनता पर इसका भरोसा होता है कि हममें उनको सुल झाने की और विकास के लक्ष्यों को पूरा करने की योग्यता और क्षमता है।"

नेहरूजी उद्योगों के साथ-साथ खेती-बाड़ी और ग्रामीण व्यवस्था को भी प्राथ मिकता देना चाहते थे। दूसरी योजना में अन्न के उत्पादन में वृद्धि को वे महत्व पूर्ण समझते थे। वह यह भली प्रकार जानते थे कि अनाज का अधिक मात्रा में होना और जनता को उचित दामों पर मिलना, दूसरी योजना की सफलता के लिए कितना आवश्यक है। सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का इसमें बहुत महत्त्व है क्योंकि उनका ग्रामीण जनता पर काफी असर पड़ रहा था जिसके कारण उनके दिमागों और आदतों में भी धीरे-धीरे कुछ तब्दीलियां हो रही थीं। साथ ही इन योजनाओं से उनके रहन-सहन पर भी असर पड़ा था। लेकिन सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की थी कि अन्न उत्पादन की ओर पहले से अधिक ध्यान दिया जाए।

सामुदायिक विकास योजनाओं के शुरू में ग्रामीण लोगों ने सार्वजनिक निर्माण कार्यों में अधिक ध्यान दिया था। स्थान-स्थान पर सामुदायिक केन्द्र, स्कूल, पंचायतघर, तालाब, कुएं, पक्की सड़कें, पुल आदि के निर्माण कार्यों में जनता ने खुले हृदय से धन और श्रमदान किया। लेकिन खेती-बाड़ी के साधनों में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं हुआ। उनके खेत अब भी लकड़ी के बने हुए हलों से ही बैलों द्वारा जोते जाते थे। सहकारिता का विकास नहीं हुआ था।

नवम्बर १९५८ में नेहरूजी की प्रेरणा से राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक हुई। जिसमें सहकार नीति पर एक प्रस्ताव पास हुआ। परिषद् ने यह घोषणा की कि सहकारिता का विकास जन आन्दोलन के रूप में होना चाहिए। इसमें यह आवश्यक है कि सहकारी समितियों की स्थापना पहले गांवों के स्तर पर हो और सामाजिक व आर्थिक विकास की जिम्मेदारी गांव की सहकारी समिति पर और ग्राम पंचायत पर हो।

उसी बैठक में यह भी निश्चय किया गया कि सरकार अनाज के थोक व्यापार को अपने हाथ में ले। किन्तु कुछ कारणों से, इस नीति पर पालन नहीं हो सका।

जनवरी १९५८ में राष्ट्रीय विकास परिषद् ने एक बड़ा कदम उठाया। परिषद् ने यह निश्चय किया कि प्रजातन्त्र गांव, खण्ड और जिला स्तर पर पहुंच जाये जिससे सारा देश संसद की लोक-सभा से लेकर पंचायत की ग्राम सभा तक प्रजातन्त्रीय प्रणाली की मजबूत कड़ी में बंध जाए। नेहरूजी की यह इच्छा थी कि पांच साल गांवों में पंचायती राज की स्थापना हो जाए, जिससे हर गांव पंचायत जनता की मदद से, जनता की इच्छानुसार, जनता की ही भलाई के लिए ग्राम विकास की योजना बनाकर काम करे, जिससे विकास के काम तेजी के साथ हो सकें और ग्रामवासी उत्तम जीवन व्यतीत कर सकें। इस प्रकार उनकी पंचायती राज में बड़ी निष्ठा थी। उन्होंने कहा, "मैं उस मंजिल पर हूं जब पंचायती राज में पूरा उत्साह है। मैं यह महसूस करता हूं कि भारत के लिए यह एक बुनियादी क्रान्तिकारी चीज है जिससे ग्रामीण भारत के पांच लाख से अधिक गांवों में यह स्थापित हो जाए। मेरा मन यह सोचकर रोमांचित हो जाता है कि लोकतन्त्र की यह प्रतिनिधि संस्थाएं व्यापक रूप में गांवों से शुरू होकर ऊपर तक काम करेंगी। लोकतन्त्र सबसे ऊपर संसद या राज्यों की विधान सभाओं में ही नहीं है बल्कि यह तो एक ऐसी चीज है जो हरएक को रोमांचित करती है और हरएक को अपना उचित स्थान लेने के लिए आवश्यकता पड़ने पर किसी भी स्थान के लिए प्रशिक्षित करती है। मैंने यह कहा है और मैं यह मानता हूं कि पंचायती राज में जो कुछ हम कर रहे हैं उसके अन्दर भारत में हरएक को इस प्रकार प्रशिक्षित करना है कि वह भारत का संभाव्य प्रधान मन्त्री बनने की क्षमता प्राप्त कर सके।"

भूमि सुधार व सहकारी खेती

नेहरूजी को भूमि सुधार और सहकारी खेती की धीमी प्रगति पर चिन्ता हुई। इन दोनों मसलों पर दूसरी पंचवर्षीय योजना को बनाते समय काफी बहस हुई थी।

नेहरूजी ने अपना सारा जोर भूमि सुधार और सहकारी खेती के पक्ष में लगा दि
था। दूसरी योजना में यह निश्चय किया गया था कि सहकारी खेती की नींव मज़
करने के लिए ठोस कदम उठाये जाएं। जिससे दस साल के अन्दर खेती सहकारी
पर हो सके और अनाज उत्पादन में आवश्यक वृद्धि हो। राज्यों ने इन बुनिया
सिद्धान्तों को स्वीकार किया क्योंकि यह सारे देश के सामाजिक और आर्थिक कि
के एक भाग थे। किन्तु इन पर पूरी तरह अमल नहीं हो सका। बहुत से राज्यों
जोत की अधिकतम सीमा निर्धारण करने के लिए कानून तो बन गए लेकिन उन
तेज़ी से कार्य नहीं हुआ। सन १९५९-६० तक २ करोड़ ३० लाख एकड़ ज़मीन
चकबन्दी की जा चुकी थी और १ करोड़ ३० लाख एकड़ ज़मीन की चकबन्दी होनी
बाकी थी। कई राज्यों में भूस्वामित्व सम्बन्धी सर्वेक्षण नहीं हुआ था, और
सम्बन्ध में लाने और लगाने तैयार नहीं हुए थे।

तीसरी योजना की समस्याएं

नेहरूजी ने दिसम्बर १९५८ और १९५९ के शुरू की बैठकों में योजना आयो
से तीसरी योजना के मूल उद्देश्यों पर विचार विमर्श किया। देश के लिए मज़
औद्योगिक आधार और स्वावलम्बी विकास पर जोर देने की अब आवश्यकता न
रह गई थी क्योंकि यह उद्देश्य तो पहले से ही स्वीकार किए जा चुके थे। अब
इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तकनीकी, प्रशासनीय और वित्त सम्बन्धी कद
उठाने थे। ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था व समाज कल्याण के विकास का बोझ राज्यों
कंधों पर था। नेहरूजी देश में शिक्षा की कमी के बारे में चिंतित थे। वे यह चाह
थे कि ग्रामीण जनता की कुछ न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी की जाएं। इसी प्रका
शहरों में बढ़ी बस्तियों की समस्याएं और उनके सुधार और समाज कल्याण की समस्य
को भी वे हाथ में लेना चाहते थे। इन बातों पर नेहरूजी के विचारों के अनुसार
तीसरी पंचवर्षीय योजना में पूरा ध्यान दिया गया।

तीसरी योजना का प्रारूप बनाते समय, नेहरूजी के सामने तीन मुख्य समस्याएं
थीं :

(१) इस्पात और कारखानों के लक्ष्य का निर्धारण किया जाये और [illegible]
[illegible]

व्यवस्थ... ...

(२) तीसरी योजना का भौतिक लक्ष्य क्या हो, और सार्वजनिक क्षेत्र के लिए कितनी धन राशि निश्चित की जाए ? क्योंकि सार्वजनिक क्षेत्र में योजनाओं के लिए धन की आवश्यकताएं और साधन की उपलब्धि के बीच बहुत बड़ा अन्तर था। नेहरूजी ने सोचा कि धन की कमी के कारण भौतिक लक्ष्य कम न किये जाएं और वे वही रहने चाहिएं जो पहले निश्चित किये जा चुके हैं। उन्होंने यह सलाह दी कि औद्योगिक विकास, बिजली, यातायात, तकनीकी शिक्षा और वैज्ञानिक खोज—इन सबों में आपसी पूरा तालमेल उसी प्रकार चलता रहे जैसी प्राथमिकताएं निश्चित कर दी हैं जिससे जैसे ही विदेशी मुद्रा मिले वैसे ही आन्तरिक साधन जुटा लिये जाएं और विकास की प्रगति तेज़ी के साथ होती रहे। इसके लिए यदि हमें खतरा भी मोल लेना पड़े तो उसके लिए तैयार रहना चाहिए।

(३) वे चाहते थे कि योजना के सामाजिक उद्देश्य साफ तौर पर योजना में आ जाएं जिससे उसी प्रकार समाज कल्याण की दशा में अमल हो सके। तीसरी योजना के प्रारूप को नेहरूजी अपने साथ कुल्लू ले गए और वहां शान्ति के वातावरण में उन्होंने इन समस्याओं पर विचार किया। इस प्रकार तीसरी योजना का पहला अध्याय नेहरूजी ने स्वयं लिखा। इस अध्याय में नेहरूजी ने देश के मौजूदा विकास को जनता की इच्छाओं और आकांक्षाओं से जोड़ दिया। उनके यह शब्द देश का वर्षों तक पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे।

राष्ट्रीय संकट

तीसरी योजना के दूसरे वर्ष में भारत पर एक महान संकट आया। और वह था २० अक्तूबर १९६२ को हमारे पड़ोसी देश-चीन का हमारी सीमाओं पर बर्बर और लज्जास्पद आक्रमण। चीन के इस आक्रमण के फलस्वरूप, सारा देश भारत की पवित्र भूमि से हमलावरों को निकालने के लिए एक सूत्र में बंध गया है। राष्ट्रीय संकट की इस घड़ी में सारे देश ने प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू और सरकार द्वारा उठाये गये विशेष कदमों का पूर्ण समर्थन ही नहीं बल्कि हार्दिक स्वागत किया। वास्तव में पहले कभी देश में अपने सम्मान, एकता, और स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए इतना आक्रोश और दृढ़ निश्चय कभी नहीं दिखाई दिया था।

में नेहरूजी का ही प्रभाव था। नेहरूजी हर कदम पर इस बात पर जोर देते रहे कि योजना के लिए देश की एक विचारधारा हो जाए। उसमें सारे राजनैतिक दल और दूसरी संस्थाएं अपना सलाह-मशविरा देते रहे और उसमें सारे देश का योग हो। नेहरूजी ने देश में इस प्रकार का वातावरण पैदा कर दिया जिससे सारे देश-वासी सुनियोजित विकास के महत्त्व को भली-भांति समझने लगे। नेहरूजी को इस काम में आश्चर्यजनक सफलता मिली।

नेहरूजी के बंधे हुए सिद्धान्त नहीं थे। उन्होंने अपने लिए कोई शक्ति संचित नहीं की और न कोई अपनी सत्ता बनाई जो किले का काम करती। उनके कोई शिष्य नहीं थे। सरकार की मशीनरी और दल पर उनका तानाशाही नियंत्रण नहीं था। वे तो जनता की विचारधारा को एक वास्तविक रूप दे देते थे। उस कारण वह चीज जनता की हो जाती थी। वे जनता की नब्ज और समय की परिस्थिति को फौरन समझते थे। बहुत कम लोग इस बात को समझ पाते कि वह नेहरूजी के ही उद्गारों और विचारों का परिणाम होता था।

नेहरूजी भारतीय क्षितिज पर इतने लम्बे अरसे तक रहे। उनका प्रभाव सर्वांगीण था। उन्होंने भारत की दो पीढ़ियों के जीवन और विचारधारा को नया मोड़ दिया। भारत को उन्होंने एक सम्पूर्ण राष्ट्र बनाने के लिए अथक प्रयत्न किया। लोकशाही की संस्थाओं का ऊपर से नीचे तक उन्होंने पूरा जाल बिछा दिया ताकि लोकतन्त्र देश की ४५ करोड़ जनता की रग-रग में समा जाये। वे भारत को समाजवाद के मार्ग पर ले गये। तीन पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा, उन्होंने देश में महान् सामाजिक और आर्थिक आंदोलन पैदा कर दिया। उन्होंने जनता की शक्ति का उपयोग करके नये तीर्थों का निर्माण किया। यह सब नेहरूजी राष्ट्र को विरासत में दे गये हैं। गांधी जी ने भारतवासियों को भय और दासता से मुक्ति दी। नेहरूजी ने राष्ट्र को जीवन दिया। उन्होंने राष्ट्र को प्रजातन्त्र-प्रणाली दी। उन्होंने राष्ट्र को स्वप्नों का भारत दिया। उन्होंने राष्ट्र को एकता और सामुदायिक चेतना दी।

इस प्रकार १८ वर्षों तक लगातार नेहरूजी अपने अनोखे ढंग से राष्ट्र निर्माण और उसका नेतृत्व करते रहे। अपने जीवन में कोई भी मनुष्य करोड़ों देशवासियों और समुद्र पार के लोगों के दिल और दिमाग में इस प्रकार कभी नहीं समाया था। वे राष्ट्र की आशा, आकांक्षा और इच्छा के प्रतीक थे। वे राष्ट्र की बुद्धिमत्ता नैतिकता, त्याग और बलिदान के प्रतीक थे। वे यौवन के प्रतीक थे। वे सुन्दरता के प्रतीक थे। वे दया और करुणा के प्रतीक थे। वे सारी मानवता के प्रतीक थे।

इस सम्बन्ध में एक छोटी सी घटना का उल्लेख करना आवश्यक है। सन् १९३६ में जब स्विट्जरलैंड में नेहरूजी की पत्नी का देहान्त हो गया तो उनके पास इटली के तानाशाह मुसोलिनी ने संवेदना संदेश भिजवाया। साथ ही मुसोलिनी ने उनसे भेंट करने की इच्छा भी प्रकट की। फासिस्ट शासन का घोर विरोधी और मानवता के प्रेमी होने के कारण, वे मुसोलिनी से मिलना नापसन्द करते थे। उस समय मुसोलिनी का अबीसीनिया पर हमला भी जारी था। नेहरूजी को यह भी डर था कि ऐसी मुलाकात का फासिस्टों की ओर से प्रोपेगंडा करने में अवश्य दुरुपयोग किया जायेगा। लेकिन उनके इन्कार करने का इटली के फासिस्टों पर कोई असर नहीं पड़ा। नेहरूजी को रोम होकर ही भारत वापस आना था। क्योंकि हालैण्ड की एल० एम० कम्पनी का हवाई जहाज, जिसमें वे यात्रा कर रहे थे, वहां रात-भर रुका रहा। ज्योंही वे रोम पहुंचे, एक उच्च अधिकारी उनके पास आये और सन्ध्या के समय सिन्योर मुसोलिनी से भेंट का फिर निमंत्रण दिया। उन्होंने जोर देकर कहा कि "सब कुछ तय हो चुका है"। नेहरूजी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा, "मैं तो पहले ही माफी मांग चुका हूं।" इस बात पर घंटे-भर तक बहस चलती रही। यहां तक कि मुलाकात का समय भी आ पहुंचा। अन्त में नेहरूजी की विजय हुई। कोई मुलाकात नहीं हुई।

नेहरूजी को नाजियों का बढ़ता हुआ खतरा साफ दिखाई दे रहा था। वे नाजीवाद, फासिज्म और साम्राज्यवाद में कोई अन्तर नहीं समझते थे। किन्तु आवश्यकता इस बात की थी कि दुनिया के सारे प्रगतिशील लोग, इनके खिलाफ एक हो जाएं।

इसके बाद ही स्पेन में एक घटना हुई। जनरल फ्रेंको ने जर्मनी और इटली की सहायता से स्पेन में विद्रोह कर दिया। इस प्रकार यह एक यूरोपीय या विश्वव्यापी संघर्ष बनता जा रहा था।

श्री नेहरू ने सारी परिस्थिति का विश्लेषण किया। और जिस परिणाम पर वे पहुंचे, उसी प्रकार की घटनाएं हुईं, यद्यपि उन्हें कुछ साल लगे। स्पेन के युद्ध की उनके मन पर यह प्रतिक्रिया हुई कि किस प्रकार भारत का सवाल संसार के दूसरे सवालों से सम्बन्धित था। उनके विचार में चीन, अबीसीनिया, स्पेन, मध्य यूरोप, भारत और अन्य दूसरे स्थानों की सारी राजनीतिक और आर्थिक समस्याएं, एक ही विश्व समस्या के कई रूप थे। जब तक मूल समस्या हल नहीं कर ली जाती, तब तक इनमें से कोई एक समस्या अन्तिम रूप से नहीं सुलझ सकती। सम्भावना यह थी कि मूल समस्या सुलझाने से पहले कोई क्रांति या आपत्ति आये। श्री नेहरू

ने सोचा, "जिस तरह आज की दुनिया में शांति अविभाज्य है उसी प्रकार स्वाधीनता भी अविभाज्य है। दुनिया बहुत समय तक 'कुछ आजाद, कुछ गुलाम' नहीं रह सकती। फासिज्म और नाजीवाद की यह चुनौती मूलतः साम्राज्यवाद की ही चुनौती थी। वह दोनों जुड़वां भाई थे। फर्क सिर्फ इतना ही था कि साम्राज्यवाद का विदेशों में उपनिवेशों और अधिकृत देशों में जैसा नंगा नाच देखने में आया था, वैसा ही नाच फासिज्म व नाजीवाद का निज के देशों में पड़ता था। अगर दुनिया में आजादी कायम होनी है, तो न सिर्फ फासिज्म और नाजीवाद को मिटाना होगा बल्कि साम्राज्यवाद का भी बिलकुल नामोनिशान मिटा देना होगा।"

इस प्रकार श्री नेहरू ने विदेशों की घटनाओं को सदैव अपने सामने रखा। उनके प्रयास से भारत की जनता भी अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं में दिलचस्पी लेने लगी। कांग्रेस ने हर जगह चीन, अबीसीनिया, फिलस्तीन और स्पेन के लोगों से सहानुभूति दिखाई और हजारों सभाएं व प्रदर्शन किये। अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं में इस प्रकार दिलचस्पी बढ़ने से जनता का भी उदार दृष्टिकोण बन गया।

जून १९३८ में श्री नेहरू फिर यूरोप गये और तेजी से बदलती हुई दुनिया की परिस्थिति और समस्याओं का अध्ययन किया। १९३९ में वे श्रीलंका गये। उनका यह विचार था कि भविष्य में श्रीलंका और भारत को साथ-साथ रहना पड़ेगा। भविष्य में उनकी यह कल्पना थी कि निकट भविष्य में एक विश्व-संघ बनना चाहिए। अगस्त १९३९ में वे चीन गये यहां मार्शल च्यांगकाई शेक ने उनका स्वागत किया और वर्तमान परिस्थिति और भविष्य पर विचार विनिमय किया।

स्वतन्त्रता के बाद

७ सितम्बर, १९४६ को भारत में अन्तरिम सरकार बनी जिसके नेहरूजी प्रधान मंत्री बने। उसी दिन नेहरूजी ने राष्ट्र को एक सन्देश दिया जिसमें उन्होंने भारत की विदेशनीति की एक रूपरेखा प्रस्तुत की। उन्होंने कहा कि पिछले दो विश्वयुद्ध शक्ति गुटों के कारण हुए थे जिससे बड़ा नाश हुआ और यदि इसी प्रकार संघर्ष रहा तो यह फिर दुनिया को विनाश की ओर ले जा सकते हैं। इस कारण भारत यथासम्भव दोनों शक्ति गुटों से अलग रहने की नीति अपनायेगा। साथ ही पराधीन देशों और उपनिवेशों की आजादी में भारत दिलचस्पी लेता रहेगा। भारत एक विश्व संघ के निर्माण का भी प्रयास करेगा जिसमें विश्व के

देशों में संघर्ष के स्थान पर आपसी सहयोग और सद्भावना बढ़े। भारत एक ऐसे विश्व के लिए प्रयत्नशील होगा जहां दुनिया के सारे लोगों का स्वतन्त्र सहयोग होगा और कोई एक वर्ग दूसरे वर्ग या समूह का शोषण नहीं करेगा। इस प्रकार श्री नेहरू की विदेशनीति संसार के देशों में मौजूदा स्थिति और घटनाओं पर आधारित थी, जिनके पीछे उनका लम्बे समय तक का अध्ययन और चिन्तन था।

ऐशियाई सम्मेलन

मार्च १६४७ में श्री नेहरू ने 'एशियाई सपर्क सम्मेलन' का आयोजन किया। यह सम्मेलन एशियाई देशों का पहला सम्मेलन था। यह सम्मेलन गैर सरकारी स्तर पर हुआ था, क्योंकि उस समय तक कई एशियाई देश स्वतन्त्र नहीं हुए थे। श्री नेहरू स्वयं इसके कर्ताधर्ता बने। वे सारी दुनिया का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित करना चाहते थे कि इस बदलती हुई दुनिया में एशिया के देशों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। २३ मार्च, १६४७ को श्री नेहरू ने स्वयं इस सम्मेलन का उद्घाटन किया। अपने उद्घाटन भाषण में उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि एशिया के देश अब शतरंज के मोहरों की भांति नहीं चलाए जा सकते। दुनिया के मामलों में उनकी एक नीति होगी। पश्चिम ने एशिया के देशों को अनेक युद्धों और संघर्षों में फंसाया है। तीसरे महायुद्ध की हर समय आशंका है। किन्तु इस अणु-बम के युग में एशिया की शांति बनाये रखने के लिए, एशिया के देशों को नये उपाय सोचने होंगे। और वे उपाय ऐसे होने चाहिए जिनपर अमल किया जाये और जो कारगर सिद्ध हो सकें। एशिया के सारे लोग शांति चाहते हैं, उनके हृदय में शांति की भावना है, उनका दृष्टिकोण शांतिपूर्ण है। अतः एशिया को शांति के पक्ष में सारी दुनिया पर शक्तिशाली प्रभाव डालना होगा। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब एशिया के देश एक हो जाएं। यह सम्मेलन बड़ा सफल रहा और इसका एशियाई देशों पर गहरा प्रभाव पड़ा।

विश्व राजनीति के विधायक

१५ अगस्त, १६४७ को देश आज़ाद हुआ। राष्ट्रीय सरकार बनने पर प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने विदेश विभाग को स्वयं अपने हाथों में लिया। उस समय दुनिया दो बड़े गुटों में बटी हुई थी। हर गुट का यही प्रयास था कि नये स्वतन्त्र देश उनके साथ शामिल हों। दोनों ही गुटों की राजनीतिक विचारधारा और राजनीतिक व्यवस्था एक-दूसरे के एकदम प्रतिकूल थीं। दोनों ही व्यवस्थाओं—पूंजीवाद और

कम्युनिज्म—का यह संघर्ष एक-दूसरे को बलपूर्वक आत्मसात करने का संघर्ष था। दोनों गुटों के नेता अमरीका और रूस थे। दोनों के पास बड़े-बड़े साधन और सैन्य-बल था। दोनों ही विजयी राष्ट्र थे। यूरोप, एशिया और प्रशांत क्षेत्र के सभी देश अपने अस्तित्व के लिए इनमें से किसी एक गुट पर निर्भर थे। दोनों ही नेताओं की यही कोशिश थी कि सारी दुनिया पर उनका प्रभाव फैल जाय। राजनीतिक गुलामी विचारधारा और उसकी आड़ में आर्थिक गुलामी के रूप में अपना विस्तार कर रही थी। इस विस्तार को रोकने के लिए अन्य किसी राष्ट्र को सक्षम नेतृत्व और समुचित साधन सुलभ नहीं थे। हाल ही आजादी पाए देशों की स्थिति और भी कठिन थी।

ऐसे समय में श्री नेहरू ने देश का नेतृत्व संभाला। देश आर्थिक दृष्टि में पिछड़ा हुआ अल्पविकसित वर्ग से भी एक दर्जे नीचे था। शिक्षा बहुत कम थी और जो भी, वह नहीं के बराबर। पिछड़े हुए और कृषि प्रधान देश की जनता कितनी जागरूक हो, उसका दृष्टिकोण परम्परा से बंधा रहता है। अतीत के प्रति उसका अन्ध मोह, धर्म, जाति, वर्ग आदि के प्रति उसकी दृढ़ आस्था उसकी आगे बढ़ने की इच्छा को हमेशा कुण्ठित करते रहे हैं। यदि वह कदम आगे बढ़ाता भी है तो डरता हुआ और डगमगाता हुआ। ऐसी स्थिति जिसके पास है वह और प्राप्त करना चाहता है और जिसके पास नहीं है, वह और भी गिरता जाता है। सभ्यता और संस्कृति के क्षेत्र में असाधारण ऊंचाइयां प्राप्त करने के बाद गुलामी के कारण जर्जर ऐसे देशों का नेतृत्व कोई सुखदायी पुरस्कार नहीं था।

श्री नेहरू के सामने समस्या थी कि उपलब्ध साधनों का इस्तेमाल कर किस प्रकार देश की आर्थिक स्थिति सुधारी जाय और स्वतन्त्रता को कायम रखते हुए लोकतन्त्रीय व्यवस्था को किस प्रकार मजबूत बनाया जाए और किस प्रकार देश को उसके गौरवपूर्ण अतीत की प्रतिष्ठा वापस दी जाए। ये थी राष्ट्रीय समस्याएं परन्तु इनका एक भाग अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच को भी छूता था और वहीं से देश की आजादी को सबसे ज्यादा खतरा था। दोनों ही राष्ट्र गुट इस विशाल देश को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने के लिए विशेष रूप से सक्रिय थे।

श्री नेहरू यह समझते थे कि बिना विज्ञान और टैकनालाजी के देश तरक्की नहीं कर सकता; उत्पादन के आधुनिक तरीके अपनाये बिना देश समृद्धि की दिशा में अग्रसर नहीं हो सकता और देश की ६५ प्रतिशत से अधिक जनता की खुशहाली के लिए आर्थिक विकास के समाजवादी तरीकों को अपनाये बिना कोई ठोस आधार तैयार नहीं किया जा सकता। यही देश की राष्ट्रीय समस्या अन्तर्रा-

ष्ट्रीय रंगमंच की सीमा छूती थी। समाजवादी तरीका देश का कम्युनिज्म खेमे की ओर और इसके बजाय और कोई तरीका पूंजीवादी खेमे की ओर घसीट सकता था। यदि निश्चय में कमजोरी रही होती तो यह निश्चित था कि भारत दोनों गुटों का शीतयुद्ध का अखाड़ा बन जाता और सब कुछ खो बैठता।

राष्ट्रीय समस्या को हल करने के साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में संघर्ष मोल न लेने तथा देश को शीत युद्ध का अखाड़ा बनाने से बचाने के लिए श्री नेहरू ने ऐसी नीति का सहारा लिया, जिसे गुटों से अलग रहने और सहअस्तित्व की नीति का नाम दिया गया। यही नीति है जिसने भारत को अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच का विधायक और निर्णायक बना दिया और जो भारत को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने के लिए प्रयत्नशील थे, स्वयं को भारत के प्रभाव में आने से नहीं रोक सके। श्री नेहरू ने उनकी दिशा मोड़ दी।

पेरिस शिखर

पूर्व-पश्चिम देशों के पेरिस शिखर सम्मेलन में भी सारे बड़े देशों के राष्ट्रपतियों व प्रधानमन्त्रियों ने भाग लिया था। इस सम्मेलन में श्री नेहरू के भाषण का गहरा प्रभाव पड़ा। जहां-कहीं श्री नेहरू जाते थे, एक भीड़ उनके पीछे-पीछे चलती थी। सभी उनका बहुत मान-आदर करते थे। पूर्व और पश्चिम के नेता आकर उनसे सलाह मशविरा करते थे।

रूस के प्रधानमन्त्री ख्रुश्चेव उनसे बड़े आदर से बात करते थे। क्यूबा के राष्ट्रपति श्री फिडेल कास्ट्रो उन्हें 'चाचा' कहते थे। युगोस्लेविया के राष्ट्रपति मार्शल टीटो ने एक से अधिक बार उनसे जलपान की मेज पर बातचीत की। संयुक्त अरब गणराज्य के राष्ट्रपति कर्नल नासिर ने राष्ट्र संघ की साधारण सभा में श्री नेहरू को मंच से अपने वक्तव्य में 'हमारा नेता' कहकर संबोधित किया।

इस अवसर पर एशिया व अरब देशों के प्रतिनिधियों की अलग से बैठक हुई। जिसमें पेरिस शिखर के बिना किसी निश्चय पर पहुंचे हुए, भंग हो जाने पर खेद प्रगट करना था और सम्बन्धित देशों विशेषकर रूस और अमरीका से यह निवेदन करना था कि वे समझौता वार्ता फिर से शुरू कर दें, गुट के तत्कालीन अध्यक्ष, श्री ऊथांट परेशान थे कि क्या किया जाए। उन्होंने फौरन विभिन्न देशों के नेताओं से सलाह-मशविरा किया। उसके बाद उन्होंने एशिया अफ्रीका के देशों की ओर से खड़े होकर श्री नेहरू से निवेदन किया कि वे सभा की अध्यक्षता करें। श्री नेहरू ने प्रस्ताव रखा कि पेरिस शिखर के बिना किसी निश्चय पर पहुंचने से पहले ही भंग हो जाने

पर खेद है और अमरीका और रूस आपसी समझौता वार्ता जारी रखें। प्रस्ताव अफ्रीका-एशिया के सभी प्रतिनिधियों ने स्वीकार किया और यह निश्चय किया कि श्री नेहरू ही इस प्रस्ताव को राष्ट्रसंघ की साधारण सभा में प्रस्तुत करें। इस प्रकार श्री नेहरू को एशिया और अफ्रीका के देशों का नेतृत्व हासिल करने के लिये किसी वोट की आवश्यकता नहीं पड़ी। उन्होंने यह नेतृत्व अपनी बुद्धि कौशल, अपनी दृष्टि, अपनी शांति प्रियता और अपनी सद्भावना के बल पर ही प्राप्त किया।

बांडुंग सम्मेलन

श्री नेहरू जी अफ्रीका के देशों की स्वाधीनता और उनके विकास के बारे में सतत प्रयत्नशील रहे। वे चाहते थे कि एशिया और अफ्रीका के सारे गुलाम देश शीघ्र स्वतन्त्र किये जाए। उन्होंने अफ्रीका के देशों से साम्राज्यवाद को समाप्त करने के लिए उसका जोरदार समर्थन किया। वे यह जानते थे कि विश्व शांति के लिए एशिया और अफ्रीका के देशों में आपसी सहयोग, सद्भावना और एकता का होना बहुत आवश्यक है। वे यह सोचते थे कि एशिया और अफ्रीका के नये स्वतन्त्र देश आपस में एक-दूसरे की सहायता करें और एक-सी नीति अपनाएं क्योंकि वे जानते थे कि इस एकता का संयुक्त राष्ट्रसंघ में किये जाने वाले शांति प्रयत्नों पर बड़ा प्रभाव होगा।

दिसम्बर १९५४ में भारत, पाकिस्तान, बर्मा, श्रीलंका और इंडोनेशिया के प्रधान मंत्रियों की बैठक हुई, जिसमें यह निश्चय किया गया कि एशिया अफ्रीका सम्मेलन आयोजित किया जाए। एशिया अफ्रीका के देशों की सामाजिक, आर्थिक सांस्कृतिक व अन्य सम्बन्धित समस्याओं और विश्व शांति के सवाल पर विचार करना ही इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य था। इस सम्मेलन का आयोजन इंडोनेशिया में १८ अप्रैल, १९५५ में हुआ, जो बांडुंग सम्मेलन के नाम से प्रसिद्ध है।

इस सम्मेलन में इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति डा० सुकर्णो और श्री नेहरू के [illegible] में बड़ी [illegible] निर्भीक। डा० सुकर्णो ने सम्मेलन का उद्घाटन करते समय, इस बात पर जोर दिया कि दुनिया के किसी भी देश गुलाम हैं तब तक उन्हें स्वतन्त्र नहीं किया जाता तब तक शांति नहीं मिल सकती। उन्होंने याद दिलाया कि मनुष्य ने [illegible] है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि [illegible] के विकास में जो [illegible] उपनिवेशवाद के बन्धन [illegible] है। [illegible]। [illegible]

सद्भावना बढ़ानी है। श्री नेहरू ने डा० मुकर्जी के प्रेरणा भरे भाषण की प्रशंसा की। उन्होंने सम्मेलन में भाषण देते हुए कहा कि एशियाई देशों में नई जागृति पैदा हो रही है और दुनिया में एशियाई देशों का प्रभाव बढ़ रहा है। एशिया दुनिया में यही चाहता है कि भविष्य में किसी प्रकार का नियन्त्रण बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। एशिया और अफ्रीका में अब कोई जी-हुजूरी वाला देश नहीं होगा। उन्होंने एशियाई अफ्रीकी देशों से शक्ति गुटों से अलग रहने और स्वाधीनता, शांति व आर्थिक प्रगति की स्वतन्त्र नीति अपनाने पर बल दिया। साथ ही उन्होंने इन देशों में एकता बनाये रखने की अपील की। श्री नेहरू की इस भावना को बल मिला कि एशियाई-अफ्रीकी देशों की संघटन शक्ति दृढ़ हो, जिससे वे देश राष्ट्र संघ में विश्व शान्ति के प्रयत्नों में अपना पूरा जोर लगा सकें।

सह-जीवन

श्री नेहरू बहुत पहले इस नतीजे पर पहुंच गये थे कि सैनिक गठ-बन्धन विश्व शान्ति में सबसे बड़ी रुकावट है। सैनिक गठ-बन्धन से देशों में तनाव बढ़ता है, एक-दूसरे का डर लगा रहता है और देश अपने-आपको सुरक्षित महसूस नहीं करते। सैनिक गठ-बन्धन से आपसी सहयोग और सद्भावना के वातावरण में रुकावट होती है और एक प्रकार शीत युद्ध चलता रहता है। यह शीत युद्ध किसी समय भी वास्तविक युद्ध में बदल सकता है। शीत युद्ध के कारण, नये स्वतन्त्र और अविकसित देशों का आर्थिक विकास नहीं हो पाता। इसके विपरीत सैनिक गठ-बन्धन के कारण, उन्हें आवश्यकता से कहीं अधिक धन सुरक्षा के उपायों पर करना पड़ता है, जिससे कोई लाभ नहीं पहुंचता। इस प्रकार गरीब देश गरीब बने रहते हैं और शक्तिशाली देश और अधिक शक्तिशाली होते जाते हैं।

दक्षिण पूर्वी एशिया और बगदाद संधि संगठनों का श्री नेहरू ने घोर विरोध किया। इन संधियों में बंधे देशों की बैठकों में हमेशा सुरक्षा उपायों के बारे में ही चर्चा होती रहती और वे इस बात में प्रयत्नशील रहते थे कि नये आजाद देश भी इसी प्रकार के सुरक्षा संगठनों में शामिल हो जाएं। इससे, बजाय सुरक्षा के उल्टा देश की आजादी को एक नया डर बना रहता है। साथ ही इन संधि-संगठनों में देशों में यदि आपसी झगड़े हो जायें या उस देश में आन्तरिक घटना हो जायें तो वे देश उनमें हस्तक्षेप कर सकते हैं। इस प्रकार इन संधियों में किसी देश विशेष की स्वतन्त्रता, अखण्डता और सार्वभौमिकता पर प्रभाव पड़ता है।

इन सब परिस्थितियों को देखते हुए, श्री नेहरू ने तटस्थ नीति अपनाई।

उन्होंने यह घोषणा की कि सैनिक संगठनों से या किसी देश पर अनुचित प्रभाव डालने से शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। और न युद्ध से ही शान्ति स्थापित हो सकती है। यदि दोनों शक्तिशाली गुट इस बात को मानलें कि युद्ध द्वारा विनाश ही सम्भव है, शान्ति नहीं, तो फिर सह-अस्तित्व ही शान्ति का एकमात्र उपाय रह जाता है।

'संयुक्त राष्ट्र संघ' की मुख्य सभा में श्री नेहरू ने २० दिसम्बर, १९५६ को भाषण देते हुए, यह कहा :

"शीत युद्ध का अर्थ है लोगों के दिमाग में युद्ध के विचार को बढ़ावा देना। अगर हम लोगों के दिमाग में युद्ध के विचार को बढ़ावा देते रहेंगे तो इस बात का हमेशा खतरा बना रहेगा कि यह लोगों के दिमागों से बाहर निकल कर वास्तविक रूप धारण कर ले। मैं यह बात पूरे जोर से कहना चाहता हूं कि शीत युद्ध की विचारधारा बुनियादी तौर पर गलत है। यह अनैतिक है। यह शांति और सहयोग की विचारधारा के विरुद्ध है। उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जो साधन अपनाये जाते हैं, उनका भी उतना ही महत्व है। अगर साधन गलत हैं, तो उद्देश्य भी सही नहीं होगा, चाहे जितना हम उसको सही चाहें। इसलिए यहां विश्व सभा में, जिसकी ओर दुनिया के सारे देश देखते हैं, मैं आशा करता हूं कि एक वातावरण कायम हो जाये जिससे दुनिया के सारे देश अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के लिए सही रास्ता अपनाएं।"

धीरे-धीरे श्री नेहरू का शांतिपूर्ण सह-जीवन का सिद्धान्त जड़ पकड़ता गया। विश्व शान्ति की शक्तियों ने उनकी नीति की सराहना की। भारत की शांति नीति ने अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच पर श्री नेहरू की प्रतिष्ठा को सबसे ज्यादा बढ़ाया। श्री नेहरू की इस नीति के कारण भारत की आवाज सारी दुनिया की राजधानियों में आदर के साथ सुनी जाती है। श्री नेहरू का उद्देश्य भारत के लिए दुनिया में उपयुक्त व सम्मानपूर्ण स्थान हासिल करना था ताकि वह विश्व शांति के लिए अपना पूर्ण योग दे सके। शान्तिपूर्ण सह-जीवन के आधार पर ही, श्री नेहरू ने पंचशील के सिद्धान्त बनाए। यह सिद्धान्त २९ अप्रैल, १९५४ को भारत और चीन के समझौते में पहली बार स्वीकार किये गए। इसके बाद २८ जून, १९५४ को रूस ने इन सिद्धांतों को स्वीकार किया। १८ अप्रैल, १९५५ के बांडुंग सम्मेलन में, इन सिद्धान्तों का स्वागत किया गया, जिसका सारे विश्व पर प्रभाव पड़ा। पंचशील के सिद्धान्त का यह अर्थ था कि कोई भी देश और वहां की जनता अपने विकास का मार्ग अपनी ऐतिहासिक और भूगोलिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर, बिना किसी बाहरी देश के दखल के, अपने भाग्य निश्चित करे। इसकी यह विशेषता

थी कि किसी भी देश का कैसा भी दृष्टिकोण हो, उसकी प्रगति का मार्ग कैसा भी हो, किन्तु उद्देश्य में समानता हो सकती है।

दिसम्बर १९५७ में संयुक्त राष्ट्रसंघ ने शांतिपूर्ण सह-जीवन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। यह प्रस्ताव भारत, स्वीडन और यूगोस्लेविया ने रखा था। पंचशील के सिद्धान्त इस प्रकार हैं :

१. एक देश का दूसरे देश की सार्वभौमिकता और अखण्डता का सम्मान करना।
२. एक देश को दूसरे देश पर आक्रमण न करना।
३. एक देश को दूसरे देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना।
४. एक देश को दूसरे देश के साथ समानता का बर्ताव करना, और
५. शान्तिपूर्ण सहजीवन में विश्वास रखना।

पंचशील के सिद्धान्तों को विश्वव्यापी समर्थन प्राप्त हुआ। अब आवश्यकता इस बात की थी कि इन सिद्धान्तों पर सच्चाई के साथ अमल किया जाए। इसके लिए सहनशीलता और शान्तिपूर्ण वातावरण बनाये रखना जरूरी था। पंचशील के यह सिद्धान्त आपसी सद्भावना और मित्रता पर आधारित थे और हमारे बीच काफी समय तक युद्ध को बचाने में सफल हुए।

निःशस्त्रीकरण की ओर

श्री नेहरू का दृष्टिकोण बहुत व्यापक था। वह एक युद्ध-विहीन विश्व की कल्पना करते थे। वे पीड़ित मानवता के एक प्रकार से मुक्तिदाता थे। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि मानव जाति का सर्वांगीण विकास हो। इसी से संसार में सुख और शान्ति रह सकती है। श्री नेहरू ने अमरीका और रूस दोनों बड़े देशों का दौरा किया। वे जहां भी गए उन्होंने जनता में शान्ति की इच्छा देखी। दोनों देशों से उन्होंने पूर्ण निशस्त्रीकरण की ओर कदम बढ़ाने की अपील की। भारत के प्रयत्नों का संयुक्त राष्ट्रसंघ में अच्छा परिणाम हुआ। सन् १९५३ में संयुक्त राष्ट्रसंघ की निःशस्त्रीकरण उप-समिति बनाई गई जिसमें भारत ने महत्त्वपूर्ण भाग लिया और निःशस्त्रीकरण की दिशा में अनेक सुझाव दिए। क्योंकि यह एक कठिन काम था, इस कारण श्री नेहरू ने इसमें आंशिक सफलता का भी स्वागत किया।

सन् १९५७ में श्री नेहरू ने रूस और अमरीका दोनों से कहा कि हथियारों की होड़ और अणुबम जैसे भीषण अस्त्रों के निर्माण से सारी दुनिया विनाश की ओर ही जाएगी और सभी देश इस भयंकर आग की लपेट में आ जाएंगे। रूस और

थी कि किसी भी देश का कैसा भी दृष्टिकोण हो, उसकी प्रगति का मार्ग कैसा भी हो, किन्तु उद्देश्य में समानता हो सकती है।

दिसम्बर १९५७ में संयुक्त राष्ट्रसंघ ने शांतिपूर्ण सह-जीवन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। यह प्रस्ताव भारत, स्वीडन और यूगोस्लेविया ने रखा था। पंचशील के सिद्धान्त इस प्रकार हैं :

१. एक देश का दूसरे देश की सार्वभौमिकता और अखण्डता का सम्मान करना।
२. एक देश का दूसरे देश पर आक्रमण न करना।
३. एक देश को दूसरे देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना।
४. एक देश को दूसरे देश के साथ समानता का बर्ताव करना; और
५. शान्तिपूर्ण सहजीवन में विश्वास रखना।

पंचशील के सिद्धान्तों को विश्वव्यापी समर्थन प्राप्त हुआ। अब आवश्यकता इस बात की थी कि इन सिद्धान्तों पर सच्चाई के साथ अमल किया जाए। इसके लिए सहनशीलता और शान्तिपूर्ण वातावरण बनाये रखना जरूरी था। पंचशील के यह सिद्धान्त आपसी सद्भावना और मित्रता पर आधारित थे और हमारे बीच काफी समय तक युद्ध को बचाने में सफल हुए।

निःशस्त्रीकरण की ओर

श्री नेहरू का दृष्टिकोण बहुत व्यापक था। वह एक युद्ध-विहीन विश्व की कल्पना करते थे। वे पीड़ित मानवता के एक प्रकार से मुक्तिदाता थे। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि मानव जाति का सर्वांगीण विकास हो। इसी से संसार में सुख और शान्ति रह सकती है। श्री नेहरू ने अमरीका और रूस दोनों बड़े देशों का दौरा किया। वे जहां भी गए उन्होंने जनता में शान्ति की इच्छा देखी। दोनों देशों से उन्होंने पूर्ण निशस्त्रीकरण की ओर कदम बढ़ाने की अपील की। भारत के प्रयत्नों का संयुक्त राष्ट्रसंघ में अच्छा परिणाम हुआ। सन् १९५३ में संयुक्त राष्ट्रसंघ की निःशस्त्रीकरण उप-समिति बनाई गई जिसमें भारत ने महत्त्वपूर्ण भाग लिया और निःशस्त्रीकरण की दिशा में अनेक सुझाव दिए। क्योंकि यह एक कठिन काम था, इस कारण श्री नेहरू ने इसमें आंशिक सफलता का भी स्वागत किया।

सन् १९५७ में श्री नेहरू ने रूस और अमरीका दोनों से कहा कि हथियारों की होड़ और अणुबम जैसे भीषण अस्त्रों के निर्माण से सारी दुनिया विनाश की ओर ही जाएगी और सभी देश इस भयंकर आग की लपेट में आ जाएंगे। रूस और

अमरीका ही सारी मानवता को विनाश से बचाने में और भय से मुक्ति दिलाने में समर्थ हैं।

सन् १९६१ में श्री नेहरू ने अमरीका का दौरा किया। राष्ट्रपति कैनेडी ने उनका हार्दिक स्वागत किया। उत्तर में श्री नेहरू ने यह विचार प्रकट किए : "आज सारी दुनिया हमारी पड़ोसी है और महाद्वीपों और देशों के पुराने विभाजन का महत्त्व कम होता जा रहा है। शान्ति और स्वतन्त्रता एक-दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते और ज्यादा अरसे तक दुनिया, कुछ आज़ाद और कुछ गुलाम नहीं रह सकती। इस अणु युग में, शांति मानवता की रक्षा के लिए कसौटी बन गई है।" उसी वर्ष श्री नेहरू ने रूस का दौरा किया जहां श्री ख्रुश्चेव ने उनका स्वागत किया। श्री नेहरू ने अपने दौरे के बाद, मास्को में कहा :

"मैं सोवियत संघ में जहां कहीं गया, मैंने सर्वत्र शांति के लिए उत्कट कामना व्याप्त पाई।"

श्री नेहरू ने रूस के इक-तरफा ढंग से उठाये गए, सशस्त्र फौजों में कटौती, फौजी बजटों में कटौती, अणुबम के परीक्षणों को रोकना, आदि का हार्दिक स्वागत किया।

राष्ट्रमंडल के नेता

श्री नेहरू ने इसी दृष्टिकोण को रखते हुए, आज़ादी मिलने से पहले ही यह घोषणा की थी कि स्वतन्त्र भारत राष्ट्रमंडल का सदस्य रहेगा। इंग्लैंड के प्रधान मंत्री ने श्री नेहरू की इस घोषणा का स्वागत किया था। वास्तव में यह एक अचम्भे की बात थी कि साम्राज्यशाही और सैनिक संगठनों का घोर विरोधी होते हुए भी, उन्होंने राष्ट्रमंडल के सम्मेलनों में भाग लेना स्वीकार किया।

श्री नेहरू के इस कदम से अलग-अलग विचारधारा वाले और सैनिक गुटबंदी में बंधे देशों में तनाव कम हुआ। उनके सही नेतृत्व के कारण, राष्ट्रमंडल के देशों में आपसी सहयोग, सह-जीवन और मित्रता की भावना को बल मिला। इन सम्मेलनों में, श्री नेहरू ने रंग भेद का घोर विरोध किया और गुलाम देशों को आज़ादी देने की प्रेरणा दी। उन्हीं के कारण राष्ट्रमंडल संगठन आज तक चला आ रहा है और उसमें समय-समय पर सही दिशा में परिवर्तन हुए हैं।

श्री नेहरूजी के व्यक्तित्व के कारण, इंग्लैंड और भारत में पुराना मन-मुटाव समाप्त हो गया और आपसी विश्वास और मित्रता की भावना बढ़ती गई। राष्ट्रमंडल के देश भारत को दक्षिण पूर्वी एशिया का शांति स्तंभ समझने लगे। लार्ड

ऐटली के शब्दों में 'श्री नेहरू बड़े यूरोपीय थे और बड़े भारतीय थे। अगर वे राष्ट्र-मंडल में न होते तो राष्ट्रमंडल समाप्त हो जाता।"

अरब के देशों पर प्रभाव

अरब के बहुत से देश, उस समय तक आज़ाद नहीं हुए थे। भारत के आज़ाद होते ही, वे श्री नेहरू को अपना मित्र और हमदर्द समझने लगे। भारत और अरब का संपर्क बहुत पुराने समय से चला आता था। इसके साथ गांधीजी और श्री नेहरू के तेजस्वी व्यक्तित्व का इन देशों पर गहरा प्रभाव पड़ा। अरब के देश यह बात अच्छी तरह समझते थे कि आज़ाद होने की समस्या कठिन है, लेकिन देश की गरीबी मिटाने की समस्या और उसके सामाजिक व आर्थिक विकास की समस्याएं उससे भी अधिक कठिन हैं। भुखमरी मिटाने की समस्या के लिए केवल ईमानदारी और सिद्धान्तों में निष्ठा ही काफी नहीं, इसके लिए पूर्ण सूझबूझ, दूरदर्शिता, सक्रियता और वास्तविकता की बहुत आवश्यकता है। यह गुण श्री नेहरू में पूर्णरूप से थे। उनकी वास्तविकता में पूर्व की आदर्शवादिता भी मिली हुई थी। श्री नेहरू का आदर्शवाद और यथार्थवाद का यह अनोखा सम्मिश्रण, अरब देशों के नेताओं को बहुत पसन्द था। भारतवासियों की तरह अरब के लोग भी अपने पुराने आदर्शों को बहुत महत्त्व देते हैं।

जब अरब देश आज़ाद हुए, तो उन्होंने श्री नेहरू की ओर ही देखा। जिस तरीके से श्री नेहरू ने भारत की समस्याओं को सुलझाया था, वे उनके लिए एक मिसाल थी। अरब देशों पर श्री नेहरू के व्यक्तित्व के साथ उनका भारत की जनता और सारी दुनिया की मानवता के प्रति जो आस्था थी, उसका अरब नेताओं पर गहरा प्रभाव हुआ था। इस कारण श्री नेहरू एशिया, अफ्रीका के नये स्वतन्त्र देशों की आशाओं और आकांक्षाओं के प्रतीक बन गए। उन्होंने श्री नेहरू को अपना पथ-प्रदर्शक मान लिया। उन्होंने श्री नेहरू के प्रजातन्त्र पर आधारित समाजवाद के सिद्धांत को अपनाया। अरब देशों ने श्री नेहरू की धर्म-निरपेक्षता की भी सराहना की और उसे भी अपनाया। अरब देशों के इतिहास में धार्मिक कट्टरता का कहीं भी चिन्ह नहीं है। अरब के देशों ने अपनी नई आज़ादी को स्थायी बनाने का दृढ़ निश्चय किया था। लेकिन मध्य पूर्व की समस्याएं ऐसी टेढ़ी थीं कि उनमें कई खतरों का सामना करना था। श्री नेहरू ने उन्हें फिर एक नीति सुझाई और वह थी दोनों गुटों से अलग रहने की नीति। अपने इन सिद्धान्तों के कारण, श्री नेहरू और अरब नेता के बीच आपस में मित्रता और सद्भावना की एक मज़बूत

और हमला तुरन्त खत्म हुआ, जिसका दुनिया पर बड़ा प्रभाव हुआ। २० दिसम्बर १९५६ को श्री नेहरू ने संयुक्त-राष्ट्र महासभा में महत्वपूर्ण भाषण दिया। उन्होंने कहा, "इस वर्ष खासतौर से संयुक्त-राष्ट्र-संघ ने पहले की अपेक्षा संसार की घटनाओं में अधिक महत्व लिया है। यदि संयुक्त-राष्ट्र कोई आश्चर्यजनक कार्य न भी करे तो भी संयुक्त-राष्ट्र के मौजूद रहने का तथ्य मात्र ही दुनिया के लिए खास महत्व रखता है। परन्तु हाल ही में संयुक्त-राष्ट्र ने दिखा दिया है कि वह समस्याओं का सामना साहस के साथ कर सकता है और समस्या का अन्तिम हल ढूंढ सकता है।"

श्री नेहरू ने संयुक्त-राष्ट्र संगठन को विश्वशान्ति और मानव विकास के लिये बहुत महत्वपूर्ण माना। उनको यह आशा थी कि भविष्य में संयुक्त-राष्ट्र संगठन विश्व शान्ति के लिए और भी ठोस कदम उठायेगा और पहिले से अधिक सक्रिय भी सिद्ध होगा।

भारत-चीन सीमा गतिरोध

अगस्त, १९३९ में श्री नेहरू दो सप्ताह के लिए चीन गए। यह दो सप्ताह उनके लिए बड़े स्मरणीय थे। न सिर्फ व्यक्तिगत रूप से, बल्कि भारत और चीन के भावी सम्बन्धों के लिए। श्री नेहरू की यह बड़ी इच्छा थी कि चीन और भारत एक-दूसरे के अधिक निकट आएं। जब श्री नेहरू भारत लौटे तो चीन और चीनी जनता प्रत्येक के प्रशंसक बन गए। चीन की महान् परम्परा और संस्कृति थी। उन्हें यह कल्पना भी न थी कि दुर्दिन इन पुरातन लोगों की आत्मा को कुचल देगा।

और शीघ्र ही चीन में आन्तरिक शान्ति हुई जिसके फलस्वरूप चीन ने साम्यवाद को अपनाया। चीन हमारा सबसे नजदीक का पड़ौसी है। उसमें लड़ाई की बात भारतवासी कभी भी नहीं सोच सकते थे। श्री नेहरू तो यह सोचते थे कि चीन को साथ लेकर विश्व शान्ति के प्रयत्नों को अधिक प्रभावशाली बनाया जाय। इसी दृष्टि से भारत ने चीन को संयुक्त-राष्ट्र का सदस्य बनाने का हर अवसर पर प्रयत्न किया। सन् १९५४ में भारत ने चीन के साथ एक संधि की जिसमें दोनों देशों ने पंचशील के सिद्धान्तों में आस्था प्रकट की। इसके बाद, एशियाई अफ्रीकी देशों के बांडुंग सम्मेलन में चीन ने अन्य देशों के साथ प्रतिज्ञा की थी जिसमें यह बातें शामिल थीं :—

(१) सभी देशों की प्रभुसत्ता और क्षेत्र की अखंडता का आदर करना; (२) किसी भी देश की प्रादेशिक अखंडता और राजनीतिक स्वतन्त्रता के विरुद्ध आक्रमण

पर शक्ति प्रयोग करने अथवा उसकी धमकी देने से बचना; और (३) सभी अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का समाधान। बातचीत, मध्यस्थता, पंच-निर्णय या न्यायालय द्वारा निर्णय—जैसे शान्ति पूर्ण तरीकों या सम्बन्ध पक्षों की पसन्द के शान्तिपूर्ण तरीकों से, जो संयुक्त-राष्ट्र संघ के अधिकारपत्र के अनुकूल पड़े—प्राप्त करना।

परन्तु चीन एक धोखेबाज पड़ोसी निकला। उसने एक बड़े सत्य को हत्या करने की पूर्ण कोशिश की। भारत ने अपने सिद्धान्तों के अनुसार सीमा-विवाद को शान्तिपूर्ण वार्ता से हल करने की नीति को अपनाया। दोनों देशों के उच्च अधिकारियो ने आपस मे बैठकर सीमा सम्बन्धी रिपोर्ट तैयार की। भारत का पक्ष सत्य पर आधारित था। भारत ने ठोस प्रमाण सामने रख दिये। सारी दुनिया ने हमारे पक्ष को सत्य माना। किन्तु चीन चोरी-छिपे और खुलेआम सन् १९५७ से लद्दाख क्षेत्र मे घुस आया और उसने धीरे-धीरे १२,००० वर्गमील भारतीय इलाके पर कब्जा कर लिया।

श्री नेहरू के विचार मे "सवाल कुछ छोटे-मोटे इलाकों के इधर-उधर किये जाने का नहीं था, बल्कि पड़ोसी देशों के बीच अन्तर्राष्ट्रीय आचरण के स्तर का था, और यह था कि संसार अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का सिद्धान्त लागू होने देगा।"

८ सितम्बर १९६२ को चीन ने अचानक भारतीय सीमा पर आक्रमणात्मक घुसपैठ की और २० अक्तूबर को चीनी सेनाओं ने बड़े पैमाने पर भारत पर हमला कर दिया। चीन के इस आक्रमण से श्री नेहरू के दिल को गहरी ठेस लगी। जिस देश के साथ भाईचारे का नाता रखा, उसी ने पीठ पर छुरे से हमला किया। इस तथ्य से वे बेहद दुःखी हुए। चीन की इस चुनौती का, श्री नेहरू के आवाहन पर चीनी आक्रमण का सामना करने के लिए, सारी जनता एक सूत्र मे बंध गई। उनका अन्तरतम तक हिल गया। वास्तव मे पहले कभी देश मे अपने सम्मान, एकता और स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए इतना आक्रोश और दृढ निश्चय कभी नहीं दिखाई दिया। इसके परिणामस्वरूप २१ नवम्बर, १९६२ को चीन ने अपनी सुविधा के अनुसार युद्ध विराम की घोषणा की। भारत ने इसमे कोई बाधा नहीं पहुंचाई। पर अपनी प्रतिष्ठा और आत्म सम्मान को देखते हुए श्री नेहरू ने यह निश्चय किया कि भारत चीन द्वारा मनमाने ढंग से निश्चित की गई रेखाओं से पीछे हटने का चीनी प्रस्ताव स्वीकार नहीं करेगा। सारे देश ने श्री नेहरू की इस बात का पूरा समर्थन किया। दुनिया के सारे देशों ने, यहां तक कि साम्यवादी रूस ने भी भारत के पक्ष का समर्थन किया। 'कोलम्बो सम्मेलन' के प्रस्तावों को भारत ने मान लिया; लेकिन

चीन ने इनको ठुकरा दिया। ऐसे समय में श्री नेहरू द्वारा अपनाये गये पंचशील के सिद्धान्तों और उनकी विदेशनीति की सार्थकता पर देश मे कुछ हलकी-सी आवाज उठी किन्तु चीन की धोखेबाजी के कारण पंचशील के सिद्धान्तों को जो वास्तविकता से रहित या असफल नही कहा जा सकता। दुनिया के सामने श्री नेहरू ने अपना पक्ष मजबूती के साथ रखा और उनको सारे संसार के देशों की सहानुभूति प्राप्त हुई।

भारत-पाकिस्तान सम्बन्ध

आजादी मिलने के साथ ही देश मे अनेक समस्याए अचानक सामने खड़ी हो गई। इनमे सबसे बड़ी समस्या पाकिस्तान से आने वाले विस्थापितों की थी। श्री नेहरू ने इस समस्या को हल करने में बड़ी दृढता से काम किया और उसमे काफी सफलता हुई। उसी के साथ देशी राज्यों की भारत से मिलने की समस्या उठी जिसके साथ कश्मीर और हैदराबाद की भी समस्या थी। इन सब समस्याओं पर श्री नेहरू ने विजय प्राप्त की। सन् १९५१ मे भारतीय गणराज्य में सबसे पहले लोकशाही के आधार पर चुनाव हुए। यह चुनाव वयस्क मत के आधार पर शान्ति के साथ सम्पन्न हुए। सारी दुनिया भारत की इस महान् सफलता को देखकर अचम्भे में पड़ गई। भारत ने दुनिया के सारे देशों के सामने यह सिद्ध कर दिया कि वह वास्तविक अर्थ मे लोकशाही देश और यहा पर जनता की लोकशाही सरकार है, जो यहां की ४५ करोड़ जनता की भलाई के लिए है और वह कल्याण के काम जनता द्वारा ही होने हैं। इसके बाद भारत मे दो आम चुनाव और इसी प्रकार हो चुके हैं और प्रजातंत्र की नीव भारत की मिट्टी में दृढ़ता के साथ जम गई है।

उधर पाकिस्तान मे एक भी आम चुनाव नही हुआ। वहा पर पहले फौजी शासन था। फिर बेसिक डैमोक्रेसी शुरू हुई। यह वही चीज है जो अंग्रेजी सरकार ने पहले हमारे देश को दी थी, वह अब पाकिस्तान में आ गई है। श्री नेहरू ने भारत पाकिस्तान सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से इस प्रकार रखा है: "दोनों हुकूमतों मे बुनियादी फर्क है। एक जम्हूरियत की हुकूमत है, दूसरी बिलकुल फौजी हुकूमत है। उनको इख्तियार है जैसी हुकूमत वे चाहें रखें। लेकिन उन्हें हिन्दुस्तान से अजहद दुश्मनी दिखाई देती है। क्या बात है कि हिन्दुस्तान में जो बात होती है, वह उन्हें नागवार गुजरती है। बुनियादी बात तो यह है कि पाकिस्तान के बड़े बुजुर्गों के दिमाग मे हिन्दुस्तान से दुश्मनी का बुखार मौजूद है। उसके साथ यह बात भी उन्हें नागवार गुजरती है कि हिन्दुस्तान तरक्की करता है। इसी से उन्होंने कश्मीर का सवाल उठाया। कश्मीर का सवाल नहीं होता, तो दस और सवाल

उठते। अगर हिन्दुस्तान की ताकत बढ़ रही है तो वह इसलिए कि हम कई वर्षों से बेहद मेहनत कर रहे हैं। हम पंचवर्षीय योजनाओं और लोहे वगैरह के कारखाने चला रहे हैं। हम शान्तिप्रिय कौम हैं, हम अमनपसंद कौम हैं। हम नहीं चाहते कि हमारा वक्त और बातों में जाया हो। लेकिन हम किसी किस्म का हमला किसी नाम से कश्मीर के ऊपर नहीं बरदाश्त करेंगे। ऐसा हुआ तो हम उसका मुकाबला करेंगे, उसको हरायेंगे। और हम इन बातों को बरदाश्त नहीं करेंगे।"

इसके साथ ही, श्री नेहरू ने पाकिस्तान सरकार से यह बार-बार कहा कि एक समझौता इस प्रकार का दोनों देशों में हो कि किसी सवाल पर भी दोनों देश आपस में युद्ध नहीं करेंगे। लेकिन उन्होंने हमेशा ऐसा समझौता करने से मना कर दिया। क्योंकि वे सोचते थे कि युद्ध की धमकी देकर भारत को कुछ न कुछ दबाया जा सकता है। लेकिन पाकिस्तान के अधिकारी यह नहीं सोचते कि भारत जैसे देश इस तरह की धमकियों से नहीं डिगते हैं। श्री नेहरू और भारतवासियों की यही इच्छा थी कि पाकिस्तान की तरक्की हो और दोनों पड़ोसी देशों में मित्रता हो और आपसी सहयोग हो। भारत की यह हमेशा इच्छा रही है कि संसार के सब देश उन्नति करें। और विशेषकर पाकिस्तान उन्नति करे। भारत कभी नहीं चाहता कि उसका पड़ोसी देश गरीब रहे। लेकिन पाकिस्तान की नीति ऐसी नहीं रही। विस्तारवादी नीति किसी भी देश के पिछड़ेपन का चिह्न है।

श्री नेहरू को इस बात से बहुत दुःख था कि पाकिस्तान और देशों के गुट बनाने में फंसा हुआ है। श्री नेहरू अन्त तक भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों के सुधार का भरसक प्रयत्न करते रहे। उनको आशा थी कि पाकिस्तान अन्त में सही रास्ते पर आ जायेगा और राजनीति के ऊंचे आदर्शों पर चलेगा।

● ● ●

"हमें एक बहादुर कौम चाहिए, निडर कौम चाहिए, ऐसी कौम चाहिए जो एक-दूसरे को भाई समझ सके।

—जवाहरलाल नेहरू

६

बौद्धिकता के जनक

"मानव के रूप में श्री नेहरू की सुकुमारता, भावना की अद्वितीय कोमलता और महान् एवं उदार प्रवृत्तियों का अद्भुत सम्मिश्रण था।" वे विख्यात लेखक थे। उनके आत्म-चरित्र में उनके जीवन और उनके संघर्षों की जो कहानी दी गई है, उसमें न तो आत्म-प्रतारणा का स्पर्श है और न नैतिक अहंमान्यता का। वह हमारे युग की अद्भुत पुस्तक है।

उनके जीवन और उनके कार्यों का गहरा प्रभाव हमारे चिन्तन, हमारे सामाजिक संगठन और हमारे बौद्धिक विकास पर पड़ा। श्री नेहरू के सक्रिय और सार्वदेशिक नेतृत्व के बिना भारत के स्वरूप का चिन्तन लगभग असम्भव है। हमारे देश के इतिहास का एक युग समाप्त हो गया है।"

—राष्ट्रपति राधाकृष्णन्

श्री नेहरू के लिए, उनका राजनैतिक जीवन यद्यपि महान् था, किन्तु जीवन में इतना महत्त्वपूर्ण न था। उनके लिये यह कोई लक्ष्य न था। उनके लिए तो यह केवल देश की जनता-जनार्दन की सेवा करने का एक तरीका था। उनकी सेवा-भावना केवल भारतीय जनता तक ही सीमित न थी, बल्कि संसार के सारे प्राणियों के लिए थी। वे युद्धरहित विश्व की कल्पना करते थे। वे मानवमात्र के हितों के पोषक थे। वे बल-प्रयोग के सर्वथा विरुद्ध थे। वे सहिष्णुता, प्रेम और बन्धुत्व द्वारा मानव को प्रतिष्ठित करना चाहते थे। उनकी यह महत्वाकांक्षा थी कि वह हर व्यक्ति की आंख से उनका आंसू पोछें, हर दुःखी मानव का दुःख दूर करें और जाति रंग, भाषा आदि के भेद को मिटाकर सबको समान अधिकार प्राप्त हो।

नास्तिकता में धार्मिकता

वे धर्म को उन शब्दों में नहीं मानते थे जिनमें रूढ़िवादी श्रद्धा रखते थे।

किन्तु सारे धर्मों की अच्छाइयां उनके जीवन का अंग बन गई थीं। उन्होंने स्वयं यह प्रश्न किया :

"प्रगति, आदर्श, सिद्धांत, मनुष्य को भलाई करना और उसके भाग्य में निष्ठा रखना—क्या इन सबका ईश्वर में निष्ठा के साथ सम्बन्ध नहीं है ?"

उन्होंने आगे कहा, "मैं खासतौर पर इस दुनिया में और इस जीवन में—दूसरी दुनिया या दूसरे जीवन में नहीं—दिलचस्पी रखता हूं। क्या आत्मा नाम की कोई चीज है या मौत के बाद कोई दूसरी जिन्दगी है, यह मैं नहीं जानता और यह सवाल महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं; किन्तु इनसे मुझको जरा भी तकलीफ नहीं होती'''।"

"मैंने जीवन को ज्यादा से ज्यादा अनुभव के रूप में माना है जो लगातार दिलचस्पी से भरा है और जिसमें इतना ज्यादा सीखना और इतना ज्यादा करना है।"

"जिस धर्म में नेहरूजी विश्वास रखते थे उसे रोमेन रोलैंड ने, इस प्रकार बताया है,

"बहुत-से मनुष्य, जो धार्मिक विश्वासों से अलग हैं या उनमें विश्वास नहीं रखते, किन्तु वास्तव में जिनका चिन्तन उच्च बौद्धिकता पर आधारित होता है, जिसको वे समाजवाद, साम्यवाद, मानवतावाद, राष्ट्रवाद अथवा तर्कवाद कहते हैं''''मुझे उनको धार्मिक मानना चाहिए। क्योंकि इसमें उनकी समाज को वर्तमान स्थिति से ऊपर उठाने के प्रयत्न और इससे भी अधिक, सारी मानवता को ऊंचा उठाने के प्रयत्न में निष्ठा होती है।

इस दृष्टिकोण से नेहरू जी धार्मिक व्यक्ति थे। उनका धर्म मानवता का धर्म था। स्वयं नेहरूजी ने यह कहा :

"किसी को मनुष्य का विश्वास नहीं खोना चाहिए। हम ईश्वर को न मानें। किन्तु हमारे लिए क्या आशा रह जाती है, अगर हम मनुष्य को न मानें ?"

उनका आत्म विश्वास बुद्धि से आलोकित होकर भारत के कण-कण में इस तरह व्याप्त हुआ कि उनकी नास्तिकता भी उदार धार्मिकता बन गई।

कर्म और आचरण

अपनी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में, उन्होंने भारतवासियों के ऊँचे आदर्श और नीचे काम के विषय में अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए हैं :—

"हमारे आचरण की तुलना में हमारे विचार और उद्‌गार इतने ऊँचे हैं कि उन्हें देखकर आश्चर्य होता है। बातें तो हम शांति और अहिंसा की करते हैं मगर कार्य हमारे कुछ और होते हैं। सिद्धांत हम सहिष्णुता का बघारते हैं लेकिन भाव हमारा यह होता है कि सब लोग वैसे ही सोचें जैसे हम सोचते हैं और जब भी कोई हम उसे बरदाश्त नहीं कर सकते। घोषणा तो हमारी यह है कि स्थितप्रज्ञ बनना अर्थात् कर्मों के प्रति अनासक्त रहना हमारा आदर्श है, लेकिन काम हमारे बहुत नीचे के धरातल पर चलते हैं और बढ़ती हुई अनुशासनहीनता हमें व्यक्ति और समाज दोनों ही रूपों में नीचे ले जाती है।"

सार्वजनिक काम के लिए वे हमेशा तैयार रहते थे। वे अशोक के इन शब्दों में विश्वास रखते थे :

"हर समय और जगह पर—चाहे मैं खाना खा रहा होऊं, या रनिवास में होऊं, अपने सोने के कमरे में होऊं या महल के बाग में होऊं, सरकारी मुखबिरों को चाहिए कि वे जनता के हाल-चाल की मुझे बराबर खबर देते रहें।"

अगर कोई कठिनाई उठ खड़ी होती तो उसकी खबर तुरन्त उसे दी जाती जरूरी थी। क्योंकि उसका कहना था कि "सार्वजनिक हित के लिए मुझे हरदम काम करना चाहिए।"

"उनकी राजकार्य के प्रति अटूट निष्ठा थी। जो कुछ उन्होंने किया, वह एक मानव के लिए गलत नहीं था। उन्होंने इस प्रकार देशवासियों को शिक्षा दी जो सबको हृदयंगम करनी चाहिए।

एशिया और अफ्रीका की मान्यता

नेहरूजी इतिहास के विद्वान थे और उन्होंने विश्व के इतिहास को पढ़ा था। उन्होंने देखा कि एशिया और अफ्रीका के देश पराधीन हैं और बहुत पिछड़े हुए हैं; यद्यपि इन देशों की बड़ी पुरानी संस्कृति और सभ्यता थी। उन्होंने एशिया और अफ्रीका के देशों को, विश्व के मंच पर मान्यता दिलाई। वह दुनिया का ध्यान एशिया की ओर आकर्षित करना चाहते थे और भारत एवं एशिया का ध्यान विश्व की ओर ले जाना चाहते थे। वह इतिहास के दर्शन को, उसकी सीमाओं को नयी बौद्धिकता का आधार बनाना चाहते थे। और इसी आधार पर जनता का एक दर्शन बनाना चाहते थे। जनता ने यह समझना शुरू किया कि भारत को

कि इस तरीके को अख्तियार करने में उसने सफलता पाई।

सांस्कृतिक एकता

नेहरूजी ने भारत के प्राचीन इतिहास का गहरा अध्ययन किया और यह पाया कि पुराने जमाने में भारत में विचार और प्रचार की कितनी स्वतंत्रता थी। वह अन्तःकरण की स्वतंत्रता का युग था। यह बात यूरोप में अभी तक नहीं थी और आज भी इस संबंध में कुछ बन्दिशें हैं। सारे भारत में सदा से सांस्कृतिक एकता रही है। और यह एकता प्राचीन इतिहास में लगातार स्वीकार की गई है। नेहरूजी ने भारत की भौगोलिक और सांस्कृतिक एकता का इस प्रकार विवेचन किया है : "भूगोल की दृष्टि से, भारत करीब-करीब एक इकाई है। राजनैतिक दृष्टि से भारत में अक्सर विभेद रहा है, हालांकि कभी-कभी सारा देश एक ही केन्द्रीय शासन में भी रहा। लेकिन संस्कृति के लिहाज से यह देश हमेशा से एक रहा, क्योंकि इसकी पृष्ठभूमि, इसकी परम्पराएं, इसका धर्म, इसके वीर और वीरांगनाएं, इसकी पौराणिक गाथाएं, इसकी विद्वत्ता से भरी भाषा (संस्कृत), देश-भर में फैले हुए इसके तीर्थ-स्थान, इसकी ग्राम-पंचायतें, इसकी विचारधारा और इसका राजनैतिक संगठन, युग से एक ही बने आ रहे हैं। साधारण भारतवासी की नजर में सारा भारत 'पुण्यभूमि' था और बाकी दुनिया अधिकतर म्लेच्छों का और बर्बरों का निवास स्थान थी। इस प्रकार भारत में भारतीयता की एक व्यापक भावना पैदा हुई, जिसने देश के राजनैतिक विभाजन की परवा नहीं की, बल्कि उस पर विजय प्राप्त की।"

सत्य शोध

शिक्षा के क्षेत्र में नेहरूजी की बड़ी रुचि थी और कुछ क्षेत्रों में उनके पास बड़ी योजनाएं भी थीं। किन्तु दुर्भाग्य से वह अन्य समस्याओं में जुटे रहने के कारण, इस ओर अधिक ध्यान नहीं दे पाये। उनकी यह आकांक्षा थी कि जिनके पास बुद्धि है, उनको सोचना ही चाहिये। बौद्धिक शक्तियों का प्रयोग न करना कोई अच्छी बात नहीं। चिन्तन के क्षेत्र में किये गये नेहरूजी के प्रयत्नों को भारतीय जनता सदा याद रखेगी। अपने जीवन-काल में वह अपने मौलिक चिन्तन का दान करने के लिए सदैव तत्पर रहे। चिन्तन व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों स्तर पर ही आवश्यक मानते थे। क्योंकि इस प्रकार के विचार-विनिमय से सत्य शोध होता है और सही परिणाम निकलते हैं।

आस्था का केन्द्र

नेहरूजी की बौद्धिकता की थाती को संवारते हुए एक बात अवश्य याद रखनी होगी, वह यह है कि हमें दूसरों को केवल सिखलाना ही नहीं है बल्कि उनसे सीखना भी है। बहुधा बौद्धिकजन आत्मगत-चिन्तन करते हैं इसलिये वे अपने चारों तरफ के वातावरण से अलग रह जाते हैं। इस कारण वे सही निष्कर्षों पर नहीं पहुंचते। नेहरूजी इस बात को खूब समझते थे। उनके अनेक समकालीन बुद्धिवादी नेता राजनीति मे या अन्य क्षेत्रों में इसीलिये असफल हुए कि उन्होंने अपने चिन्तन में दूसरों से सीखने के लिये कोई जगह नहीं रखी। नेहरूजी जहां जनता को नया वैज्ञानिक दृष्टिकोण देते थे, वहा जनता से सीखते भी थे। वे अत्यधिक मानवीय थे। वे एक ऐसे विश्वसनीय और वचन-पालक मित्र थे जिनकी सद्भावना और स्नेह पर किसी भी स्थिति मे निर्भर रहा जा सकता था।

नेहरूजी सत्य के प्रति आग्रही और ज्ञान के प्रति विनयी थे। भारत का इतिहास ऐसे उदाहरणो से भरा पडा है, जो यह सीख देते हैं कि बुद्धि, सत्य और विनय का सहारा लेकर ही सही मार्ग पर चलती है। नेहरूजी ने अपने उदाहरण से सत्य को सिद्ध किया। अन्धविश्वास और रूढिवाद का खण्डन करते हुए, वे जनता जनार्दन को नया दृष्टिकोण देते रहे।

अतीत से सम्बन्ध

नेहरूजी को भारत के अतीत मे बहुत दिलचस्पी थी। उन्होंने वर्तमान का अतीत के साथ किस प्रकार सम्बन्ध जोड़ा यह इन पंक्तियों में देखने को मिलता है:

"वर्तमान के मूल अतीत मे हैं और सर्वथा इस प्रयत्न मे मैंने उस अतीत की खोज की है कि वर्तमान से मेल खाने वाला कोई विचार सूत्र उसमे मिल जाएगा। वर्तमान मुझ पर सदैव छाया रहा, उस समय पर भी जब मैं स्थिति और स्थान का ज्ञान भुलाकर भूत-कालीन घटनाओ और दूर व बहुत समय पहले के व्यक्तियों के चिन्तन में खो गया था। यदि मैंने यदा-कदा यह अनुभव किया कि मैं अतीत का हू, तो यह भी अनुभव किया कि वर्तमान में जो समग्र अतीत है, वह भी मेरा है। अतीत का इतिहास समसामयिक इतिहास मे आ गिरकर उसके साथ एकाकार हुआ और आनन्द एव वेदना के भावों मे गुथा जाकर एक जीवन्त सत्य हो गया।

जीवन में आस्था

इसी प्रकार नेहरूजी ने वर्तमान जीवन मे अपनी आस्था प्रकट की है और

उनका सम्बन्ध अपने घर के वातावरण से इस प्रकार जोड़ा है

"मेरी तो इस संसार और उसके संसार निकट जीवन में आस्था है, किसी दूसरे विश्व और आने वाले भविष्य में नहीं। क्या आत्मा नाम की कोई वस्तु है और देहान्त के बाद भी जीवित रहती है, यह मैं नहीं जानता। जिस वातावरण में मेरा पालन-पोषण हुआ, उसमें आत्मा पारलौकिक जीवन, कारण-कार्य का कर्म सिद्धांत और पुनर्जन्म बिना प्रमाण के सर्वमान्य हैं। मैं इन बातों से प्रभावित हूँ और इन मान्यताओं के प्रति मेरा ध्यान अनुकूल रहा है।"

वास्तव में पिछले १५ वर्षों में संसार के बुद्धिजीवी मनुष्य नियति को लेकर जो अनुभव करते रहे हैं, नेहरूजी ने उन्हें शब्द दिया। संसार के बुद्धिजीवियों, कलाकारों, कवियों और वैज्ञानिकों ने नेहरूजी को ही अपनी आस्था का केन्द्र माना।

राजनीति में मूल्यों की स्थापना

इतिहास ने पहली बार यह देखा कि मूल्यहीन राजनीति से खतरनाक अस्त्र और कुछ नहीं हो सकता। मनुष्यता के विनाश के लिए ईजाद हथियार वास्तव में इस मूल्यहीनता का ही दूसरा रूप है।

आदर्शहीन राजनीति की अन्तर्राष्ट्रीय दुनिया में नेहरूजी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने इस खतरे को ठीक-ठीक पहचाना और वह अकेले राजनीतिज्ञ थे जिन्होंने संसार का ध्यान इस सत्य की ओर खींचा कि मूल्यहीन होकर राजनीति मनुष्य को फिर बर्बर आदिम युग की ओर ले जाएगी।

राजनीति से बाहर रहकर मूल्यों, नैतिकता और आदर्शों की दुहाई देना कठिन नहीं लेकिन जीवन-भर राजनीति में रहकर मूल्यों और मर्यादाओं की न केवल रक्षा के लिए लड़ना बल्कि उन्हें राजनीति को श्रेष्ठ शक्तियों के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न एक असम्भव कार्य है। नेहरूजी ने यही असम्भव कार्य सम्पन्न किया। उनका तो राजनीति में रहना स्वयं राजनीति को बदलने का, राजनीति में मूल्यों की स्थापना करने का एक सतत प्रयत्न था।

श्रेष्ठ साहित्यकार

नेहरूजी साहित्यकार थे तो इसका कारण यह नहीं कि उन्होंने किताबें लिखी हैं बल्कि यह कि उनका व्यक्तित्व एक कलाकार का था। जरूरी नहीं कि हर लिखने वाला साहित्यकार हो और हर कवि कवि हो। जिस व्यक्ति में कला के संस्कार होंगे वही उदार होगा और उसी से मनुष्य की आत्मा में पौधा

होगी। अन्य किसी राजनीतिज्ञ ने कला में इतनी गहरी दिलचस्पी नहीं ली जितनी नेहरूजी ने अपनी तमाम व्यस्तताओं के बावजूद ली।

सुन्दरता के प्रति इसी प्रेम ने उन्हें मनुष्य की आत्मा के इतने नजदीक पहुंचा दिया था कि पिछले ३३ सौ साल में मनुष्य की आत्मा को लेकर जुड़ रहे पवित्र के साहित्य में उनकी न केवल गहरी दिलचस्पी थी बल्कि उसकी सही समझ थी। वे संसार के बुद्धिजीवियों और कवियों के नायक थे।

प्रकृति वर्णन

एक लेखक का गुण अन्त में व्यक्ति का ही गुण होता है। लेखक और मानव के रूप में नेहरूजी की सत्यता और तीव्र निष्ठा, उनके चमत्कारी गुण थे। उनकी भाषा स्फटिक के समान निर्मल और सरल थी जिसमें उनके महान् व्यक्तित्व की सुन्दर झलक दिखाई देती थी। उनके विचारों में पूर्ण सामंजस्य और तारतम्यता थी और लेशमात्र भी विरोधाभास न था। जो कुछ वे देखते या अनुभव करते, उसका उनके हृदय पर गहरा प्रभाव होता था। हिमालय की पर्वतमालाएं उन्हें आह्वान करती हुई प्रतीत होती थी। वे प्रकृति की गोद में पहुंचकर अपने-आपको भूल जाते थे। प्राकृतिक दृश्य उन्हें सदैव चुम्बक की नाईं आकर्षित करते थे। संध्या के सुन्दर दृश्य उनके मानस में विचरित करते रहते थे। प्रकृति के सुन्दर दृश्यों की छटा देखकर वे उनमें तल्लीन हो जाते थे। पर्वत, सरोवर, नदियां, पुष्प, लताएं, वन, उपवन, तड़ाग, पेड़ पौधे और पक्षी आदि के सौन्दर्य को देखकर उनको विचित्र हर्ष होता था। वे दृश्य उनके अन्तर में समा जाते और बाद में उनका चिंतन ही नेहरूजी को अलौकिक आनन्द प्रदान करता।

अक्तूबर, १९३४ की बात है जब कमलाजी का स्वास्थ्य बहुत गिर गया था तो उनको भुवाली की पहाड़ी पर स्वस्थ होने के लिए भेज दिया गया था। नेहरूजी उस समय नैनीताल में थे। उनको अलमोड़ा जेल में भेजने की आज्ञा दे दी गई, जिससे वे कमलाजी से यथासमय मिल सकें। उस समय का प्रकृति वर्णन नेहरूजी ने अपनी गौरवमयी गाथा 'मेरी कहानी' में इस प्रकार किया है :

"सच तो यह है कि कमला तक पहुंचते-पहुंचते ही पहाड़ों ने मुझे प्रफुल्लित कर दिया था। मुझे वापस इन पहाड़ों में पहुंच जाने की बड़ी खुशी थी। ज्यों-ज्यों हमारी मोटर चक्करदार सड़क पर तेजी से आगे बढ़ती जा रही थी, सवेरे की ... और धीरे-धीरे खुलता जानेवाला प्रकृति का सौंदर्य मुझे एक विचित्र ... था, हम ऊपर-ऊपर चढ़ते जा रहे थे, घाटियां गहरी होती जा रही

थीं, पर्वत की चोटियाँ बादलों में छिपती जा रही थीं। हरियाली भी रंग बदलती गई, और चारों ओर की पहाड़ियाँ देवदार से घिरी हुई दिखाई देने लगीं। कभी सड़क के किसी मोड़ को पार करते ही अचानक हमारे सामने पर्वत-श्रेणियों का एक नया विस्तार और कहीं घाटियों की गहराई में एक छोटी नदी कलकल करती हुई दिखाई देती। उस दृश्य को देखने मेरा जी नहीं अघाता था; उसे पूरा ही पी जाने की प्रबल इच्छा हो रही थी। मैं अपने स्मृति-पात्र को उनसे भर लेना चाहता था, जिससे उस समय, जबकि सच्चा दृश्य देखना मुझे नसीब नहीं होगा, मैं अपने मन में उन्हीं की कल्पना करके आनन्द पा सकूँगा।"

नेहरूजी के उपर्युक्त वर्णन से उनके अन्तरतम की गहराई की एक सुन्दर व निर्मल झाँकी मिलती है। वे प्रकृति के साथ पूर्ण रूप से एकाकार होना चाहते थे।

प्रकृति का सूर्य के प्रकाश में सुन्दर रूप और रात्रि के अन्धकार में भयंकर रूप का दिग्दर्शन, निम्न पंक्तियों में देखने को मिलता है

"दिन में यह सारा दृश्य बड़ा मनोहर दिखाई देता है, और ज्यों-ज्यों सूर्य आकाश में ऊँचा चढ़ता जाता है, उसकी बढ़ती हुई गर्मी से पहाड़ों में एक नया जीवन दिखाई देने लगता है, और वे अपना अजनबीपन भूलकर हमारे मित्र और साथी से मालूम होने लगते हैं। लेकिन दिन डूब जाने पर उनका सारा रूप कैसा बदल जाता है? जब रात अपने लम्बे-चौड़े डग भरती हुई विश्व को अंक में भर लेती है, और उच्छृंखल प्रकृति को पूरी आज़ादी देकर जीवन अपने बचाव के लिए छिपने का मार्ग ढूंढ़ता है, तब यह जीवन शून्य पर्वत कैसे ठंडे और गम्भीर बन जाते हैं? चाँदनी या तारों की रोशनी में पर्वतों की श्रेणियाँ रहस्यमयी, भयंकर, विराट, और फिर भी आकारहीन-सी मालूम पड़ती हैं, और घाटियों के बीच से वायु की सरसराहट सुनाई पड़ती है। गरीब मुसाफिर एकान्त मार्ग पर चलता हुआ काँप उठता है, और अपने चारों ओर विरोधी शक्तियों की उपस्थिति का अनुभव करता है। पवन की सनसनाहट भी मखौल-सा उड़ाती और उपेक्षा-सी करती दिखाई देती है। कभी पवन का निःश्वास भरना बन्द हो जाता है, दूसरी कोई ध्वनि भी नहीं होती, और चारों ओर पूर्ण शान्ति होती है जिसकी प्रचण्डता ही डराती लगती है। केवल टेलीग्राफ के तार धीमे-धीमे गुनगुनाते रहते हैं और तारे अधिक चमकदार और अधिक नजदीक दिखाई देने लगते हैं। पर्वत-श्रेणियाँ गम्भीरता से नीचे की ओर देखती रहती हैं और ऐसा जान पड़ता है जैसे कोई भयानक षड्यन्त्र इस ओर को घूर रहा हो।"

प्रकृति का ऐसा भव्य और सजीव चित्रण जितना मार्मिक और हृदयस्पर्शी

होगी। अन्य किसी राजनीतिज्ञ ने कला में इतनी गहरी दिलचस्पी नहीं ली जितनी नेहरूजी ने अपनी तमाम व्यस्तताओं के बावजूद ली।

सुन्दरता के प्रति इसी प्रेम ने उन्हें मनुष्य की आत्मा के इतने नजदीक पहुँचा दिया था कि पिछले डेढ़ सौ साल से मनुष्य की आत्मा को लेकर जूझ रहे पश्चिम के साहित्य में उनकी न केवल गहरी दिलचस्पी थी बल्कि उसकी सही समझ थी। **वे संसार के बुद्धिजीवियों और कवियों के नायक थे।**

प्रकृति वर्णन

एक लेखक का गुण अन्त में व्यक्ति का ही गुण होता है। लेखक और मानव के रूप में नेहरूजी की सभ्यता और तीव्र निष्ठा, उनके चमत्कारी गुण थे। उनकी भाषा स्फटिक के समान निर्मल और सरल थी जिसमें उनके महान व्यक्तित्व की सुन्दर झलक दिखाई देती थी। उनके विचारों में पूर्ण सामंजस्य और तारतम्य थी और लेशमात्र भी विरोधाभास न था। जो कुछ वे देखते या अनुभव करते, उसका उनके हृदय पर गहरा प्रभाव होता था। हिमालय की पर्वतमालाएँ उन्हें आह्वान करती हुई प्रतीत होती थीं। वे प्रकृति की गोद में पहुँचकर अपने-आपको भूल जाते थे। प्राकृतिक दृश्य उन्हें सदैव चुम्बक की नाईं आकर्षित करते थे। सदा वे सुन्दर दृश्य उनके मानस में विचरण करते रहते थे। प्रकृति के सुन्दर दृश्यों की छटा देखकर वे उनमें तल्लीन हो जाते थे। पर्वत, सरोवर, नदियाँ, पुष्प, सागर, वन, उपवन, लताएँ, पेड़ पौधे और पक्षी आदि के सौन्दर्य को देखकर उनको विशेष हर्ष होता था। वे दृश्य उनके अन्तर में समा जाते और बाद में उनका चिन्तन ही नेहरूजी को अलौकिक आनन्द प्रदान करता।

अक्टूबर, १९३४ की बात है जब कमलाजी का स्वास्थ्य बहुत गिर गया था और उनको भुवाली की पहाड़ी पर स्वास्थ्य लाभ के लिए भेज दिया गया था। नेहरूजी उस समय नैनीताल में थे। उनको अल्मोड़ा जेल में भेजने की आज्ञा दे दी गई जिससे वे कमलाजी से यथासमय मिल सकें। उस समय का प्रकृति वर्णन नेहरूजी ने अपनी जीवनकथा 'मेरी कहानी' में इस प्रकार किया है

"अब तो यह है कि अल्मोड़ा तक पहुँचते पहुँचते ही पहाड़ों ने मुझे मुग्ध कर दिया था। मुझे बराबर इन पहाड़ों में पहुँच जाने की बड़ी खुशी थी। ज्यों-ज्यों हमारी मोटर चक्करदार सड़क पर ऊँची से ऊँची चढ़ती जा रही थी, ठंडी [illegible] हुआ और धीरे धीरे खुलता [illegible] प्रकृति का सौंदर्य मुझे एक विचित्र [illegible] के पार [illegible], एक [illegible] [illegible]

थीं, पर्वत की चोटियां बादलों में छिपती जा रही थीं। हरियाली भी रंग बदलती गई, और चारों ओर की पहाड़ियां देवदार से घिरी हुई दिखाई देने लगीं। कभी सड़क के किसी मोड़ को पार करते ही अचानक हमारे सामने पर्वत-श्रेणियों का एक नया विस्तार और कहीं घाटियों की गहराई में एक छोटी नदी कलकल करती हुई दिखाई देती। उस दृश्य को देखते मेरा जी नहीं अघाता था; उसे पूरा ही पी जाने की प्रबल इच्छा हो रही थी। मैं अपने स्मृति-पात्र को उनसे भर लेना चाहता था, जिससे उस समय, जबकि सच्चा दृश्य देखना मुझे नसीब नहीं होगा, मैं अपने मन में उसी की कल्पना करके आनन्द पा सकूंगा।"

नेहरूजी के उपर्युक्त वर्णन से उनके अन्तरतम की गहराई की एक सुन्दर व निर्मल झांकी मिलती है। वे प्रकृति के साथ पूर्ण रूप से एकाकार होना चाहते थे।

प्रकृति का सूर्य के प्रकाश में सुन्दर रूप और रात्रि के अन्धकार में भयंकर रूप का दिग्दर्शन, निम्न पंक्तियों में देखने को मिलता है :

"दिन में यह सारा दृश्य बड़ा मनोहर दिखाई देता है, और ज्यों-ज्यों सूर्य आकाश में ऊंचा चढ़ता जाता है, उसकी बढ़ती हुई गर्मी से पहाड़ों में एक नया जीवन दिखाई देने लगता है, और वे अपना अजनबीपन भूलकर हमारे मित्र और साथी से मालूम होने लगते हैं। लेकिन दिन डूब जाने पर उनका सारा रूप कैसा बदल जाता है? जब रात अपने लम्बे-चौड़े डग भरती हुई विश्व को अंक में भर लेती है, और उच्छृंखल प्रकृति को पूरी आज़ादी देकर जीवन अपने बचाव के लिए छिपने का मार्ग ढूंढता है, तब यह जीवन शून्य पर्वत कैसे ठंडे और गम्भीर बन जाते हैं? चांदनी या तारों की रोशनी में पर्वतों की श्रेणियां रहस्यमयी, भयंकर, विराट, और फिर भी आकारहीन-सी मालूम पड़ती हैं, और घाटियों के बीच में वायु की सरसराहट सुनाई पड़ती है। गरीब मुसाफिर एकांत मार्ग पर चलता हुआ कांप उठता है, और अपने चारों ओर विरोधी शक्तियों की उपस्थिति का अनुभव करता है। पवन की सनसनाहट भी मखौल-सा उड़ाती और उपेक्षा-सी करती दिखाई देती है। कभी पवन का निःश्वास भरना बन्द हो जाता है, दूसरी कोई ध्वनि भी नहीं होती, और चारों ओर पूर्ण शान्ति होती है जिसकी प्रचण्डता ही डरावनी लगती है। केवल टेलीग्राफ के तार धीमे-धीमे गुनगुनाते रहते हैं और तारे अधिक चमकदार और अधिक समीप दिखाई देने लगते हैं। पर्वत-श्रेणियां गम्भीरता से नीचे की ओर देखती [illegible] जान पड़ता है जैसे कोई भयावना रहस्य हम और [illegible]

[illegible] और हृदयग्राह[illegible]

है। हिमाच्छादित पर्वतों की सुषमा, ऊषा की लाली और सन्ध्या का सौंदर्य उनके अंतर में प्रेमिका की नाईं समा जाता है जिनकी मधुर स्मृति उनको प्रफुल्लित करती रहती है। जेल में वे आकाश में छाये बादलों को निरखकर रोमांचित हो उठते हैं और गद्य में ऐसा सुन्दर वर्णन करते हैं जो पद्य से भी अधिक रोचक होता है। इसी प्रकार गगन में चन्द्रमा के बढ़ते और घटते हुए रूप, उनके हृदय को स्पंदित करते हैं। नीलाम्बर में चमकते हुए तारों की शोभा और उनकी चहल-पहल उनके मन को मुग्ध कर लेती है। इन दृश्यों का वर्णन उन्होंने जिस सुन्दरता के साथ किया है वह अनुपम और अलौकिक है।

नेहरूजी की सभी कृतियों में, उनके प्रकृति प्रेम, भाषा की सरलता और सुन्दरता, कलात्मक भाव-व्यंजना, और मानवीय कार्य कलापों में गहरी रुचि की एक सुन्दर झांकी देखने को मिलती है। उनकी सबसे पहली कृति 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' एक प्रकार से, विश्व के निर्माण और विकास की कहानी है। उसमें कुछ वैज्ञानिक बातों के साथ-साथ व्यक्तिगत भाव भी प्रदर्शित किये गए हैं। नक्षत्रों के वर्णन के साथ, उनकी निजी आशा-निराशाओं का भी प्रसंग जुड़ा है। उनके जीवन के सुख-दुःख संसार के जीवन से जुड़ जाते हैं और काल के प्रभाव से परे पहुंचकर स्थायी बन जाते है।

'विश्व इतिहास की झलक' और 'हिन्दुस्तान की कहानी' दोनों पुस्तकों में नेहरूजी की मानव और विश्व के प्रति संवेदना प्रकट होती है। 'विश्व इतिहास की झलक' में अतीत का सुन्दर चित्रण किया गया है। इस वर्णन में नेहरूजी के व्यक्तित्व की पूरी छाप मिलती है।

कभी-कभी वह रोमांचकारी घटनाओं का वर्णन करते हुए, अनायास ही रुक जाते हैं और स्वाभाविक रूप से उन पर अपने विचार प्रकट करते हैं। अथवा उनके जेल के अहाते में यदि एक पुष्प खिल उठता है तो वे उसका प्रसंग लेकर अपने अन्तर की अनुभूति चित्रित कर देते हैं। इसी प्रकार उनकी रचना 'हिन्दुस्तान की कहानी' में भी व्यक्ति का समष्टि से एकाकार हो जाता है। उनमें आत्म-अभिव्यक्ति का यह एक अद्भुत गुण है। इस पुस्तक में नेहरूजी ने भारत की खोज की है, किन्तु सत्य तो यह है कि यह उनकी अपने आप की खोज भी है।

उनकी आत्म-कथा 'मेरी कहानी' का साहित्य के क्षेत्र में सर्वोच्च स्थान है। भारत के राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संग्राम की कहानी के रूप में, यह पुस्तक अद्वितीय है। इस पुस्तक में उन महान् नेताओं का संवेदनशील चित्रण किया गया है जिनका एक प्रकार से भारत का भाग्य बनाने में हाथ था। यह चित्रण स्वयं नेहरूजी ही

कर सकते थे। और किसी व्यक्ति के लिए यह कार्य कल्पना से भी परे था। जीवन का यह अभिनय, मनुष्यों की स्वार्थपूर्ण भावनाएं, उनकी विचारधारा, रंगमंच पर उनके क्रिया-कलाप, उनकी इच्छा-आकांक्षा आदि का उल्लेख अलौकिक ढंग से किया गया है। निःसन्देह 'मेरी कहानी' एक ऐसा महाकाव्य है जिसका अध्ययन करने के बाद ही मानव और लेखक के रूप में नेहरूजी के चमत्कारी गुणों का अनुमान लगाया जा सकता है।

"कुछ पुरानी चिट्ठियाँ" नामक ग्रन्थ में पाठक के हृदय पर जो 'मेरी कहानी' का प्रभाव पड़ता है, वह और भी गहरा हो जाता है। यह उनका अन्तिम साहित्यिक प्रयास था।

उनकी सारी कृतियों में आत्म-जिज्ञासा, गम्भीरता, आत्म विश्लेषण, सन्तुलन आदि गुण पाये जाते हैं। यह गुण इस बात के द्योतक हैं कि नेहरूजी पर विज्ञान का कितना गहरा प्रभाव पड़ा था। जिन भाव भरे, गहरे और बोलते शब्दों में वे अपने विचारों को लिपिबद्ध करते थे, उनसे वास्तविक रूप में यह पता चलता था कि वे कितने महान् कलाकार थे।

विश्व प्रसिद्ध महान् लेखिका श्रीमती पर्लबक ने इन मार्मिक शब्दों में नेहरू जी को साहित्यकार के रूप में श्रद्धांजलि दी है

"मैं जवाहरलाल नेहरू के व्यक्तित्व के अन्य पक्षों को नहीं भुला सकती— उनका आकर्षण, उनकी कुशलता और उनकी शालीनता। मैं समझती हूं कि यदि हमारा यह युग अधिक शान्ति-पूर्ण होता तो वे एक लेखक के रूप में संसार के सामने आते क्योंकि उनकी शैली की अपनी विशिष्टता थी और उनकी कल्पना जीवन्त थी।"

आत्म-चिन्तन

पं. नेहरूजी में कलाकार की भावुकता के साथ दार्शनिक की सूक्ष्म दृष्टि और विश्लेषण शक्ति थी। वह बराबर आत्म-निरीक्षण करते थे और उसकी उपलब्धियों के बल लेखा के रूप को प्रस्तुत करते थे। इस सम्बन्ध में उन्होंने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये हैं:

"मुझे यह विश्वास है कि जीवन के बड़े-बड़े पुरस्कार निराशा, निर्भयता और विवेक के साथ ही मिलते हैं। अगर ऐसा न हो तो शायद उन पुरस्कारों का मूल्य ठीक-ठीक न आंका जा सके। स्पष्ट विचारों की स्पष्टता के लिए कष्ट-सहन जरूरी है, परन्तु उसकी अधिकता विवेक पर पर्दा डाल सकती है। जेल ने आत्म-चिन्तन को प्रोत्साहन दिया है और अनेक वर्षों के जेल-निवास ने मुझको अधिक ह

अधिक अपने आत्म-निरीक्षण के लिए विवश किया है। स्वभाव से मैं अन्तर्मुखी नहीं था, पर जेल का जीवन, तेज काफी या कुचले के सत की तरह आत्म-चिन्तन की ओर ले जाता है। कभी-कभी मनोरंजन के लिए, मैं प्रोफेसर मैक्डूगल के निर्धारित किये हुए मापदण्ड पर अपनी अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी वृत्तियों के संबंध की परीक्षा करता हूं, तो मुझे ताज्जुब होता है कि एक प्रवृत्ति से दूसरी प्रवृत्ति की ओर परिवर्तन कितनी अधिक बार होता है, और कितनी तेजी के साथ।"

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने उनके व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए अपने विस्मय को इस प्रकार प्रकट किया था :

"समझ मे नही आता कि वे दरिद्रनारायण जिससे नेहरूजी घृणा करते है, उनसे क्यों इतना प्यार करते हैं?"

निश्चय ही वे पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित थे, निश्चय ही वे कुलीन सभ्यता के प्रतिनिधि थे, निश्चय ही वे दरिद्रनारायण के प्रति वितृष्णा से भर जाते थे, किन्तु वे नवयुग की इस नवीन शक्ति की अवहेलना नही कर सकते थे। आत्म चिन्तन और आत्म-निरीक्षण से उनके मस्तिष्क मे जो सतुलन पैदा हुआ वही उनकी आश्चर्यजनक सफलता का रहस्य था।

कवियों की प्रतिष्ठा

नेहरूजी ने स्वयं इस बात को माना है कि कला और साहित्य से किसी राष्ट्र की आत्मा का जितना गहरा परिचय मिलता है, उतना जन-समूह की ऊपरी प्रवृत्तियों से नही। इसी कारण, वे कवियों और कलाकारों का बड़ा मान-आदर करते थे और यह चाहते थे कि उनको उचित सम्मान प्राप्त हो। जब ऐसा नहीं होता था तो उनके दिल को बड़ी ठेस लगती थी। इस सम्बन्ध मे, उन्होने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये है—

"चेतना, कला और साहित्य हमें शांत और गम्भीर विचार के राज्य में पहुंचा देते हैं, जिसपर तत्कालीन वासनाओं तथा राग-द्वेषों का प्रभाव नहीं पड़ता। मगर आज कवि और कलाकार को भविष्य का सन्देश वाहक बहुत कम समझा जाता है और उन्हें कोई सम्मान नहीं दिया जाता। अगर उन्हें कुछ सम्मान मिलता भी है तो आम तौर पर उनको मृत्यु के बाद मिलता है।"

मजदूर की प्रतिष्ठा

नेहरूजी इंगलैंड मे १९वीं सदी के दो प्रतिभाशाली कवियों से बहुत प्रभावित हुए। वे थे शैली और कीट्स। युवावस्था के शुरू से ही उनके दिलों में आग भरी

थी। इन दोनों कवियों ने अपना अल्पकालीन जीवन अपनी कल्पना और उड़ान में ही रहते-रहते बिता दिया और सांसारिक कठिनाइयों की कुछ भी परवाह न की। नेहरूजी को शैली की एक कविता बहुत पसन्द थी जो, यद्यपि उनकी सर्वोत्तम रचनाओं में न थी, लेकिन फिर भी हमारी मौजूदा सभ्यता में गरीब मजदूर के भीषण दुर्भाग्य को प्रकट करती थी। इस कविता का शीर्षक था 'अराजकता का नकाब'। नेहरूजी के शब्दों में "इस कविता को लिखे सौ वर्ष से ज्यादा हो गये हैं, मगर फिर भी आज की परिस्थितियों पर यह लागू होती है।" इस कविता के कुछ अंश इस प्रकार हैं

यही गुलामी है कि तुम्हारे बच्चे
भूखों मरें और उनकी मातायें
घुल घुल कांटा हो जायें --
यही गुलामी है,
जिसमें बनना है तुमको दास
आत्मा से भी,
जिसमें रहे न तुमको काबू
अपनी इच्छाओं पर,
और बनो तुम वैसे
जैसा लोग दूसरे तुम्हें बनायें।
और अन्त में जब तुम
करने लगो शिकायत
धीरे-धीरे वृथा रुदन कर,
तब अत्याचारी के नौकर
तुमको औ' पत्नियों तुम्हारी को
छोड़ें के तले कुचलकर,
ओस-कणों की भांति
तुम्हारे लहू की बूंदें
देंगे बिछा घास पर।

नेहरूजी यह महसूस करते थे कि आधुनिक समाज में गरीब मजदूर का "करीब-करीब वही बुरा हाल है, जो पुराने जमाने में गुलामों का होता था।" उनकी दीन-

दशा को देखकर नेहरूजी के हृदय को बहुत चोट पहुँचती थी। गरीब मजदूर और किसान को प्रतिष्ठित करने में, उन्होंने सारा जीवन लगा दिया। गेटे की कविता 'फ़ास्ट' के निम्न शब्द उनके कानों में गुंजन करते रहते थे—

ओ पुत्र पृथ्वी के महा!
निर्माण कर उसका दुबारा,
और फिर सुन्दर गुणों से युक्त
तू उसको बना दे,
और कर निर्माण उसको निज हृदय में
कर प्रतिष्ठित उच्च आसन पर उसे तू।
फिर जगा तू ज्योति जीवन की,
लगा फिर दौड़ जीवन-यात्रा में,
पार कर सब विघ्न-बाधा।
बज उठे लहरी स्वरों की,
सदा से भी अधिक
सुन्दर, मधुरतामय।

निराली हिन्दी शैली

नेहरूजी की हिन्दी शैली निराली थी। उन्होंने एक बार भाषा सम्बन्धी अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा था "हिन्दी और उर्दू के मेल से हम एक बहुत खूबसूरत और ताकतवान भाषा पैदा करेंगे, जिसमें जवानी की ताकत हो और दुनिया की भाषाओं में एक माकूल जगह हो।" उनकी अपनी शैली इस मिश्रित भाषा का सर्वोत्तम उदाहरण है। जिसके कुछ उद्धरण इस प्रकार हैं.

दो मस्जिदें[1]

"इस मस्जिद से मेरा ध्यान उचटकर एक दूसरी मस्जिद की तरफ पहुँचा। वह इस्लाम से भी पुरानी है और उसने अपनी इस लम्बी जिन्दगी में बड़े [illegible] देखीं। उसके सामने बड़े-बड़े साम्राज्य गिरे, पुरानी सल्तनतों का नाश हुआ, धार्मिक परिवर्तन हुए। [illegible] में उसने यह सब देखा, और ..."

---

१. 'दो मस्जिदें' [illegible]

क्रान्ति और तबादले पर उसने अपनी भी पोशाक बदली। चौदह सौ वर्ष के तूफानों को इस आलीशान इमारत ने बर्दाश्त किया, बारिश ने उसको धोया, हवा ने अपने बाजुओं से उसको रगड़ा, मिट्टी ने उसके बाज़ हिस्सों को ढंका। बुजुर्गी और शान उसके एक-एक पत्थर से टपकती है। मालूम होता है, उसकी रग-रग और रेशे-रेशे में दुनिया-भर का तजुरबा इस डेढ़ हज़ार वर्ष ने भर दिया है। इतने लम्बे ज़माने तक प्रकृति के मेहों और तूफानों को बर्दाश्त करना कठिन था, लेकिन उससे भी अधिक कठिन था मनुष्यों की हिमाकतों और वहशतों को सहना। पर उसने यह सहा। उसके पत्थरों की खामोश निगाहों के सामने साम्राज्य खड़े हुए और गिरे, मज़हब उठे और बैठे, बड़े-से-बड़े बादशाह, खूबसूरत-से-खूबसूरत औरतें लायक-से-लायक आदमी चमके और फिर अपना रास्ता नापकर गायब हो गये। इस तरह की योग्यता उन पत्थरों ने देखी और देखी हर प्रकार की नीचता और कमीनापन। बड़े और छोटे, अच्छे और बुरे, सब आये और चल बसे, लेकिन वे पत्थर अभी कायम हैं। क्या सोचते होंगे वे पत्थर, जब वे आज भी अपनी ऊंचाई से मनुष्यों की ओछी हरकतें देखते होंगे—उनके बच्चों का खेल, उनके बड़ों की बड़ाई, क्रोध और बेवकूफी? हज़ारों वर्षों में इन्होंने कितना कम सीखा। कितने दिन और लगेंगे कि इनको अक्ल और समझ आये?"

गांधीजी पर

"मैं अक्सर कुछ-न-कुछ लिखा करता हूं और लिखने में दिलचस्पी भी है। फिर यह किस्सा कैसी? कभी-कभी गांधीजी पर भी लिखा है। लेकिन जितना मैंने सोचा यह मज़मून मेरे काबू के बाहर निकला। यह आसान था कि मैं कुछ ऊपरी बातें, जो दुनिया जानती है, उनको दोहराऊं। लेकिन उससे फायदा क्या? अक्सर बातें उनकी मेरी समझ में नहीं आईं, कुछ बातों में उनसे मतभेद भी हुआ पर एक ज़माने से उनका हाथ रहा, उनकी निगरानी में काम किया। उनका छापा मेरे ऊपर पड़ा, मेरे ख्यालात बदले, रहने का ढंग बदला, ज़िन्दगी ने एक करवट ली, दिल बढ़ा, मन कुछ ऊंचा हुआ, आंखों में रोशनी आई, नये रास्ते दीखे और उन रास्तों पर लाखों और करोड़ों के साथ हम-कदम होकर चला। क्या मैं ऐसे शख्स के बारे में लिखूं, जो कि हिन्दुस्तान का और मेरा एक जुज़ हो गया और जिसने एक ज़माने को अपना बनाया। हम जो इस ज़माने के बड़े और उनके असर में पले, हम कैसे अन्दाज़ा करें? हमारे रग और रेशे में उनकी मोहर पड़ी और हम सब उनके टुकड़े हैं।"

अनन्त युगों तक

महात्मा जी की हत्या के तुरन्त बाद ही आकाशवाणी से बोलते हुए नेहरूजी ने करुण स्वर में कहा था :

"एक गौरव था, जो कि अब नहीं रहा और वह सूरज, जो हमारे जीवन को गरमी और रोशनी पहुंचाता था, अस्त हो गया और हम ठंड तथा अन्धकार में कांप रहे हैं। किन्तु गांधीजी कभी नहीं चाहते थे कि इतने गौरव को देख चुकने के बाद हम अपने हृदय में ऐसी अनुभूति को स्थान दें। दैवी ज्योति वाला वह महापुरुष हमें लगातार बदलता रहा और आज हम जैसे हैं, उसी के बनाये हुए हैं। उसी दैवी ज्योति में से हम में से भी बहुतों ने एक चिनगारी ले ली, जिसने हमारी झुकी हुई पीठ सीधी कर दी और हमें कुछ सीमा तक उनके द्वारा निर्मित मार्ग पर चलने के योग्य बनाया।'" बड़े-बड़े और प्रसिद्ध लोगों की स्मृति में कांसे या संगमरमर की मूर्तियां बनती हैं, किन्तु दैवी ज्योति वाले इस व्यक्ति ने अपने जीवनकाल में ही लाखों और करोड़ों के हृदय में स्थान पा लिया। उसका विस्तार सारे हिन्दुस्तान में था—सिर्फ महलों या चुनी हुई जगहों या असेम्बलियों में ही नहीं, बल्कि नीचों और पीड़ितों की हर झोंपड़ी और हर कुटिया में। वह *लाखों के हृदय में हैं और अनन्त युगों तक बसते रहेंगे।"*

शोक चित्र[1]

"आखिरी सफर खत्म हुआ, अन्तिम यात्रा समाप्त हो गई। पचास वर्ष से ऊपर *हुआ, महात्मा गांधी ने हमारे इस देश में चक्कर लगाये। हिमालय से, सीमा* प्रान्त से, ब्रह्मपुत्र से लेकर कन्याकुमारी तक सारे प्रान्तों में, सारे देश के हिस्सों *में वह घूमे। खाली तमाशा देखने के लिए नहीं जाते थे,* बल्कि जनता की सेवा करने के लिए, जनता को पहचानने के लिए। और शायद कोई भी हिन्दुस्तानी *नहीं होगा, जिसने इतना इस भारत देश में भ्रमण किया हो,* इतना यहां की जनता को पहचाना हो, और जनता की इतनी सेवा की हो। तो उनकी इस दुनिया की *यात्रा खत्म हुई। हमारी और आपकी यात्राएं अभी जारी हैं।"*

नन्दादेवी व सहेलियां

"उत्तर की ओर नन्दादेवी और सफेद पोशाक में उसकी सहेलियां सिर ऊंचा

---

१. यह शोक-चित्र गांधीजी के अस्थि-विसर्जन के पश्चात् त्रिवेणी के तट पर नेहरूजी ने खींचा था।

लिए थी। पहाड़ों के कगारे बड़े डरावने थे और लगभग सीधे कटे हुए से कभी-कभी नीचे बड़ी गहराई तक चले जाते थे, परन्तु उपत्यकाओं के आकार तरुण उरोजों की तरह बहुधा गोल और कोमल थे। कहीं-कहीं वे छोटे-छोटे टुकड़ों में बट गये थे, जिन पर हरे-हरे लहलहाते खेत इन्सान की मेहनत को जाहिर कर रहे थे।

"आदमी की शठता से अछूते, सुनसान, अजेय उन सफेद पहाड़ों को देखते-देखते मुझे फिर से शान्ति महसूस हुई। आदमी चाहे कुछ भी क्यों न करे, ये पहाड़ तो यहां रहेंगे ही। अगर वर्तमान जाति आत्महत्या कर ले, या और किसी धीमी प्रक्रिया से गायब हो जाय तो भी बसन्त आकर इन पहाड़ी प्रदेशों का आलिंगन करेगा ही, और वृक्षों के पत्तों में सरसराती हुई हवा भी यहां ही बहेगी और पक्षियों का संगीत भी चलता ही रहेगा।

नेहरूजी का यह प्रकृति प्रेम प्रकृति के समान ही कितना दृढ़ और अटल है।

सुन्दर प्रस्तावना

नेहरूजी ने 'भारत के पक्षी' नामक ग्रन्थ की सुन्दर प्रस्तावना हिन्दी में ही लिखी है। उनके भावों ने यहां भी भाषा का सहज ही रूप दिया है

"अक्सर यूरोपीय बालक चिड़ियों और जानवरों, यहां तक कि पौधों और पेड़ों के बारे में भी बहुत कुछ जानता है। हमारे बच्चों, या बड़ों में भी, कितने ऐसे होंगे, जो इन चीजों के बारे में जानकारी रखते हों? [illegible] यह सचमुच अफसोस की बात है, क्योंकि इस तरह हम जीवन के एक आनन्द से वंचित रह जाते हैं, जिसे कोई भी हमसे छीन नहीं सकता, चाहे हम खुशकिस्मत हों या बदकिस्मत। यों तो इस दुनिया में परेशानियां बहुत हैं, लेकिन कितना सौन्दर्य भी है। अगर हम मुसीबतों और परेशानियों से बच नहीं सकते तो प्रकृति की सुन्दरता और विविधता से हम [illegible] कम-से-कम इस घाटे को तो पूरा कर ही सकते हैं।

"बरसात के मौसम में बादल कैसे खूबसूरत होते हैं, उनके बदलते हुए रंगों को देखकर जो खुशी हासिल होती है, वह कभी मिटती नहीं। चिड़ियां आती हैं और हमारी [illegible] और दिल [illegible] हो जाती है। यह कुछ भी हमें दुनिया की खूबसूरती की याद दिलाता है।"

नेहरूजी की भाषा कितनी सुन्दर है और [illegible] इतनी मधुर कि उसका रस-[illegible] हर एक [illegible] को भी [illegible] है।

जाएगा। गंगाजी को देखिए, वह आपके लिए रुकती नहीं। वह आगे निकल जाती है। देखने में वह नदी बहती है, जो कल भी थी, लेकिन जो पानी निकल गया वह फिर कल नहीं होगा। देश वही है मगर जमाना बदलता रहता है। विचारों को ज़माने के साथ-साथ बदलना आसान नहीं। अगर हम अपने दिमाग को एक कोठरी में बन्द रखने तो हमें खुद भी यह दुख होता कि ज़माने ने हमें छोड़ दिया। "अभी कुछ देर पहले संस्कृत विद्यालय का उद्घाटन हुआ। संस्कृत के अध्ययन की भी विशेष महत्ता है। संस्कृत की सहायता हमारी उन्नति में बड़ी ज़रूरी है। उसके ज़रिये देश ने हज़ारों वर्ष तक तरक्की की है। सभी भाषाएं संस्कृत की ही औलाद हैं। अपने देश में संस्कृत का विशेष प्रचार होना चाहिए। हमारे बुज़ुर्ग संस्कृत को ऊंचा स्थान देते थे।"

नेहरूजी की यह शुद्ध हिन्दी भाषा सुनकर श्रोतागणों और विशेषकर विद्यार्थियों को आश्चर्य और साथ में बड़ी प्रसन्नता हुई होगी।

युग धर्म

तिब्बत पर संकट के संदर्भ में उन्होंने कहा, "तिब्बत के लोग भले हैं, लेकिन वे पिछले युग के हैं। समाज का युग से अलग होना नुकसानदेह है। उनके धर्मगुरु श्री दलाईलामा जो वहां से भागकर आये हैं, आजकल हमारे अतिथि हैं' 'वह बौद्धधर्म के नेता हैं, जिसका हमारे देश से घनिष्ठ सम्बन्ध है। चूंकि वह (दलाईलामा) युग धर्म के अनुकूल अपने को नहीं बना सके, उन्हें अपने देश से भागकर आना पड़ा है। दरअसल परिस्थिति जनता को ढकेलकर नये युग में ला रही है और जब तक धर्म और विज्ञान मिलकर न चलें, इस किस्म की घटना होनी स्वाभाविक है।"

यह कितनी सुन्दर भाषा है? कितनी सरल, सहज और सजीव? मधुरता से ओत-प्रोत। भावना से भरी और सबसे निराली। ऐसी भाषा का जितनी बार रसास्वादन किया जाय उतना ही थोड़ा है।

महान् उपकार

इस प्रकार नेहरूजी ने अपना सारा जीवन, अपनी सारी शक्ति, अपनी सारी बुद्धि और अपना सारा विवेक मानव मात्र की मुक्ति के लिए अर्पित कर दिया। यही उनकी बौद्धिकता थी। यही उनका धर्म था। यही उनका दर्शन था। यही उनकी निष्ठा थी। यही उनका सत्य था। यही उनका आग्रह था। यही उनकी विनय थी और यही उनका ज्ञान था। इसी कारण वह सारे संसार की पीड़ित

मानवता के एकमात्र प्रतीक बन गये। विश्व उनके इस महान् उपकार से कभी उऋण नहीं हो सकता।

● ● ●

आसमान की तरफ बढ़ेंगे

"हजारों बरसों की तहजीब और संस्कृति और विचारों ने हमारे यहां जो कुछ किया, हम सब आजकल उसके नतीजे हैं। तो हम उसको कैसे भूलें और कैसे हम उसका आदर करें। लेकिन उसका आदर करते हुए भी हम बढ़ेंगे, आसमान की तरफ बढ़ेंगे, तारों की तरफ बढ़ेंगे, और आजकल की दुनिया जितने बड़े और अच्छे काम कर रही है, वे सब हम भी करेंगे।"

—जवाहरलाल नेहरू

७

बच्चों के चाचा

"इनके जीवन हमारे जीवन से अधिक आनन्दमय होंगे। इन्हें उन बहुत सी मुसीबतों का अनुभव नहीं करना पड़ेगा, जिन्हें हम लोगों ने पार किया है। इन्हें अपने जीवन में इतनी अधिक क्रूरता नहीं देखनी पड़ेगी।"

—लेनिन

पण्डित नेहरू को बच्चों से असीम प्यार था। वे बच्चों को राष्ट्र का असली धन मानते थे। वे जानते थे कि बच्चे ही भारत के भविष्य के निर्माता हैं। वे चाहते थे कि बच्चों का सर्वांगीण विकास हो। उनके शारीरिक और मानसिक विकास का पूरा प्रबंध हो। उनके पूरे मनोरंजन और ज्ञानवर्धन की व्यवस्था हो। बच्चे बड़े भावुक और कल्पनाशील होते हैं। अपने चारों ओर की रंग-बिरंगी दुनिया में वे बहुत दिलचस्पी लेते हैं। विहसते फूलों, लहराती हुई नदियों, लहलहाते हुए खेत, हरे-भरे वन, नाना प्रकार के पशु-पक्षियों आदि को देखकर उनका हृदय उल्लास से भर जाता है। पण्डित नेहरू चाहते थे कि इस कल्पना शक्ति को अधिक-से-अधिक विकसित किया जाय। उनको नये-नये अनुभव प्राप्त करने के पूर्ण अवसर मिलें। इससे उनके भावी जीवन की सफल योजना बनाने में बड़ी सहायता मिलती है। पण्डित नेहरू यह भी चाहते थे कि हर बच्चे के सुख और सुरक्षा की व्यवस्था हो। उनको अपने माता-पिता और संरक्षकों का पूरा प्रेम प्राप्त हो। उनको पूरा आहार मिले। उनको अच्छी-अच्छी बातें बतलाई जाएं। उनको अच्छी आदतें सिखाई जाएं। उनकी गति-विधियों को रचनात्मक दिशा की ओर मोड़ने के भरपूर प्रयत्न किये जाएं। पण्डित नेहरू बाल कल्याण को इसी कारण इतना महत्त्व देते थे। बाल-कल्याण को वे देश की उन्नति का प्रमुख आधार मानते थे।

चाचा नेहरू

पण्डित नेहरू बालकों की नाईं सीधे और सरल स्वभाव के थे। उन्हें बच्चों से स्वाभाविक प्रेम था। वे बच्चों के साथ खेलते समय राष्ट्र की गम्भीर-से-गम्भीर समस्याओं को भी एक ओर रख देते थे। वे विनोद और क्रीड़ा को 'स्वर्ग की कुंजी' के नाम से पुकारते थे। उन्होंने मुदित मन वालों को चिकित्सक की उपाधि दी थी। बच्चों से हास्य विनोद करने के बाद जब वे स्वस्थ मन से देश-विदेश की गम्भीर समस्याओं से जूझते तो शीघ्र ही उनका हल निकाल लेते। कठिन से कठिन कार्यों और परिस्थितियों पर वे शीघ्र ही विजय पा जाते। वास्तव में उन्हें बच्चों से बड़ी स्फूर्ति, प्रसन्नता और प्रेरणा प्राप्त होती थी। वे तो बच्चों की कमनीय कान्ति में अपना अस्तित्व तक विलीन कर देते थे। इसी कारण जब बच्चे उन्हें 'चाचा नेहरू' कहकर संबोधित करते, तो उनका हृदय पुलकायमान हो जाता था। उनके हृदय में वात्सल्य रस उमड़ आता था। वे प्रायः अपने दर्शकों की भीड़ में से बच्चों को खींच कर अपनी गोद में उठा लिया करते; उन्हें प्यार करते और उन्हें ममता भरी दृष्टि से निहारते।

वे बच्चों के लिए 'चाचा नेहरू' थे। कोई भारत के प्रधान मन्त्री नहीं। यह उनका विनोदी व्यक्तित्व था जो राजनैतिक समस्याओं में चिन्तित नेहरू के व्यक्तित्व से बिलकुल अलग था। यह उनका मुस्कान भरा चेहरा था, जिसमें क्रोध की लेशमात्र झलक न थी। यह उनकी प्यार भरी आकर्षक आंखें थीं जो सब बच्चों को स्नेह पाश में बांध लेती थीं। यह उनका मुदित मन था जो सबको मोह लेता था। यह उनका मधुर हास था, जो सबको अपना बना लेता था। यही उनके महान् व्यक्तित्व की विशेषता थी।

बाल-दिवस

१४ नवम्बर को पण्डित नेहरू का जन्म-दिन देश-भर में और संसार के कोने-कोने में बड़ी शान के साथ मनाया जाता था। किन्तु बच्चों के लिए यह दिन बहुत महत्त्व का होता था। देश के करोड़ों बच्चे इस दिन को अपने 'चाचा नेहरू' के जन्म-दिन के रूप में मनाते थे। और नेहरूजी स्वयं अपने जन्म-दिन को 'बाल-दिवस' के रूप में मानते थे।

१४ नवम्बर को प्रातःकाल से ही प्रधानमन्त्री भवन के द्वार सबके लिए खुल जाते। हजारों की संख्या में राजधानी के बच्चे अपने हाथ में माला लेकर अपने चाचा का हार्दिक स्वागत करने वहां पहुंचते और उनके गले में हार पहनाते। उस

दिन नेहरूजी की प्रसन्नता का पारावार नहीं होता। वे बच्चों को प्यार करते, दुलारते, उनको फूलों की माला पहनाते और उनके गालों पर थपकी लगाते। वे उनके साथ घुल-मिल जाते और उनके बीच में अपने आपको भूल जाते।

उसी दिन राजधानी के नेशनल स्टेडियम में भी एक विशाल समारोह होता जिसमें राजधानी के हजारों विद्यार्थी बड़े उत्साह के साथ भाग लेते थे। वह समारोह एक अभूतपूर्व समारोह होता था। राजधानी के बच्चे इस समारोह की साल-भर बेचैनी से प्रतीक्षा करते थे। इस समारोह की एक विशेषता ही प्रधानता करता था। समारोह का प्रत्येक कार्य विद्यार्थियों और बच्चों द्वारा ही सम्पन्न होता था। सबसे पहले पण्डित नेहरू श्वेत कपोतों को अपने कर कमलों से आकाश में उड़ाते। श्वेत कपोत शान्ति का प्रतीक होता है। पण्डित नेहरू स्वयं विश्व-शांति और मानवता के महान् प्रतीक थे। उनको श्वेत कपोत उड़ाने में भी परम शांति का अनुभव होता था। एक बार एक कपोत उड़कर पण्डित नेहरू के कंधे पर बैठ गया। बच्चों का कार्यक्रम दो घण्टे तक लगातार चलता रहा। पण्डित नेहरू चिलचिलाती धूप में उसी मुद्रा में बैठे रहे और बड़े चाव से सारा कार्यक्रम देखते रहे। वह कपोत भी पण्डित नेहरू के कंधे पर बैठा हुआ बच्चों का कार्यक्रम अन्त तक देखता रहा। जब पण्डित नेहरू अपने स्थान से उठे तभी वह कपोत भी पण्डित नेहरू के कंधे पर से उड़कर स्वतन्त्र पक्षी की भांति नीलाम्बर में शांति के साथ विलीन हो गया। उस कपोत ने पण्डित नेहरू की आत्मीयता, शान्तिप्रियता, सरलता और सौम्यता का दो घंटे तक जो अनुभव किया, उससे उसे कितनी शांति मिली होगी।

हस्ताक्षर अंग्रेजी में, तारीख उर्दू में

१४ नवम्बर के दिन बहुत से बच्चे एक साथ नेहरूजी को घेर लेते थे। कुछ बच्चे अपने हाथ में आटोग्राफ बुक लिए रहते थे और नेहरूजी से उनके हस्ताक्षर देने का निवेदन करते थे। नेहरूजी उन्हें कभी निराश नहीं करते और प्रसन्नता से हस्ताक्षर कर देते। एक बार एक बच्चे ने नेहरूजी के सामने अपनी आटोग्राफ बुक रखते हुए कहा, "इस पर दस्तखत कर दीजिए।" नेहरूजी ने अंग्रेजी में हस्ताक्षर कर दिये। बच्चे ने कुछ देर उनके हस्ताक्षरों को देखा, फिर बोला, "तारीख तो आपने डाली नहीं।" उन्होंने हस्ताक्षर के नीचे तारीख डाल दी। बच्चे ने देखा तो चाचा नेहरू की ओर मुस्कराकर देखता हुआ बोला, "तारीख तो उर्दू में है, दस्तखत अंग्रेजी में।" चाचा नेहरू ने मुस्करा उत्तर दिया, "तुम्हारे हर्ष का [illegible]

'साइन' कहा, तो मैंने अंग्रेजी में 'साइन' कर दिये और उर्दू में तारीख कहा तो उर्दू में तारीख डाल दी।" यह बात सुनकर सारे बच्चे एक साथ खिलखिलाकर हंस पड़े और नेहरूजी ने भी उनकी हंसी में, अपना योग दिया।

इस प्रकार के मधुर-हास परिहास और विनोद के साथ, बच्चे चाचा नेहरू का जन्म-दिन मनाते थे।

दिवाला निकल गया

नेहरूजी जहां कहीं जाते उन्हें गुलाब के हार अवश्य पहनाये जाते। वे इन पुष्पहारों को बच्चों में बांट दिया करते। एक बार जब वे हार बांट रहे थे तो बच्चों की संख्या अधिक थी और पुष्पहार कम। यह देखकर चाचा नेहरू बोले, "इस तरह तो दिवाला निकल जायेगा।"

संयोजकों ने कुछ हार और मंगवाये किन्तु वे भी बच्चों में बंटकर समाप्त हो गए तो चाचा नेहरू ने कहा, "आखिर दिवाला निकल ही गया।" और सारे बच्चे एक साथ खिलखिलाकर हंस पड़े।

काजू उछाल कर खा सकते हो

एक बार नेहरूजी वाराणसी गये। वहां एक स्कूल के छात्रों ने उन्हें अपने यहां निमन्त्रित किया। नेहरूजी उसमें गये। समारोह के बाद दावत हुई। नेहरू जी जहां बैठे थे, वहां छात्रों की भीड़ जमा हो गई। नेहरूजी उनके साथ घुल-मिल-कर हंसने-हंसाने लगे। नेहरूजी ने पूछा "क्या काजू उछालकर खा सकते हो?

उन्होंने काजू हाथ से उछालकर खाने का प्रयत्न किया लेकिन असफल रहे। तब नेहरूजी ने एक काजू कुछ ऊपर उछाला और लपककर मुंह में ले लिया। उनका लपकना देखकर छात्र खिल-खिलाकर हंसने लगे। फिर भी चाचा नेहरू उन्हें अपनी करामात दिखाते रहे।

मुस्काना चाहता हूं

सन् १९५० में अपने जन्म दिवस से एक दिन पहले नेहरू जी ने कुछ बच्चों के बीच नई दिल्ली में बड़े ही दिलचस्प ढंग से कहा—"जानते हो, कल मेरा जन्म दिवस है। मैं बाहर नहीं निकलूंगा क्योंकि लोग मुझे बूढ़ा दिखाना चाहते हैं कि मैं इकसठ वर्ष का हो गया हूं लेकिन मैं मुस्काना चाहता हूं।"

वापस ले जायेंगे क्या ?

उन दिनों की बात है जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया था। चीन का सामना करने के लिए देश को सैनिकों की ही नहीं धन की भी आवश्यकता थी। नेहरूजी के आह्वान पर समूची भारतीय जनता मातृभूमि की स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए कटिबद्ध हो उठी। देश की सुरक्षा के लिए सीमाओं पर देश के वीर सैनिकों ने प्राणों की बाजी लगानी शुरू की और देश की जनता ने देश की सुरक्षा के लिए जी खोलकर धन देना आरम्भ कर दिया।

उस वर्ष नेहरूजी का ७३वां जन्म दिन था। पंजाब ने निश्चय किया था कि वह नेहरूजी के इस जन्म दिन पर उन्हें सोने से तोलेगा और फिर उनके वजन का दुगुना सोना रक्षा कोष में देगा।

यही हुआ, १४ नवम्बर, १९६२ को पंजाब के मुख्यमन्त्री कार सन्दूकों में सोना भरकर दिल्ली आए। प्रधान मन्त्री भवन के एक लान में नेहरूजी को तोला गया तो उनका वजन केवल १२१ पौंड ही निकला। पंजाब की जनता की प्रतिज्ञा के अनुसार पंजाब के मुख्यमंत्री ने नेहरूजी के वजन का दुगुना सोना अर्थात् २४२ पौंड सोना तौल दिया। लेकिन फिर भी काफी सोना बच गया। उसे देखकर नेहरूजी ने एक निगाह अपने ऊपर डाली और फिर उस बचे हुए सोने को देखकर बड़े भोलेपन, किन्तु कुछ चिन्तित मुद्रा में पूछा—"क्या इस बचे हुए सोने को आप वापस ले जायेंगे।"

नेहरूजी की यह बात सुन [illegible] सब मासूमियत और उनके चेहरे पर शरारती विनोद देखकर लॉन में खड़ी भीड़ ठहाका मारकर हंस पड़ी।

पल-भर नेहरूजी हंसती हुई भीड़ को देखते रहे फिर अपनी बात पर स्वयं भी ठहाका लगाकर हंस पड़े। और प्रधानमंत्री भवन लोगों के हर्षमिश्रित ठहाकों से गूंज उठा।

मिठाई खाने को तो कुछ दो

उसी समय की एक घटना और है—पंजाब से आए हुए लोगों में एक अस्सी वर्षीय वृद्धा भी थी। मुलाकात के बाद उसने नेहरूजी के माथे पर रोली का तिलक लगाया। और उन्हें 'पुत्तर नेहरू' कहकर आशीर्वाद दिया।

"आशीर्वाद तो दे दिया अब मिठाई खाने को भी तो कुछ दो अपने पुत्तर को।" नेहरूजी बच्चे की तरह मचलते हुए बोले।

नेहरूजी के इन शब्दों के उत्तर में फिर एक बार हंसी की लहर दौड़ गई।

उसने अपनी उंगली से अंगूठी निकाली और हंसते हुए अपने पुत्तर नेहरू की खुली हुई हथेली पर रख दी।

बस यह फूल ही

उसी समय दिल्ली बालकनजी बारी के सदस्य बच्चों तथा नगर के अनेक बच्चों ने नेहरूजी के जन्म दिन पर हर वर्ष की तरह फूल मालाएं पहनाकर इसे और गुलदस्ते, भेंट करके, उन्हें बधाई दी।

अचानक फूलों का गुच्छा भेंट करती एक बालिका का मुंह थपथपाते उसके प्यारे चाचा नेहरू बोल उठे—"बस यह थोड़े से फूल ही।"

बालिका अपने प्रिय चाचा की बात सुन जैसे पुलक उठी, उसने अपने कान के सोने के कर्णफूल निकालकर नेहरूजी को दे दिये।

सारा लॉन नेहरूजी और बच्चों के सम्मिलित ठहाकों से फिर एक बार गूंज उठा।

बच्चों का सवाल—नेहरूजी का जवाब

लगभग सात-आठ वर्ष पहले की बात है। नेहरूजी के जन्म-दिवस के अवसर पर आल इंडिया रेडियो ने नेहरूजी के निवास स्थान पर ही बच्चों के रेडियो प्रोग्राम का आयोजन किया। आयोजन में नेहरूजी के साथ ही इंदिरा गांधी ने भी भाग लिया। इंदिराजी कुछ दिन पहले ही जापान से लौटी थीं। उन्होंने जापान के दौरे के मनोरंजक संस्मरण बच्चों को सुनाए।

देश ही नहीं विदेश के बच्चों के मन में भी नेहरूजी को देखकर या उनके निकट जाकर किसी प्रकार के भय या संकोच का अनुभव न होता था। एक बच्चा अचानक नेहरूजी से पूछ बैठा, "अब आप यह बताइये कि जब आप हमारे जैसे बच्चे थे तब से अब की दुनिया में आपको सबसे बड़ा फर्क क्या दिखाई देता है?"

बच्चे का यह सवाल सुनकर नेहरूजी पल-भर को मौन होकर उस बच्चे की ओर देखते रह गये। असमंजस की एक रेखा उनके मुस्कराते चेहरे पर झलक उठी, लेकिन दूसरे ही क्षण वे संभल गये और बोले, "यों तो तब से बहुत-सी चीजें बदल गई हैं। मगर जो सबसे बड़ा फर्क मुझे दिखाई देता है वह यह है कि अब आसमान में हवाई जहाज उड़ते हुए बहुत दिखाई देते हैं, पहले तो कभी-कभी कोई इक्का-दुक्का जहाज दिखाई पड़ जाता था, लोगों की भीड़ उसे देखने के लिए इकट्ठी हो जाती थी, वह अब नहीं होती।"

और पल-भर रुककर हंसते हुए बोले, "और तुम्हें मालूम ही है कि आजकल एक कुत्ता भी आसमान की सैर कर रहा है, और दुनिया के चक्कर लगा रहा है।"

नेहरूजी का उत्तर सुनकर बच्चे हंस पड़े। नेहरूजी हंसते हुए फिर बोले, "इस पर तो बहुत-सी किताबें लिखी गई हैं—साइंस वगैरा की, जो तुम बड़े होकर पढ़ोगे। मैं कभी-कभी सोचता हूं कि इस पर कुछ लिखूं।"

एक बच्चे ने हंसते हुए कहा, "सचमुच ! आप जरूर लिखिए, लिखते क्यों नहीं हैं ?"

"क्या करूं वक्त नहीं मिलता।" नेहरूजी ने बड़ी गम्भीरता से कहा, और फिर दूसरे ही क्षण बच्चों की हंसी में उनकी हंसी शामिल हो गई।

तीर्थराज दफ्तर

एक बार कुछ बच्चे अध्यापकों के साथ नेहरूजी से मिलने गये। उनकी कोठी पर पहुंचे तो सेक्रेटरी ने उन्हें कुछ देर प्रतीक्षा करने के लिए कहा। कोई आधे घण्टे बाद पंडितजी आये। आते ही उन्होंने अपने सेक्रेटरी को डांट पिलाई, "अरे तुमने इन लोगों को कुछ खिलाया-पिलाया नहीं। मैं तो इसीलिए देर करके आया हूं कि तुम इन लोगों को खिला-पिला रहे होगे। खैर, जल्दी करो।"

और इतना कहकर पंडितजी वहीं मूढ़े पर बैठ गये और बातें करने लगे। खाने-पीने के बाद बच्चों ने एक गीत सुनाया। पंडितजी ध्यान पूर्वक गीत सुनते रहे। ज्यों ही गीत समाप्त हुआ, कदम उठे और दो बार ताली बजाकर बोले, "अच्छा भाई ! हम तो चलते हैं अपने तीर्थराज दफ्तर को।

आप भी नाचिये

सेवाग्राम में नेहरूजी आये तो बच्चों ने कुछ नृत्य-गान कार्यक्रम प्रस्तुत किया। नृत्य चल रहा था कि एक बालिका ने नेहरूजी का हाथ पकड़कर कहा, "चाचाजी, आप भी हमारे साथ नाचिये।"

नेहरूजी सकपका गये। बालिका का गाल थपथपाते हुए इतना ही बोले, "इस बार नहीं, अगली बार जब सेवाग्राम आऊंगा तो नाच सीखकर आऊंगा।"

हंसते-हंसते लोट-पोट

१९५३ में ग्वालियर के एक जलसे में स्कूलों के बच्चों ने नाटक का आयोजन किया। नाटक समाप्त हुआ तो बच्चों ने कहा, "चाचाजी आप हमें कुछ उपदेश

बच्चों को बांट दिये।

अजीब किस्म का जानवर

एक दिन प्रधानमंत्री निवास पर बालकनजी बारी के बहुत से बच्चे इकट्ठे हो गये। कुछ लोग ऊपर की मंजिल पर पंडित जी से बातें कर रहे थे। बच्चों के पहुंचने का समाचार पाकर पंडित जी नीचे उतर आये। बच्चों ने पंडित जी को देखते ही 'चाचा नेहरू जिन्दाबाद' के नारे लगाये। पंडित जी उनकी ओर गये और बीच में खड़े होकर बोले, "आओ मैं तुम्हें एक जानवर दिखाऊं।"

बच्चों की फौज उनके साथ चल दी। एक घेरे के पास जाकर उन्होंने बच्चों को रुकने को कहा और स्वयं दाएं हाथ में सफेद दस्ताने पहनकर उसके अन्दर चले गये। वहां उनका प्रिय पांडा नामक जानवर पेड़ के तने पर बैठा था। बड़े प्यार से उन्होंने उसे पुकारा, बड़ी कोमलता से उसकी पीठ सहलाई, फिर उसे धीरे-धीरे नीचे उतारा।

बच्चों से पूछा, "अच्छा बताओ कौन जानवर है?"

बच्चों में से एक ने कहा, "यह भालू है।"

"वाह खूब पहचाना। अरे, कहीं भालू ऐसा होता है?" नेहरूजी ने मुस्कराते हुए कहा।

दूसरे बच्चे ने कहा, "नहीं, यह ऊद बिलाव है।"

"ऊद बिलाव! अरे ऊद बिलाव तुमने देखा भी है? यह न भालू है न ऊद बिलाव। यह भालू बिल्ली के बीच की किस्म का एक जानवर है। जब मैं असम गया था तो मुझे भेंट में मिला था।"

बच्चों में से एक ने पूछा, "चाचाजी, यह खाता क्या है?"

"पत्तियां" उन्होंने उत्तर दिया।

एक लड़के ने पास के पेड़ से पत्तियां तोड़ने की कोशिश की तो पंडित जी ने रोक लिया। बोले, "यह हर किस्म के पेड़ की पत्तियां थोड़े ही खाता है। आखिर अजीब किस्म का जानवर है न।"

यह थे नेहरूजी के बच्चों के साथ हास्य-विनोद के कुछ संस्मरण। उनके इस अनोखे प्रेम के कारण ही सामाजिक कार्यकर्ताओं के हृदय में भी बाल कल्याण की भावना जागृत हुई। नेहरूजी की प्रेरणा से देश के कोने-कोने में बालकनजी बारी की शाखाएं स्थापित हो गईं। नेहरूजी ने गांवों में तो शिशु कल्याण को सामुदायिक विकास योजना का एक प्रमुख अंग बना दिया। क्योंकि वे समझते थे कि गांवों में

किसी भी रचनात्मक कार्य, किसी भी नये सुधार, किसी भी नये विचार की सफलता के लिए उनका वांछित सहयोग आवश्यक है। उनकी यही इच्छा थी कि बच्चों का अच्छा संगठन हो, उनकी गतिविधियों को सही दिशा प्राप्त हो, उनके विकास के पूरे अवसर प्रदान किये जाएं और उनके उत्साह और शक्ति का समुचित उपयोग किया जाए।

वस्तुतः बच्चों में ही वे भारत के भावी स्वरूप का दर्शन करते थे। बच्चों के प्रति उनका सहज अनुराग, उनका स्वाभाविक प्रेम, उनका सरल स्नेह सर्वत्र संसार के लिए प्रेरणा का स्रोत रहेगा।

•••

भारत की दौलत—उसके बच्चे

"मुझे बड़ा दुःख होता है, जब मैं कहीं देखता हूं या सुनता हूं कि हमारे छोटे बच्चों की देखभाल ठीक नहीं होती। क्योंकि असल में भारत की दौलत उसके बच्चे हैं। अगर उनकी देखभाल हम ठीक न करें, उनके खाने पीने, कपड़े का, पढ़ाई और स्वास्थ्य का ठीक प्रबन्ध न करें तो कल का आने वाला भारत पिछड़ा हुआ होगा। यह बात नहीं होना चाहिये।"

—जवाहरलाल नेहरू

८

मूल्यांकन

पंडित जवाहरलाल नेहरू का कितना प्रभाव भारत के और विश्व के जन मानस पर पड़ा, इसका इस समय अनुमान लगाना बहुत कठिन है।

किसी भी महापुरुष का समकालीन लेखकों के लिए मूल्यांकन करना बहुत मुश्किल होता है। कारण यह है कि महापुरुष की अच्छाइयां, बुराइयां, बड़ी और छोटी बातें सभी समकालीन लेखकों के सामने घटित होती हैं। अतः निरपेक्ष मूल्यांकन की सम्भावना कम होती है। फिर काल की विस्मृति का काला परदा जब व्यक्ति के प्रकाश को रोककर भी रोक नहीं पाता, तब जाकर वास्तविक मूल्यांकन होता है।

निश्चय ही राम के समय में लोग उनके मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप के साथ न जाने कितने गुण-दोष याद करते होंगे। किन्तु आज राम का नाम आते ही मानवीय गुणों का एक पुंज, भारतीयता का पावन प्रतीक, ही सामने आता है।

श्रीकृष्ण अपने समय में भगवान या योगिराज के रूप में सर्व-साधारण के सामने थे अथवा नहीं, कहना मुश्किल है। किन्तु आज उनका यही रूप सर्वविदित है।

बुद्ध के समकालीन उनके किन गुणों से प्रभावित थे, इसका कुछ पता नहीं। किन्तु आज तो वे करुणा के सागर ही हैं। महावीर अपने तप और अहिंसा के लिए आज विख्यात हैं जब कि उस काल में भी व्यक्ति और ऐसे थे जो अपने-आप को जैनियों का अंतिम तीर्थंकर घोषित करते थे।

ईसा का मानव जाति के लिए प्यार और दुःख पता नहीं उनके जीवनकाल में अथवा उनके देहावसान के तुरन्त बाद समझा जाता था कि नहीं। हजरत-मोहम्मद का भाईचारा, आत्मीय प्रेम जिसके लिए उन्हें याद किया जाता है तत्का-लीन समाज में था या नहीं, कोई नहीं जानता।

सम्राट अशोक को अजात-शत्रु कहा जाता है। शंकराचार्य और स्वामी दया-नन्द की धार्मिक मान्यताएं और अपने सिद्धान्तों में आस्था क्या भुलाई जा सकती है?

महात्मा गांधी सदियों से गुलामी में पड़े देश को जगाने, राजनीति में धर्म और नैतिकता लाने तथा अहिंसा और सत्याग्रह के अस्त्र से देश को स्वतन्त्र कराने के लिए युग-युगों तक याद किये जाते रहेंगे।

जिस प्रकार उपर्युक्त व्यक्ति अपने विशिष्ट गुणों के लिये याद किये जाते हैं; उसी प्रकार जवाहरलाल नेहरूजी को निर्भीक, राजनेता, निडर, क्रांतिकारी, कुलीन होते हुए भी मानव मात्र को एक समान समझनेवाला, साम्प्रदायिक समभावी, धर्मनिरपेक्ष, शांति और विश्वशांति के मसीहा के रूप में सदा याद किया जाता रहेगा। आज मनुष्य में जितने गुण हो सकते हैं वे सभी उनमें दिखाई देते हैं। *बच्चों के प्यारे, नारियों के प्रति सम्मानशील, विरोधियों के प्रति सहिष्णु भारत* की मिश्रित संस्कृति के उन्नायक, गंगा के प्रेमी, (धार्मिक अंधभाव से नहीं) भारत की सदा प्रवाहित प्रगतिशील सांस्कृतिक परम्परा के प्रतीक के रूप में सदा अमर रहेंगे। वे राजकुमार की तरह जन्मे और पले, किन्तु किसानों और मजदूरों के एक मात्र सहारे बन गये। संसार-भर के मनुष्यों की पीड़ा हरने के लिए उन्होंने *क्या कुछ नहीं किया। देश को पराधीनता की बेड़ियों से निकालकर विज्ञान और तक-नीक के युग में ला रखा।* जैसा कि वह स्वयं कहा करते थे "गोबर से गैस और बैलगाड़ी से विमान युग आये बिना भारत का विकास नहीं होगा।"

वे भारत के सबसे बड़े महान् मानव थे और विश्व के महान् मानवों में उनका *प्रमुख स्थान रहेगा। यद्यपि नेहरूजी हमारे बीच नहीं हैं। किन्तु इसका यह अर्थ* नहीं कि नेहरू युग समाप्त हो गया है। सत्य के विपरीत इससे बड़ी और कोई बात नहीं हो सकती। नेहरूजी बीसवीं शताब्दी के थे और उन्होंने जनता को बीसवीं शताब्दी का ही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित किया था और उसमें उन्हें शान-दार सफलता मिली। *अभी बीसवीं शताब्दी के ६३ वर्ष ही पूर्ण हुए हैं और ३७ वर्ष शेष हैं। इस कारण नेहरू युग को अभी से समाप्त समझना उचित नहीं।*

लोकतन्त्र में निष्ठा

नेहरूजी की यह धारणा थी कि मानव का दुःख किसी वाद, अथवा समाज व्यवस्था का इस राष्ट्र या उस राष्ट्र से लड़ने से दूर नहीं होगा। वह तभी दूर होगा जब संसार में शांति होगी, एक-दूसरे के प्रति घृणा समाप्त हो जायेगी, छोटे-

बड़े का मान-अपमान न होगा, रंग, जाति, धर्म का कोई भेद न होगा और सर्वोपरि मानव की आवश्यकताएं पूरी होंगी। उसमें हीनभाव न रहेगा। इसके लिए उन्होंने तटस्थता, शांति, मैत्री, सहजीवन, पंचशील, आपसी मतभेदों को दूर करने के लिए बातचीत द्वारा निर्णय, आदि नीतियां अपनाईं। यह सर्वविदित है कि उनके प्रभाव से कोरिया, इंडोचीन, कांगो आदि विश्व युद्ध की चिंगारी लगाने वाले विवाद, आंशिक रूप से हल हो गये और लड़ाई रुक गई।

भारत की यह विशेषता रही है कि समय-समय पर और आवश्यकता के अनुसार यहां महापुरुषों का अवतार होता रहा है। लोकमान्य तिलक के बाद महात्मा गांधी और महात्मा गांधी के बाद पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भारत क्षितिज में पदार्पण से देश ने रिक्तता का अनुभव नहीं किया। देश ने और दल ने नेहरूजी को तानाशाह बनने की पूर्ण सुविधा प्रदान की थी; किन्तु वह स्वेच्छाचारी तानाशाह नहीं बने। उन्होंने लोकतन्त्र का पूर्ण सम्मान किया और ऐसा कोई कदम नहीं उठाया जिसे लोकतंत्र विरोधी कहा जा सके। मानव होने के नाते, वे एक अत्यन्त उत्तरदायी व्यक्ति थे। उन्होंने लोकतन्त्र के अनुशासन को स्वीकार किया और शांति, न्याय और स्वतंत्रता के सजग प्रहरी रहे।

सदैव उत्तरदायी

किसी के लिए कभी कोई ऐसा समझने का कारण न था कि वे जो कुछ कह रहे थे, नहीं करेंगे। जो भी कार्य उन्होंने संभाला, चाहे वह छोटा हो अथवा बड़ा जिसकी मिसाल बहुत कम मिलती है, उसे उन्होंने पूर्ण न किया। यदि उन्होंने कोई पुस्तक देने, पत्र लिखने, लेख लिखने अथवा किसी समारोह में भाग लेने का वचन दिया, तो उसका पालन किया और किसी को स्मरण दिलाने या यह आशंका करने की आवश्यकता नहीं थी कि वे भूल जायेंगे। जनता के प्रति अपने व्यवहार में वे सदैव उत्तरदायी और विश्वसनीय रहे।

उनकी निःस्वार्थ भावना उनके प्रत्येक निश्चय को सर्वोत्तम बना देती थी, जो सदैव जनता के हित में होता था उनका प्रत्येक कार्य 'जन सुखाय व जन हिताय' होता था। अमरीका के भूतपूर्व राष्ट्रपति जॉन केनेडी ने उनका व्यक्ति स्वतन्त्रता के विषय में अपने महत्वपूर्ण विचार इस प्रकार प्रकट किये थे :

"इस भारतीय नेता से अधिक व्यक्ति स्वातन्त्र्य में विश्वास रखने वाला और कोई दूसरा व्यक्ति मैंने इस संसार में नहीं देखा।"

अद्वितीय

महात्मा गांधी ने बहुत पहले ही सन् १९२९ में नेहरूजी के प्रति अपने विचार सूक्ष्म रूप में इस प्रकार व्यक्त किये थे :

"वे स्फटिक की भांति स्वच्छ हैं। संदेह की सीमा से परे, सच्चे हैं। वे एक अद्वितीय एवं निर्विकार सेनानी हैं। देश उनके हाथों में सुरक्षित है।"

यह भविष्य वाणी पूर्ण रूप से सत्य सिद्ध हुई। यही उनका मूल्यांकन भी कहा जा सकता है। उन्होंने दुनिया को यह दिखा दिया कि किस प्रकार एक युग के बाद दूसरे युग में सम्मान पूर्वक पदार्पण किया जा सकता है। उन्होंने सभी प्रकार के साम्राज्यवाद का विरोध किया परन्तु प्रतिशोध की भावना उनमें कभी न थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उन्होंने विश्व के सामने यह उदाहरण प्रस्तुत किया कि शासक और शासित के बीच की कटुता को किस प्रकार दूर किया जा सकता है।

श्रीमती सुचेता कृपलानी के शब्दों में, "नेहरूजी भारतीय क्रान्ति की देन ही न थे, वरन् इससे भी अधिक थे। उन्होंने पश्चिमी हेतुवाद, फेबियन समाजवाद और मार्क्सवाद से प्रेरणा प्राप्त की जिसका उद्देश्य विश्व को मानवमात्र के रहने के लिए अधिक उपयुक्त बनाना है। राष्ट्र के लिए नेहरूजी ने जिन व्यक्तियों को निर्धारित किया था, उन्हीं का अनुसरण करके भारत व्यक्तित्व और शक्ति की वृद्धि कर सकता है।"

अविस्मरणीय नेहरू

संसार प्रसिद्ध दार्शनिक व लेखिका एवं नोबल पुरस्कार विजेता श्रीमती पर्ल एस. बक ने नेहरूजी की अविस्मरणीय स्मृति इस प्रकार अंकित की है :

प्रत्येक शताब्दी में इस धरती पर कुछ ऐसे विरले महापुरुष अवतरित होते हैं जो मानवता के मन को प्रकाशित करके, उसके हृदय को स्पर्श करते हैं। जवाहरलाल नेहरू एक ऐसे ही असाधारण व्यक्ति थे। पूर्व एवं पश्चिम के इस [illegible] विरले थे, [illegible] प्रदर्शित किया, [illegible] किसी अन्य व्यक्ति ने नहीं किया और उनका [illegible] भारत के लिए ही हुआ।

[illegible]

[illegible]

बुद्धि, शालीनता और उत्तम आचरण को कभी नहीं भुला सकती। मैं जानती हूं कि यदि हमारा जमाना किसी भी अव्यवस्था या दुर्व्यवस्था से निर्मल किया जाकर अधिक शांतिपूर्ण होता, तो वे एक लेखक के रूप में उच्च चरित्र का निर्माण कर सकते थे क्योंकि उनकी शैली की अपनी विशिष्टता थी और उनकी कल्पना जीवन्त एवं तेजपूर्ण थी।

मुझे उन अनेक पुस्तकों से वंचित किये जाने का खेद है जिनका निर्माण वे कर सकते थे यदि वे अपनी सारी प्रतिभा और क्षमता को अपने राष्ट्र के लिए राजनैतिक सेवा में नहीं खपाते। मैं उनकी गिनी-चुनी महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के लिए कृतज्ञ हूं। जो सब की सब बुनियादी महत्त्व रखती हैं।

सक्रिय नेतृत्व

फिर भी मैं इस सचाई को समझती हूं कि भारत को उनकी पुस्तकों की जितनी आवश्यकता थी, उनके निरंतर सक्रिय नेतृत्व की उससे कहीं अधिक आवश्यकता थी।

प्रत्येक अवस्था में, जवाहरलाल नेहरू एक अविस्मरणीय विभूति हैं। उन्होंने गांधी जी की छत्र-छाया में अपने राजनैतिक जीवन का आरम्भ किया, किन्तु शीघ्र ही अपने स्वतंत्र एवं महान् व्यक्तित्व का निर्माण कर लिया। वे केवल आधुनिक भारत के सर्वोन्नत भाग्य निर्माता ही नहीं थे और रहेंगे, अपितु सचमुच अखिल विश्व के कतिपय सर्वश्रेष्ठ नेताओं की कोटि में उनका मूल्यांकन किया जाएगा।"

आत्म निवेदन

नेहरूजी यह परम आवश्यक समझते थे कि राष्ट्र निर्माण के लिए राष्ट्र की सारी शक्ति केन्द्रित हो जाय। किन्तु जब उन्होंने सभी वर्गों में शिथिलता देखी, तो वे विचलित हो पड़े। उनको यह बात सहनीय न थी। उस समय उनका आत्म-निवेदन कितना मार्मिक था, उनकी अभिलाषा कितनी स्तुति योग्य थी; इसकी झलक इन पंक्तियों से मिलती है :

अपना काम करता जाऊंगा

"इसमें सन्देह नहीं कि राष्ट्र आगे बढ़ रहा है और तरक्की कर रहा है। फिर भी जब मैं अपने चारों तरफ देखता हूं तो मैं काम का वातावरण नहीं देखता, काम की मनोवृत्ति नहीं पाता। केवल बात, केवल आलोचना, दूसरे की बुराई और नुक्ता-

बुद्धि, शालीनता और उत्तम आचरण को कभी नहीं भुला सकती। मैं जानती हूं कि यदि हमारा जमाना किसी भी अव्यवस्था या दुर्व्यवस्था से निर्मल किया जाकर अधिक शांतिपूर्ण होता, तो वे एक लेखक के रूप में उच्च चरित्र का निर्माण कर सकते थे क्योंकि उनकी शैली की अपनी विशिष्टता थी और उनकी कल्पना ओजस्व एवं तेजपूर्ण थी।

मुझे उन अनेक पुस्तकों से वंचित किये जाने का खेद है जिनका निर्माण वे कर सकते थे यदि वे अपनी सारी प्रतिभा और क्षमता को अपने राष्ट्र के लिए राजनैतिक सेवा में नहीं खपाते। मैं उनकी गिनी-चुनी महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के लिए कृतज्ञ हूं। जो सब की सब बुनियादी महत्त्व रखती हैं।

सक्रिय नेतृत्व

फिर भी मैं इस सचाई को समझती हूं कि भारत को उनकी पुस्तकों की जितनी आवश्यकता थी, उनके निरंतर सक्रिय नेतृत्व की उससे कहीं अधिक आवश्यकता थी।

प्रत्येक अवस्था में, जवाहरलाल नेहरू एक अविस्मरणीय विभूति हैं। उन्होंने गांधी जी की छत्र-छाया में अपने राजनैतिक जीवन का आरम्भ किया, किन्तु शीघ्र ही अपने स्वतंत्र एवं महान् व्यक्तित्व का निर्माण कर लिया। वे केवल आधुनिक भारत के सर्वोन्नत भाग्य निर्माता ही नहीं थे और रहेंगे, अपितु सचमुच अखिल विश्व के कतिपय सर्वश्रेष्ठ नेताओं की कोटि में उनका मूल्यांकन किया जाएगा।"

आत्म निवेदन

नेहरूजी यह परम आवश्यक समझते थे कि राष्ट्र निर्माण के लिए राष्ट्र की सारी शक्ति केन्द्रित हो जाय। किन्तु जब उन्होंने सभी वर्गों में शिथिलता देखी, तो वे विचलित हो पड़े। उनको यह बात सहनीय न थी। उस समय उनका आत्म-निवेदन कितना मार्मिक था, उनकी अभिलाषा कितनी स्तुति योग्य थी; इसकी झलक इन पंक्तियों से मिलती है :

अपना काम करता जाऊंगा

"इसमें सन्देह नहीं कि राष्ट्र आगे बढ़ रहा है और तरक्की कर रहा है। फिर भी जब मैं अपने चारों तरफ देखता हूं तो मैं काम का वातावरण नहीं देखता, काम की मनोवृत्ति नहीं पाता। केवल बात, केवल आलोचना, दूसरे की बुराई और नुक्ता-

निरंतर चलना है

सघन और सुन्दर हैं वनप्रान्तर माना।
किन्तु वचन बहुत से अभी हैं निभाना।।
और पूर्व सोने के कोसों है जाना।
और पूर्व सोने के कोसों है जाना।।

भलाई ही भलाई

नेहरूजी ने अपने सार्वजनिक जीवन में जो कदम उठाये और जो निर्णय लिये, उन सब में भलाई ही भलाई थी। इसमें उन्हें कोई शंका नहीं थी। उन्होंने इस बात को स्पष्ट करते हुए यहां तक कहा :

"अगर अपने मौजूदा ज्ञान और अनुभव के साथ मुझे अपने जीवन को फिर से दुहराने का मौका मिला, तो इसमें शक नहीं कि मैं अपने व्यक्तिगत जीवन में अनेक फेरफार करने की कोशिश करूंगा, जो कुछ मैं पहले कर चुका हूं, उसको कई तरह से सुधारने का प्रयत्न करूंगा, लेकिन सार्वजनिक विषयों में मेरे प्रमुख निर्णय ज्यों के त्यों बने रहेंगे। निःसन्देह, मैं उन्हें बदल नहीं सकता, क्योंकि वे मेरी अपेक्षा कहीं अधिक बलवान हैं और मेरे ऊपर रहने वाली एक शक्ति ने मुझे उनकी ओर धकेला था।"

उनके अन्तर से निकले यह भाव कितनी स्पष्टता, दृढ़ता और निष्ठा से ओत-प्रोत हैं।

रूस के महान् क्रांतिकारी नेता लेनिन के प्रति नेहरूजी ने अपनी पुस्तक 'इतिहास के महापुरुष' में निम्न शब्दों में अपनी श्रद्धांजली अर्पित की थी—

महानता के चार चांद

'लेनिन को मरे बहुत वर्ष नहीं बीते हैं, लेकिन इतने थोड़े समय में ही वह न केवल अपने रूस में, बल्कि सारे संसार में, एक प्रबल परम्परा का संस्थापक बन गया है। जैसे-जैसे समय बीतता है, उसकी महानता को चार चांद लगते जाते हैं, वह संसार के अमर जनों की सर्वोत्कृष्ट श्रेणी में गिना जाने लगा है।···लेनिन जीवित है, यादगारों में या तस्वीरों में नहीं, बल्कि अपने किये हुए जबरदस्त कार्यों में, और करोड़ों श्रम जीवियों के हृदयों में, जो उसके उदाहरण से स्फूर्ति और अच्छे दिनों की आशा का सन्देश प्राप्त करते हैं।"

नेहरूजी भी जीवित रहेंगे तस्वीरें और यादगारें बनाने से नहीं, बल्कि भारत

और विश्व के करोड़ों लोगों के हृदय में बसकर। और जैसे-जैसे समय बीतता जाएगा, उनकी महानता को चार चांद लगते जाएंगे। उन्होंने इस सम्बन्ध में एक बार यह कहा :

मेरे मरने के बाद

"मेरे मरने के बाद मुझे इसकी कतई फिक्र नहीं है कि मेरे बाद दूसरे लोग मेरे बारे में क्या सोचेंगे। मेरे लिए तो बस इतना ही काफी है कि मैंने अपने को, अपनी ताकत और क्षमता को भारत की सेवा में लगा दिया है। मुझे इसकी भी परवाह नहीं कि मेरे बाद मेरी प्रतिष्ठा का क्या होगा। अगर मेरे बाद कुछ लोग मेरे बारे में सोचें तो मैं चाहूंगा कि वे कहें, "यह एक ऐसा आदमी था जो अपने पूरे दिल व दिमाग से हिन्दुस्तान से और हिन्दुस्तानियों से मुहब्बत करता था और हिन्दुस्तानी भी उसकी खामियों को भुलाकर उससे बेहद, बेहद मुहब्बत करते थे।"

अट्ठावन राष्ट्रों द्वारा श्रद्धांजलि

काहिरा में ५८ तटस्थ राष्ट्रों का दूसरा सम्मेलन ५ अक्तूबर, १९६४ को काहिरा में प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में सबसे पहले इन राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने जिस आदर के साथ श्री जवाहरलाल नेहरू को याद किया वह नेहरूजी की ख्याति का एक और बड़ा प्रमाण है। भारत के दिवंगत नेता के प्रति तटस्थ राष्ट्र सम्मेलन ने इस अवसर पर श्रद्धा प्रकट करके श्री नेहरू के प्रति अपनी आस्था का ही नहीं वरन् भारत के साथ अपनी मित्रता का भी परिचय दिया। काहिरा के सभी समाचार-पत्रों में एक अद्वितीय विज्ञापन छपा। विज्ञापन में श्री नेहरू का एक चित्र था, जिसमें वे मुस्कराते हुए अभिवादन की मुद्रा में खड़े थे। इस विज्ञापन में लिखा गया था, "अमर नेता नेहरू को श्रद्धांजलि।" विज्ञापन में आगे कहा गया था कि "दुनिया के करोड़ों लोग आज दिवंगत नेता नेहरू की आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। वे शान्ति के महान् पैरोकार थे। नेहरू के नाम पर ही आज करोड़ों दिल खुशी से उछल पड़ते हैं।

नेहरूजी की जीवन कहानी यद्यपि अधिक लम्बी नहीं। किन्तु यह एक अमर पुरुष की अमर कहानी है, जो काल और मृत्यु की सीमा से परे है। इसके अनगिनत उन पर हजार लिखे जायेंगे। और जिनकी कहानी दशकों तक याद कर उनके लिए अपना स्थान दिलायेगी। उनकी स्मृति विश्व के करोड़ों व्यक्तियों के हृदय को

गंगाजल की तरह सदैव पवित्र करती रहेगी।

इतिहास के स्वर्णाक्षर

मैं हमेशा इस बात पर विचार करता रहा हूं कि हम भारतवासी किस रूप में श्री जवाहरलाल नेहरू के प्रति अपना आभार प्रकट करें। राष्ट्र के प्रति उनकी जीवन भर की सेवाएं आधुनिक इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है–विश्व शान्ति के लिए उनका वीरतापूर्ण प्रयास उनकी प्रतिभा में चार चांद लगा देता है।

उनकी स्वार्थ-त्याग की भावना उनके प्रत्येक निर्णय को सर्वोत्तम निर्णय बना देती है। उनका मन स्फटिक के समान निर्मल है, उनका अनुभव विस्तृत है। उनके ये गुण हमारी निधि हैं। यही कारण है कि हमारे देश के करोड़ों नर-नारी न केवल उनके पीछे चलने को हमेशा तैयार रहते हैं बल्कि उनकी इच्छा पर प्रत्येक प्रकार का त्याग करने को प्रस्तुत हैं। मुझे यकीन है, यदि मैं यह कहूं कि जब इस युग का इतिहास लिखने का वक्त आयेगा तब उनका नाम, यदि किसी नाम के बाद दूसरा होगा तो वह केवल महात्मा गांधी के नाम के बाद ही दूसरा होगा।

—बाबू राजेन्द्रप्रसाद
(भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति)

९

श्रद्धांजलियां

युग पुरुष नेहरूजी की परम पावन स्मृति में देश और विदेशों के महान् नेताओं द्वारा भाव भरी श्रद्धांजलियां अर्पित की गईं। उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गई और उनके *मानवीय गुणों का गान किया गया। निश्चय ही अन्य व्यक्ति भी, जो लेखनी* के धनी हैं, उनके अलौकिक चरित्र का वर्णन करेंगे जिनसे पाठकों को समुचित प्रेरणा प्राप्त होगी। किन्तु उन निरीह करोड़ों जनता की क्या दशा होगी। जिनके लिए नेहरूजी सर्वस्व थे। वे शब्दों, लेखों, भाषणों के द्वारा अपने विचार और भावनाओं को प्रकट करने में असमर्थ हैं। *दुःख और वेदना की तीव्रता से उनका हृदय भरा* हुआ है। यद्यपि उनके आंसू सूख गए हैं; वे मौन हो गए हैं; लेकिन फिर भी वे शोकाकुल हैं। कोई भी उनके दुःख की गंभीरता और गहनता की थाह नहीं पा सकता।

इस दुःख को व्यक्त करना असम्भव है। इस दुःख को व्यक्त करने के लिए कहां से शब्द खोजे जाएं। किन शब्दों में, किस भाषा में, किस शैली में इतनी सामर्थ्य है कि वह इस महान् दुःख का सम्पूर्ण रूप से चित्रण कर सके।

संसार के महान् नेताओं ने उनके प्रति जो श्रद्धांजलियां अर्पित की हैं, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

युद्ध को रोका :

ब्रिटेन के ९० वर्षीय महान् दार्शनिक और अणु निःशस्त्रीकरण के आंदोलनकर्ता लार्ड बर्ट्रेंड रसेल ने पंडित नेहरू के देहावसान पर शोक प्रकट करते हुए कहा : "यदि हम भारत के स्वतन्त्र जीवन के इतिहास के अधिकतर भाग पर दृष्टिपात करें तो हम भली-भांति अनुभव कर सकते हैं कि भारत के लिए नेहरू का कितना बड़ा योगदान था। जिस स्वतन्त्रता की नींव का उन्होंने निर्माण किया उसने अनेक बार युद्ध को रोका। नेहरू के राष्ट्र के लोग विभिन्न होने पर भी एक हैं। मुझे

महान जीवन :

"यह इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है। इससे हमारे जमाने के एक अत्यन्त महान् विभूति के जीवन की इति हो गई है।"

सर राबर्ट मेंजीस
(आस्ट्रेलिया के प्रधान मंत्री)

महान सेवक :

"स्वर्गीय प्रधान मन्त्री ने एक राजनीतिज्ञ एवं विश्व-शान्ति के लिए संघर्ष करने वाले नेता के रूप में, गाधीजी के अंतिम संकल्प को मूर्त रूप देकर हम सभी की महान सेवा की थी।"

डा० कोनराड अडेनोवर

अमिट छाप :

"उन्होंने अपने देश के इतिहास पर जैसी अमिट छाप छोड़ी है, वैसी छाप उनके समसामयिक काल मे बहुत कम व्यक्तियों ने छोड़ी है। विश्व के बहुत बड़े देशों में एक भारत देश की नीति बनाने का उत्तरदायित्व लेने के अतिरिक्त, उन्होंने विश्व के घटना-क्रम को भी प्रभावित किया।"

महासचिव ऊथांत

राष्ट्र-स्मारक :

"उनकी मृत्यु गौरवशाली शांति एवं सुषुप्ति के वातावरण मे नहीं हुई बल्कि ऐसे समय पर हुई जब वे प्रधान मन्त्री थे और कठिनाइयों से घिरे हुए थे। उनका स्मारक उनका राष्ट्र है और उनका स्वप्न सभी लोगों के लिए स्वाधीनता और निरन्तर बढ़ने वाला उनकी सुख समृद्धि है।"

अडलाइ स्टीवेन्सन

कूटनीति का सिद्धान्त :

"किसी ने हमें याद दिलाया कि सकट से हाथ खींचकर शान्तिपूर्ण हल निकालने का प्रयत्न करने में जो भी समय लगता है, कभी विलम्ब नहीं माना जाना चाहिए। एक रत्न जिसका कूटनीति का सिद्धान्त बताकर आदर किया जाता था, अब मनुष्य के जीवित रहने के लिए, सर्वाधिक जरूरी व्यावहारिक आवश्यता बन गई है।"

डीन रास्क
(अमरीका के परराष्ट्र मंत्री)

महान राजनीतिज्ञ :

"प्रधान मन्त्री नेहरू विश्व के एक महान राजनीतिज्ञ और विश्व शान्ति के धर्म योधा थे।"

चुंग ही पार्क
(दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति)

गम्भीर क्षति :

"शान्ति, स्वतन्त्रता एवं स्वाधीनता की सेवा में उनके प्रयासों को ध्यान में रखते हुए, उनका देहान्त समस्त जनता के लिए गम्भीर क्षति है।"

लेफ्टिनेंट जनरल तहीर एहिया
(इराक के प्रधान मंत्री)

अपूर्णीय क्षति :

"न केवल भारत, बल्कि समस्त विश्व के लिए, अपूर्णीय क्षति है।"

लोपेज मतियोस
(मैक्सिको के राष्ट्रपति)

अनथक सेनानी :

"उनकी मृत्यु से समस्त शान्तिकामी मानवता, एक सर्वश्रेष्ठ राजनीतिज्ञ, शांति, सहजीवन और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के एक अनथक सेनानी से वंचित हो रही है।"

नोवोटनी
(चेकोस्लोवाकिया के राष्ट्रपति)

विश्व नेता :

"श्री नेहरू न केवल अपने राष्ट्रवासियों के प्रेम प्राप्त देश भक्त थे, जिन्होंने मातृभूमि की सच्ची सेवा की, अपितु दूर-दर्शितापूर्ण एक विश्व नेता भी थे जिन्होंने शान्ति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्द की सेवा की थी।"

जनरल नेविन, बर्मा

प्रतिभा सम्पन्न :

"वे महान् मौलिक प्रतिभा सम्पन्न एवं विशाल हृदय थे।"

इल्या एहरनबर्ग
(सोवियत लेखक)

महानतम नेता :

"भारत ने अपना महानतम नेता और विश्व ने सर्वत्र मानवता के लिए शान्ति न्याय और गौरव का एक प्रबल समर्थक खो दिया है।"

बेरट्रेंड रसेल
(अमरीकी राजदूत)

विदेशी समाचार-पत्रों की श्रद्धांजलियां

सारे संसार के समाचार-पत्रों ने नेहरूजी को युग के महान नेता और महान मानव के रूप में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की थी। उनमें से कुछ श्रद्धांजलि इस प्रकार हैं :

प्रावदा

जवाहरलाल नेहरू ने सोवियत भूमि की १६२७, १६५५ एवं १६६१ में तीन बार यात्रा की थी और हमारे प्रधानमन्त्री का १६५५ एवं १६६० में उन्होंने दो बार अपनी भूमि में भव्य स्वागत किया। उनके ये घनिष्ठ व्यक्तिगत सम्पर्क दोनों राष्ट्रों की जनता के मध्य दृढ़ होने वाले सहयोग के संकेत थे जिसके मार्ग में न हिमालय का उत्तुंग शिखर न सामाजिक प्रणालियों व जलवायु की भिन्नता बाधा खड़ी कर सकती थी।

इतिहास में श्री जवाहरलाल नेहरू भारतीय जनता की स्वतन्त्रता के एक विश्वस्त एवं दृढ़निष्ठ योद्धा के रूप में समझे जायेंगे। गुटों से अलग रहने की भारत की नीति के जिसकी विश्व की समस्त शान्ति प्रेमी शक्तियों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की, मुख्यतया नेहरू ही निर्माता थे।

समस्त सोवियतवासी जवाहरलाल नेहरू को हमारे युग के महान् राजनयिक, एक विश्वस्त शांति-योद्धा तथा सोवियत संघ के सत्यनिष्ठ मित्र के रूप में याद करेंगे।

लुईसविल, कैंटुकी, कोरियर जर्नल

नेहरूजी का देहावसान हुआ है और विश्व ने मानववंश का एक दुर्लभ कम-बात नेता खो दिया है।

शिकागो, ट्रिब्यून

यदि ऐसे व्यक्ति कोई है, जो उचित रूप में अपरिहार्य कहे जा सकते है, तो नेहरू उनमें एक है।

यदि वह अपरिहार्य थे तो इसलिए कि भारत की जनता के मन: पटल पर आधुनिक भारत की प्रतिच्छाया के रूप में अंकित थे और उसकी स्थानपूर्ति करने वाला दूसरा नहीं था।

सान फ्रांसिस्को क्रोनिकल

अब तक इतिहास में, नेहरू की अपेक्षा इतने बड़े जन-समुदाय का राजनैतिक विश्वास, निष्ठा एवं नेतृत्व नहीं मिला। उनकी मृत्यु ने एक महाद्वीप में ऐसा महाशून्य छोड़ दिया है जिसकी ओर भारत के बाहर का कोई व्यक्ति मुंह बाये केवल अनुमान कर सकता है।

सान फ्रांसिस्को काल बुलेटिन

नेहरू का देहान्त राष्ट्रीय नेतृत्व में रिक्तता पैदा करता है।

वाशिंगटन पोस्ट

भारत ने एक महान नेता खो दिया है, जिनका नाम इस उपमहाद्वीप के इतिहास के अन्य महारथियों की पंक्ति में इतिहास के पृष्ठों में उल्लखित किया जायेगा।

क्रिश्चियन साइंस मोनीटर

नेहरू का स्मारक उनका आधुनिक भारत है""एकमात्र व्यक्ति ने अपार जन-समुदाय को एक सूत्र में बांधा और उनको एक राष्ट्र बनाया। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक पिता की तरह मार्गदर्शन दिया और बतलाया कि उन्हें क्या करना और क्या नहीं करना चाहिए; जब वे समय की गति से पटरी नहीं बैठा सके, उन्हें डांटा, सही मार्ग पर लाकर उन्हें आगे ले गये; जब वे इसके लिए तैयार थे, तब उन पर औद्धत्य के साथ अधिशासन किया, फिर भी उनके लिये एक ऐसा जनतन्त्र छोड़ गये जो किसी भी नवोदित देश की अपेक्षा, बड़ा हो या छोटा, अधिक शक्तिशाली था।

शिकागो सन-टाइम्स

दासताग्रस्त जनता की मुक्ति, राष्ट्रीय एवं व्यक्तिगत स्वेच्छा-स्वातन्त्र्य को बनाये रखना, जातिगत भेदभाव का उन्मूलन, आवश्यकता, बीमारी और अज्ञानता को निर्मूल करना इन सभी आदर्शों के लिए नेहरू लड़े—इस पर कोई अमरीकी असहमत नहीं हो सकता। उन ग्रामों में जिनमें भारत की बहुमत की लगभग ४७ करोड़ जनता निवास करती है, नेहरू ने भारत बनकर स्वयं निवास किया। वह ... शताब्दी के महानतम, सबसे प्यारे और सबसे बढ़कर अभिन्नता पैदा करने

निश्चयपूर्वक कई समस्याएं खड़ी करेंगे। उनमें अपने देशवासियों का सम्राट अशोक का मानवतावादी राजनेतापन, राजपूत रजवाड़े का गौरवाभिमान, गांधी जी का आदर्शवाद और कृष्णमेनन की राजनीतिक चतुराई की अनेक परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का संगम था।

शायद यह भिन्नता या विरोधी तत्त्वों का मेल नेहरू के उनके भारतीयों पर अभेद्य अधिकार का रहस्य बतला सकता है—शायद उनका यह अबाधित अधिकार उनकी जनता के लिए सबसे बुरी विरासत सिद्ध हो सकता है''''भारतीयों पर उनका अधिकार विस्तृत रूप में नैतिक था और कमो-बेशी में अबाधित था। यही अबाधिता उनके लम्बे एवं साधारणतया कल्याणयुक्त शासन का सबसे बड़ा दुखद पहलू होने की सम्भावना है क्योंकि जहां उनकी इस विशेषता ने एक तरफ खतरनाक प्रत्याशियों की हिम्मत पस्त की, वहां उसने वैध आलोचकों एवं शक्तिशाली उत्तराधिकारियों का तेज भी धीमा किया''''उनकी महानता निश्चयपूर्वक दोषमुक्त नहीं थी किन्तु वह सच्ची थी। भारत एवं विश्व उनके अभाव में रिक्तता अनुभव करेंगे।

न्यूयार्क डेली न्यूज

नेहरू ने अपने भारत के लिए चन्द उपलब्धियां कीं। उन्होंने कठिन परिस्थितियों में भी व्यवस्था को बनाये रखा।

दि टाइम्स

राष्ट्रमण्डल को जनवरी में नेहरू की बीमारी से भले ही पूर्व संकेत मिल चुका, फिर भी नेहरू के देहान्त से आघात पहुंचा है। अविवादास्पद ढंग पर उनकी उपस्थिति एक सार्वभौम उपस्थिति थी जो अपने को संघटित करने वाले पुनर्जाग्रत एशिया में सर्वप्रथम आई थी।

भारत में स्वाधीनता संग्राम के नेता के रूप में और स्वतन्त्रता प्राप्त भारत के प्रधानमन्त्री के रूप में उन्होंने विश्व का दर्जा प्राप्त किया। किन्तु विश्व की श्रद्धांजलि उस एकाकी राष्ट्रीय पक्ष को नहीं, बल्कि उस मानव को अर्पित की जाती है जिसकी उपलब्धि यूरोप के साम्राज्यवादी प्रत्यागमन के युग में देश के संक्षोभ के मध्य में भी अपने अन्तर्राष्ट्रीय आदर्शों को प्राणवान बनाए रखना था यह प्रकट करना था कि शासक और शासित में कटुता कैसे मिटाई जा सकती है अर्थात् एक युग को छोड़कर गौरवपूर्वक दूसरे युग में पदार्पण करना था।

महान संघर्ष में नेतृत्व दे सकता है, इसका लगभग सारा श्रेय भी नेहरू को है।

वह एक महान्, आकर्षक और यत्न-पूर्वक करा लेने वाले व्यक्तित्व थे। विश
उनके निधन से निर्धन हो गया है।

डेली हेराल्ड

नेहरूजी के पश्चात् जो कोई भारत का नेतृत्व करे, वह ४३८ मिलियन जन
संख्यक राष्ट्र का नेतृत्व करता है। वहां के अधिकांश लोग दो पौंड मासिक प
गुजर करते हैं।

जो कोई भारत का नेता होगा, वह ऐसी भूमि को नेतृत्व देता है जहां नर
नारी और बच्चे अभी आजीवन भूखे रहते हैं।

यह ऐसी भूमि है जहां इन सभी डांवाडोल असमानताओं के बावजूद लोक
तन्त्र और स्वतन्त्रता किसी-न-किसी रूप में अब भी विद्यमान है।

यह विद्यमानता ही नेहरू का स्मारक है यदि आज विश्व नेहरू के निधन प
सचमुच शोक मना रहा है, तो उसे पूर्व की अपेक्षा कहीं अधिक पैमाने पर सहायत
करके अपनी सत्यनिष्ठा का परिचय देना चाहिए।

डेली स्केच

इतिहास बताएगा कि उनकी महानता विश्व मामलों में ही नहीं, अपितु भार
को एक सगठित राष्ट्र के रूप में बनाए रखने में भी थी।

डेली वर्कर

करोड़ों लोग यह दुखद समाचार सुनकर हैरान हुए। उनका नाम
भारतीयों के स्वाधीनता-संग्राम से स्थापित किया गया, अतः उनका मरण
और मुक्ति के लिए सभी दलित वर्गों द्वारा किए जाने वाले संघर्षों में अंतर
है।

इत्तफाक (पूर्वी पाकिस्तान)

इस महान् व्यक्ति का समसामयिक विश्व के इतिहास पर जो प्रभाव पड़
उसका विवेचन करना असंभव है।

श्री नेहरू किसी राष्ट्र व युग विशेष के नहीं थे। उन्होंने इतिहास का निर्मा
किया और उनके सर्वकालों में अमर रहेंगे।

महान संघर्ष में नेतृत्व दे सकता है, इसका लगभग सारा श्रेय श्री नेहरू को है।

वह एक महान, आकर्षक और बल-पूर्वक करा लेने वाले व्यक्तित्व थे। विश्व उनके निधन से निर्धन हो गया है।

डेली हेराल्ड

नेहरूजी के पश्चात् जो कोई भारत का नेतृत्व करे, वह ४३८ मिलियन ज संख्यक राष्ट्र का नेतृत्व करता है। वहां के अधिकांश लोग दो पौंड मासिक प गुजर करते हैं।

जो कोई भारत का नेता होगा, वह ऐसी भूमि को नेतृत्व देता है जहां न नारी और बच्चे अभी आजीवन भूखे रहते हैं।

यह ऐसी भूमि है जहां इन सभी डांवाडोल असमानताओं के बावजूद लो तन्त्र और स्वतन्त्रता किसी-न-किसी रूप में अब भी विद्यमान है।

वह विद्यमानता ही नेहरू का स्मारक है यदि आज विश्व नेहरू के निधन सचमुच शोक मना रहा है, तो उसे पूर्व की अपेक्षा कहीं अधिक पैमाने पर सहाय करके अपनी सत्यनिष्ठा का परिचय देना चाहिए।

डेली स्केच

इतिहास बताएगा कि उनकी महानता विश्व मामलों में ही नहीं, अपितु भा को एक संगठित राष्ट्र के रूप में बनाए रखने में भी थी।

डेली वर्कर

करोड़ो लोग यह दुखद समाचार सुनकर शोकात हुए। उनका ना भारतीयों के स्वाधीनता-संग्राम से स्थापित किया गया, अतः उनका सम्बन्ध स्व और मुक्ति के लिए सभी दलित वर्गों द्वारा किए जाने वाले संघर्षों से जोड़ा जा है।

इत्तफाक (पूर्वी पाकिस्तान)

इस महान् व्यक्ति का समसामयिक विश्व के इतिहास पर जो प्रभाव प उसका विश्लेषण करना भाषातीत है।

श्री नेहरू किसी राष्ट्र व युग विशेष के नहीं थे। उन्होंने इतिहास का नि किया और उसमें सर्वकालों में अमर रहेंगे।

महान संघर्ष में नेतृत्व दे सकता है, इसका लगभग सारा श्रेय श्री नेहरू को है।

वह एक महान्, आकर्षक और बल-पूर्वक करा लेने वाले व्यक्तित्व थे। विश्व उनके निधन से निर्धन हो गया है।

डेली हेराल्ड

नेहरूजी के पश्चात् जो कोई भारत का नेतृत्व करे, वह ४३८ मिलियन जन-संख्यक राष्ट्र का नेतृत्व करता है। वहा के अधिकाश लोग दो पौंड मासिक पर गुज़र करते हैं।

जो कोई भारत का नेता होगा, वह ऐसी भूमि को नेतृत्व देता है जहां नर-नारी और बच्चे अभी आजीवन भूखे रहते हैं।

यह ऐसी भूमि है जहां इन सभी डांवाडोल असमानताओं के बावजूद लोक-तन्त्र और स्वतन्त्रता किसी-न-किसी रूप में अब भी विद्यमान है।

वह विद्यमानता ही नेहरू का स्मारक है यदि आज विश्व नेहरू के निधन पर सचमुच शोक मना रहा है, तो उसे पूर्व की अपेक्षा कहीं अधिक पैमाने पर सहायता करके अपनी सत्यनिष्ठा का परिचय देना चाहिए।

डेली स्केच

इतिहास बताएगा कि उनकी महानता विश्व मामलों में ही नहीं, अपितु भारत को एक संगठित राष्ट्र के रूप में बनाए रखने में भी थी।

डेली वर्कर

करोड़ों लोग यह दुखद समाचार सुनकर शोकार्त हुए। उनका तादात्म्य भारतीयों के स्वाधीनता-संग्राम से स्थापित किया गया, अतः उनका सम्बन्ध स्वेच्छा और मुक्ति के लिए सभी दलित वर्गों द्वारा किए जाने वाले संघर्षों से जोड़ा जाता है।

इत्तफाक (पूर्वी पाकिस्तान)

थ[illegible] व्यक्ति का समसामयिक विश्व के
जाती [illegible] भावातीत है।
सद्योज के
यह प्रगट कर[illegible]
अर्थात् एक युग के

महान प्रेरणा स्रोत रहा जिनमें जनरल अंग सान अग्रतम हैं। दक्षिण पूर्वी एशिया के छोटे राष्ट्रों ने नेहरू का अभिनन्दन उनके गौरव और उस जागरूकता के लिए किया जिसके साथ उन्होंने सीमान्त प्रश्न पर लाल चीन से अपने देश के संघर्ष में आने के कठिन दिनों में भारत के मामलों का निपटारा किया।

ले फिगारो (फ्रांस)

नेहरू एक असाधारण मानव एवं राष्ट्रीय वीर हैं जो जनसाधारण द्वारा पूजे जाकर बुद्धिजीवियों की प्रशंसा के पात्र हुए।

वह पूर्व और पश्चिम का अजीब मिश्रण, सर्वत्र विश्राम लेने वाले किन्तु स्वराष्ट्र में कर्मिष्ठ, उत्तेजना पैदा करने वाले, मोहक, विरोधी विचार व गुणवान तथा भविष्यवाणी से परे थे।

ला सौरोर (फ्रांस)

नेहरू अपने देश की आत्मा और साम्यवाद के विरुद्ध एक अभेद्य दुर्ग बन गये थे जिसके हानिकारक स्वभाव का पता बहुत देर से चला है। वह प्रबल व्यक्ति और गढ़ अब नहीं है। यदि उनकी मृत्यु से कोई कहे कि हिमालय खंड-खंड हो गया है, तो अतिशयोक्ति नहीं।

ला ह्यूमनेट

नेहरू ने पूरे जोश व खरोश के साथ युद्धहीन विश्व की इच्छा की और इस कठिन मार्ग पर मानवता की प्रगति होने में अपनी समस्त शक्ति लगाकर योगदान किया।

अल योघा

नेहरू जो अपर ईसामसीह थे, निर्विरोध सूली पर चढ़े।

अल अय्याग (ईदन)

मानवता ने एक अद्वितीय पुरुष को खो दिया।

अर्बीडेरब्लाडेट (नार्वे)

नेहरू के देहांत से हमें भारत एवं उसकी जनता के लिए यह आशा लगानी

चाहिए कि उनके प्रियतम नेता की स्मृति, अव्यवस्था न फैलने देने के लिए, धीरज और सहयोग का तकाज़ा करेगी।

नीथस ओस्टेरिश (आस्ट्रिया)

श्री नेहरू एक निरस्त्र शांति-निर्माता और विश्व मंच के एक महान पुरुष थे।

आरबाईटर जेइटिंग (आस्ट्रिया)

श्री नेहरू अपने महान् अधिकार के लिए इस बात के ऋणी हैं कि उन्होंने अन्य राजनीतिज्ञों के विपरीत सज्जनता को अपनी राजनीति का केन्द्र-बिन्दु बनाया। उन्होंने महात्मा गांधी जी के आदर्शों का निरन्तर अनुसरण किया—दूसरों के मन में भ्रांत धारणा पैदा करने की उस हद तक किया जिस हद तक उन्होंने पूर्व स्थिति स्थापित करने के लिए चीनी आक्रमण को जितनी दृढ़ता के साथ प्रतिरोध करना चाहिए था, उतनी दृढ़ता के साथ पग उठाने से इनकार किया था।

जैसा कि कश्मीर के विषय में उनका रुख स्पष्ट था, नेहरू महात्मा गांधी की भांति अविचलित दृढ़ता प्रदर्शित करने में समर्थ थे।

डेगन्स नैहेस्टर (स्वीडन)

शक्ति-गुटों में विभाजित विश्व में, वे तटस्थता के पैगम्बर थे।

स्टाक्होम्स टैडनिंगेन (स्वीडन)

नेहरू के नेतृत्व में भारत ने यह सिद्ध कर दिया कि एक निर्धन देश में भी लोकतंत्र स्थापित किया जाकर पल्लवित-पुष्पित किया जा सकता है।

दि रांड डेली मेल (दक्षिण अफ्रीका)

पंडित नेहरू आधुनिक एशिया के एक महान् व्यक्ति थे। वे अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार में उच्चादर्शवादी पुरुष थे।

दि केप टाइम्स (दक्षिण अफ्रीका)

जवाहरलाल नेहरू एक विख्यात उच्च राजनीतिज्ञ और एशिया के राष्ट्रीय नेता थे। वे यह सिद्ध करने में समर्थ हुए कि ऐसे देश में भी जिसमें कोई लोकतांत्रिक परम्परा नहीं है, वैधिक प्रजातंत्र सफलतापूर्वक हो सकता है।

मिस्र के समाचार पत्रों ने नेहरू के निधन का समाचार काला हाशिया देकर छापा और भारत की स्वाधीनता प्राप्ति में उनकी प्रमुख भूमिका और अरब राष्ट्रों को उनके द्वारा समर्थन तथा उनकी तटस्थता नीति की अत्यन्त प्रशंसा करते हुए, सम्पादकीय लिखे।

समाचार पत्रों में अधिकांश पृष्ठ दिवंगत प्रधानमंत्री के जीवन एवं उपलब्धियों के लिए नियोजित किये गये।

ट्युनीशिया के सत्तारूढ़ दल की अधिकारिक पत्रिका

वे निःसंदिग्ध रूप से, एक राजनीति-विशारद, अपने सिद्धांतों के प्रति वफ़ादार, स्वाधीनता, मानवता की शांति एवं सह-जीवन में अत्यन्त निष्ठावान एवं आस्थावान मनुष्य थे। उनकी मृत्यु से समग्र मानवता को क्षति पहुंची है।

असहिशिबुन (जापान)

विकासमान् राष्ट्र ह्रास की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में, अपना मत प्रकाशनाधिकार दिलानेवाली नेहरू की कूटनीति के अत्यन्त ऋणी थे।

टोकियो शिम्बु

जापान भारत का सर्वथा आभारी रहेगा इसलिए कि नेहरू ने जापान को उसकी कुछ भूमि सौंप देने पर बाध्य करनेवाले १९५१ के सानफ्रान्सिसको समझौते पर, हस्ताक्षर करने से इनकार किया था।

ला सुयस्सी (जेनेवा)

श्री नेहरू के स्वर्गवास में, विश्व ने स्वतन्त्रता के महान् योद्धा और पश्चिम का एक स्नेही खोया है।

बोर्बा (युगोस्लोवाकिया)

भारत एवं विश्व के लिए, नेहरू विहीन राजनैतिक जीवन से अभ्यस्त होने में कठिनाई होगी। भारत के इतिहास में, युग की स्थापना करनेवाला उनका व्यक्तित्व उनकी मानवतावादी भावना और शांति-सेनानी के रूप में उसका सातत्य भारत के भावी मार्ग में प्रकाश-स्तम्भ बनकर खड़े रहेंगे।

बाल्टिमोर सन (संयुक्त राज्य अमरीका)

प्रत्येक शताब्दी में केवल कुछ ही ऐसे पुरुष जन्म लेते हैं जो अपने साथियों की भावनाओं एवं विवेक पर छाये रहते हैं और इतिहास निर्माता तथा कर्मवीर के रूप में, असाधारण होते हैं। हमारे इस जमाने में, ऐसे दुर्लभ पुरुषों में, दो भारतीय भी थे। उनमें पहले की मृत्यु हो चुकी थी और अब द्वितीय पुरुष की हुई है। ये प्रथम व्यक्ति थे महात्मा गांधी जिनके अवसान की रात्रि को जवाहरलाल नेहरू ने कहा था : "हमारे जीवन में से प्रकाश चला गया है और सर्वत्र अन्धकार छाया हुआ है।"

दि इकोनोमिस्ट (लन्दन)

साधारणतया विश्व को उनकी अपने देशवासियों की, अफ्रो-एशियाई विश्व की और शेष विश्व की अनन्य सेवाएं पहचानना कठिन नहीं होगा।

सही मानों में नेहरू का शायद कोई उत्तराधिकारी हो नहीं सकता। उनकी स्थिति इससे १७ वर्ष पूर्व ही बेजोड़ हो चुकी थी। जब उन्होंने भारत को स्वाधीनता के सिंह द्वार में से गुजारा था।

पच्चीस वर्ष तक उनकी कांग्रेस की अनथक सेवा से, उन्हें गांधी जी ने न केवल अपना मुख्य सेनानी और अप्रतिम वारिस बनाया, बल्कि एक प्रकार से, अपना धर्मनिरपेक्ष अपने सुदीर्घ प्रधानमंत्री काल पर्यन्त, उन्होंने देश के अपरिमेय जन-समुदाय पर लगभग अजेय अधिकार बनाये रखा।

डेली मिरर (श्रीलंका)

नेहरू ने अपना वरद-हस्त विश्व के कोने-कोने की ओर, मैत्री में बढ़ाया। उनका यह स्नेह मृत्यु के जीवन से अधिक चिरजीवी है और उनकी महानता की स्मृति को प्रज्वलित रखता है। यही स्नेह विश्वव्यापी स्तर पर शोक भी मनवा रहा है।

डेली न्यूज (श्रीलंका)

मार्जन, विद्वत्ता, दूरदर्शिता एवं अतिमानवीय भावना की मूर्ति नेहरू ने अपने एकमात्र मानवीय आकार में, पूर्व पश्चिम की सारगर्भित विशेषताओं को समान रूप से आत्मसात् किया।

आज जबकि विश्व भारतीय राजनीति के भावी रूप के बारे में सन्देह में

पड़ा है, सभी सद्भावियों के मन में एक ही अभिलाषा जाग रही है और वह यह कि नेहरू ने जो कुछ निर्माण किया, उसे हमेशा के लिए सुरक्षित किया जाए।

तांजुग (युगोस्लाविया की सरकारी प्रेस एजेन्सी)

नेहरू के निधन से, भारत के एक महान् नेता और शांति तथा रचनात्मक अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के महानतम योद्धा ने, विश्व के राजनैतिक मंच से प्रस्थान किया।

उनकी तटस्थता नीति, निरस्त्रीकरण समस्या का हल निकालने की दिशा में उनके प्रयास, निर्गुट राष्ट्रों के बेलग्रेड सम्मेलन में उनकी भूमिका, उपनिवेशवाद और जातिगत भेदभाव के विरुद्ध संघर्ष में उनका योगदान और नवोदित एवं विकासमान राष्ट्रों को उनका मूल्यवान समर्थन भारत के स्वाधीनोत्तरकाल में 'स्वर्णिम अध्यायों' के रूप में अंकित रहेंगे।

अपनी जनता के इतिहास में नेहरू इस तथ्य को प्रकट करने वाले प्रथम व्यक्ति थे कि भारत को समाजवाद के मार्ग पर चलना चाहिए।

नेहरू युगोस्लाविया के जन-जन में 'महान मित्र' बनकर सदैव रहेंगे।

राष्ट्रपति टिटो और प्रधानमंत्री नेहरू के मध्य प्रत्येक भेंट में युगोस्लाविया और भारत के बीच एकतापूर्वक सहयोग तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के शांतिपूर्ण हल के लिए सामान्य पक्षों का एक नवीन अध्याय जुड़ता था।

नेहरू के निधन से, भारत ने एक महान् नेता, विश्व ने अन्तर्राष्ट्रीय समानता एवं शांतिपूर्ण सहयोग का महान् योद्धा और युगोस्लाविया ने अपना महान् मित्र खोया है।

हेत व्रिजे वोल्क (आम्सटरडम)

नेहरू के निधन से भारतीय इतिहास का एक अध्याय समाप्त हो गया है। वे ऐसे भारतीय थे जिन्होंने नेतृत्व देकर राष्ट्र का निर्माण किया, उनकी शक्ति उनकी सोच थी और कुशलता से देश को एकता के सूत्र में बांधे रखा।

अल अरब

जब एक महान् देश से एक महान् मानव के हृदय की धड़कन बन्द हो गई — एक मानव की धड़कन जिसने भारत देशवासियों को यह अवसर दिया कि [illegible] [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] है जिन्होंने [illegible]

यातना दी, राष्ट्रीयतावादी मुक्ति आंदोलन को अग्नि लगाकर इतिहास में पूर्ण वैभव और गौरव के नये पृष्ठ जोड़े थे। सहिष्णुता के पुरुष नेहरू का देहान्त हो गया है, जो मुसलमान, ईसाई, हिन्दू और सिखों के प्रेम-पात्र थे।

नार्तरन न्यूज (सेंट्रल अफ्रीका)

नेहरू के देहावसान ने अन्तर्राष्ट्रीय मंच से शायद विश्व का महानतम नेता छीन लिया है।

दि सिडनी मार्निंग हेराल्ड

नेहरू की मृत्यु ने मंच से शताब्दी का एक महान् व्यक्ति हटा दिया है जिसके अवसान का शोक देश के पार भी मनाया जाएगा। उन्होंने भारत को स्वाधीनता दी और उसे लोकतन्त्र के मार्गों में शिक्षा प्रदान की।

• • •

कौम के रूप में आगे बढ़ेंगे

"हमारा दिमाग दूर जाए विज्ञान में, और बातों में जाए। हमारा मन एक जीवित मन हो, जिसे हर वक्त कुछ तलाश हो, जानने की जिज्ञासा हो, सीखने की इच्छा हो, दुनिया के सब दरवाजे हमारे लिए खुले हों तब हम सीखेंगे और एक कौम के रूप में आगे बढ़ेंगे।"

—जवाहरलाल नेहरू

परिशिष्ट (क)

जवाहरलाल अपनी दृष्टि में

[जवाहरलाल जी सन् १९३६ के लखनऊ अधिवेशन और सन् १९३७ के फैजपुर अधिवेशन के सभापति रह चुके थे। इस प्रकार वे दो साल लगातार सभापति बन चुके थे। वे अगली बार खड़ा नहीं होना चाहते थे। इस कारण उन्होंने कलकत्ता के 'माडर्न रिव्यू' में बिना नाम एक लेख निकाला। उसमें उन्होंने स्वयं ही अपना चुनाव होने का विरोध किया। यह कोई नहीं जानता था कि यह लेख किसने लिखा है।

लेख में 'राष्ट्रपति' शब्द का प्रयोग किया गया है। स्वतन्त्रता से पहिले कांग्रेस के सभापति को 'राष्ट्रपति' सम्बोधित किया जाता था।

जवाहरलाल जी के इस लेख को आज भी पढ़कर रोमांच हो आता है। यह उनके आत्म चिन्तन और आत्म विश्लेषण का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

उनके यह शब्द "मैंने इस मानवीय ज्वार (अपार जन समूह) को अपने हाथों में लिया और अपना आदेश आकाश के आर-पार सितारों पर लिख दिया;" शताब्दियों तक भारत के करोड़ों नर-नारियों के हृदय को आलोकित करते रहेंगे। यद्यपि 'लाल गुलाब' मुरझा गया है, किन्तु उसकी मादक सुगंध सदैव व्याप्त रहेगी।]

"राष्ट्रपति की जय।" प्रतीक्षारत जन-समूह के बीच तेजी से गुजरते हुए 'राष्ट्रपति' ने अपनी दृष्टि ऊपर उठाई, हाथ भी ऊपर उठकर अभिवादन की मुद्रा में जुड़ गये और पीतम कठोर चेहरे पर मुस्कराहट खिल उठी। यह अत्यन्त उल्लास पूर्ण व्यक्तिगत मुस्कराहट थी और जिन लोगों ने इसे देखा उन सभी ने तुरन्त ही मुस्कराहट और हर्ष-ध्वनि के रूप में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की।

मुस्कराहट गुजर गई और चेहरा पुनः गम्भीर, उदास तथा विशाल दर्शन

समूह में जाग्रत भावना के प्रति उदासीन हो गया। ऐसा प्रतीत हो उठा कि उसकी मुस्कान तथा मुद्रा यथार्थ नहीं है, बल्कि उन जन-समूहों की सद्भावना प्राप्त करने की चाल पर है, जिनका वह नायक बना हुआ है। क्या सचमुच यही बात है?

फिर से देखें। एक विशाल जुलूस है जिसमें हजारों लाखों व्यक्ति उसकी कार को घेरे आनन्दातिरेक से हर्ष-ध्वनि कर रहे हैं। वह कार की सीट पर अच्छी तरह सन्तुलन के साथ खड़ा है, सीधा-सा देवता की तरह, शान्त और उत्तेजित भीड़ से प्रभावित।

अचानक पुनः वही मुस्कान फिर उठती है और अर्थपूर्ण हास्य बिखर उठता है जिससे तनाव टूट जाता है और भीड़ भी हंसने लगती है। वह देवतुल्य नहीं है। बल्कि साधारण मानव है जिसे उन हजारों लाखों लोगों की मैत्री तथा निकटता प्राप्त है जो उसे घेरे हुए हैं। भीड़ प्रसन्न हो उठती है और निश्छल मैत्री-भाव से उसे अपने दिल में उठा लेती है। लेकिन देखें। मुस्कराहट लुप्त हो चुकी है और चेहरा पुनः गम्भीर और उदास हो गया है।

क्या यह सब इस सार्वजनिक व्यक्ति की सुविचाररत चाल मात्र है या स्वाभाविक प्रतिक्रिया है? शायद दोनों ही बातें सही हैं क्योंकि अरसे से चली आ रही आदत भी प्रकृति बन जाती है। सबसे प्रभावशाली मुद्रा वह है जिसमें सजगता और बनावट कम मालूम देती है और जवाहरलाल ने तो पाउडर एवं रंग रोगन के बगैर ही अभिनय करना भली-भांति सीख रखा है। अपनी जानी-बूझी लापर-वाही और अल्हड़ता का प्रदर्शन करते हुए वह सार्वजनिक मंच पर पूर्ण कलात्म-कता के साथ अभिनय करता है। यह उसे और देश को किस ओर ले जा रही है? इस दिखावटी प्रयोजनहीनता के पीछे इसका उद्देश्य क्या है? उसके इस मुखौटे के पीछे क्या छिपा है, कौन-सी आकांक्षाएं हैं, कौन-सी इच्छा-शक्ति और क्या-क्या अतृप्त कामनाएं हैं?

यह प्रश्न हर सूरत में रोचक लगेंगे क्योंकि जवाहरलाल एक ऐसा व्यक्ति है जो रुचि और ध्यान को स्वतः आकृष्ट करता है। लेकिन उनका हमारे लिए विशेष महत्त्व है, क्योंकि वह भारत के वर्तमान और सम्भवतः भविष्य से भी बंधा हुआ है और उसमें भारत को भारी लाभ और हानि पहुंचाने की क्षमता है। अतः हमको इन प्रश्नों का उत्तर खोजना ही होगा।

करीब दो वर्षों से वह कांग्रेस का अध्यक्ष बना हुआ है और कुछ लोगों का ख्याल है कि वह कांग्रेस कार्यसमिति में सिर्फ एक [illegible] है जिस पर दूसरों का नियन्त्रण रहता है। लेकिन फिर भी वह जनता में और जनता के सभी वर्गों

फासिस्ट चेहरा सार्वजनिक चेहरा होता है और सार्वजनिक अथवा निजी स्थलों पर शोभा नहीं देता। जवाहरलाल का चेहरा और वाणी—दोनों ही व्यक्तिगत हैं। यह शतप्रतिशत सही है कि भीड़ में भी उसकी आवाज़ भीड़ के हर व्यक्ति से अलग-अलग घरेलू तौर पर बोलती प्रतीत होती है।

रहस्यपूर्ण

उसकी वाणी सुनकर या भावुक चेहरा देखकर आदमी यह सोचने लगता है कि इसके पीछे न जाने क्या छिपा है, *क्या-क्या* इच्छाएं, विचार, विचित्र ग्रंथियां, दमित होकर शक्ति में ढली हुई आकांक्षाएं और लालसाएं छिपी हैं?

विचार श्रृंखला सार्वजनिक वक्तृता में तो उसे सहेजे रखती है पर शेष समय में उसका चेहरा खोया-खोया-सा लगता है क्योंकि उसका मन दूर कहीं कल्पनाओं और योजनाओं में भटक जाता है और अपने मानस-लोक के प्राणियों से अश्रव्य वार्तालाप करता है जिसके कारण संगी-साथियों का भी ध्यान नहीं रहता। क्या वह अपनी तूफानी जीवन यात्रा के बीच बिछड़े मनुष्यों को याद करता है या कि सफलतापूर्ण भविष्य का दिवास्वप्न देखता रहता है? *इसे भली भांति समझ लेना* चाहिए कि उसने जिस रास्ते पर कदम बढ़ाये हैं उस पर विश्राम की कोई गुंजाइश नहीं होती है और यहां तक कि विजय स्वयं भी बोझिल होती है। लारेन्स ने अरबों को सम्बोधित करते हुए कहा है—विद्रोह के लिए विश्रामालय नहीं हो सकते और न ही आनन्द के आभांश प्राप्त होते हैं।

तानाशाह के गुण

जवाहरलाल फासिस्ट नहीं हो सकता। लेकिन उसमें तानाशाह बनने के लिए जरूरी सभी गुण हैं—व्यापक लोकप्रियता, सुनिर्धारित उद्देश्य के प्रति सजगता, *शक्ति, गर्व, योग्यता, संघटन-कुशलता, कठोरता, असहिष्णुता तथा* कमजोर तथा अकर्मण्य के विरुद्ध थोड़ी-बहुत घृणा।

उसकी गरममिजाजी सर्व-ज्ञात है जिसे वह कोशिश करके भी नहीं छिपा पाता क्योंकि अधरों की वक्रता गुस्से को जाहिर कर ही देती है, काम पूरा करने की तीव्र आकांक्षा, अरुचिकर अथवा नापसन्द चीज़ों को दूर हटाकर नव-निर्माण का उतावलापन लोकतन्त्र की मन्थर प्रक्रिया को काफी अर्से तक बर्दाश्त नहीं कर सकते।

वह अकड़ कायम रखता है पर अपनी इच्छानुकूल उसे मोड़ भी सकता है,

सामान्यकाल में वह कुशल और सफल कार्याधिकारी मात्र रहेगा पर क्रान्तिकारी-काल में सीजरवाद उसके निकट खड़ा रहता है। तो क्या यह सम्भव नहीं है कि जवाहरलाल स्वयं को सीजर मानने लगे ?

खतरा

यहीं भारत और जवाहरलाल नेहरू के लिए खतरा उपस्थित हो जाता है क्योंकि भारत की स्वाधीनता सीजरवाद द्वारा नहीं प्राप्त होगी, बल्कि इससे तो देश की मुक्ति में अधिक विलम्ब होगा।

जवाहरलाल लगातार दो वर्ष से कांग्रेस का अध्यक्ष है और इस बीच उसने अपने-आपको इतना उपयोगी बना लिया है कि कई लोगों ने उसे तीसरी बार पुनः अध्यक्ष चुनने का सुझाव पेश किया है। लेकिन भारत तथा स्वयं जवाहरलाल के लिए इससे अधिक हानिकर बात और कोई नहीं हो सकती। उसे तीसरी बार अध्यक्ष चुनकर हम कांग्रेस की कीमत पर एक व्यक्ति को ऊपर चढ़ाएंगे और लोग सीजरवाद की दिशा में सोचने लगेंगे।

इससे जवाहरलाल में गलत प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिलेगा और उसमें घमण्ड एवं गर्व की मात्रा बढ़ेगी, वह मान बैठेगा कि केवल वही इस भारत को सम्भाल सकता है और भारत की समस्याओं को हल कर सकता है। स्मरण रहे कि पद के प्रति उदासीनता के दिखावे के बावजूद वह पिछले १७ वर्षों से लगातार कांग्रेस में किसी-न-किसी महत्वपूर्ण पद पर आसीन रहता चला आ रहा है। वह अपने-आपको अनिवार्य मानता होगा, यह एक बुरी बात है। भारत उसे तीसरी बार कांग्रेस का अध्यक्ष चुनकर लाभ में नहीं रहेगा।

इसका एक व्यक्तिगत कारण भी है। बहादुरी और बड़ी-बड़ी बातों के बावजूद जवाहरलाल इस समय थका हुआ और अस्वस्थ है। अब वह अध्यक्ष रहा तो उसकी स्थिति लगातार बिगड़ती चली जाएगी। वह आराम नहीं कर सकता क्योंकि शेर पर सवारी करने वाला कभी उतर नहीं सकता। लेकिन हम तो उसे कम-से-कम भटकने से और मानसिक ह्रास से बचा ही सकते हैं जिसका मुख्य कारण भारी दायित्व एवं कार्यभार है। हमको उससे भविष्य में काफी आशा है। अतः हमें इस आशा को और जवाहरलाल को भी विनष्ट नहीं होने देना चाहिए। उसका दम्भ, जैसे भी हो, उसको काबू में रखते हुए चलना चाहिए। हमें सीजरों की जरूरत नहीं है।

● ● ●

पूरी आज़ादी दे दी

सन् १९६२ में सब प्रान्तो मे विधान सभाओं के लिये चुनाव होने वाले थे। दलित वर्ग के स्थान पर पंडित नेहरू के निजी सेवक 'हरि' को कांग्रेस की ओर से चुनाव लड़ने के लिये खड़ा किया गया। हरि के विरोधी एक रायसाहब थे। पुरुषोत्तम दास टंडन पार्क में एक विशाल सभा आयोजित की गई। पंडित नेहरू ने जनता से अपील की कि वे हरि को ही वोट दें। इस अपील का जनता ने जोरदार करतल ध्वनि से स्वागत किया। उसी मंच पर हरि के विरोधी रायसाहब भी तशरीफ ले आये। रायसाहब ने नेहरूजी से कहा कि उन्हें भी कुछ बोलने का मौका दिया जाये। पंडित नेहरू ने तुरन्त अपनी अनुमति दे दी और इस प्रकार अपनी उदारता और लोकशाही व्यवहार का परिचय दिया। मंच पर बैठे हुए सभी नेताओं को आश्चर्य हुआ। रायसाहब उसी मंच से नेहरूजी के विरोध में दो-चार शब्द ही कह पाये थे कि सारी जनता ने "रायसाहब गद्दार है। हम नहीं सुनेंगे" के नारे लगाने शुरू कर दिये। जनता में कोलाहल छा गया। आखिर रायसाहब को हार मानकर नीचे बैठ जाना पड़ा। नेहरूजी ने कहा, "मैंने तो आपको अपनी तरफ से पूरी आज़ादी दे दी थी, अब जनता आपको नहीं सुनना चाहती तो मैं क्या कर सकता हूं।" यह कहकर नेहरूजी ज़ोर से हंस पड़े और सब मंच ने उनकी हंसी का साथ दिया। रायसाहब चुपचाप मंच को छोड़कर न जाने कहां खिसक गये।

रस पी ही लिया

राजधानी से ८ मील की दूरी पर ऐतिहासिक कुतुबमीनार के निकट एक गांव लालपुर है। यहां पर अमरीकी सरकार की ओर से एक प्रोजेक्ट सन् १९५८ में चालू किया गया। नेहरूजी ठीक ८ बजे प्रातः लालपुर पहुंच गये। प्रोजेक्ट देखने के बाद, वे पंचायत घर में पहुंचे, जहां एक प्रदर्शनी लगाई गई थी। प्रदर्शनी देखने के बाद वे सभा मंच पर पहुंच गये। पंचायत के प्रधान ने ग्रामवासियों की ओर से अभिनंदन पत्र पढ़ना शुरू किया। इसी बीच उपयुक्त समय देखकर, मैंने एक गिलास गन्नों का रस नेहरूजी की ओर बढ़ाया और कहा, "यह कृपा कर लीजिये।" उन्होंने गिलास हटाते हुए कहा, "नहीं।" इस पर मैंने उत्तर दिया, "पंडित जी यह रस तो गांव वालों की ओर से है। हमारी ओर से नहीं है।" उन्होंने कहा, "अच्छा, मुझे आधा गिलास दे दो।" मैंने गिलास से थोड़ा रस कम कर दिया। उन्होंने कहा, "यह आधा गिलास है?" और मेरे हाथ से दूसरा गिलास लेकर उसमें थोड़ा रस और उंडेल दिया और गिलास लेकर होंठों से लगाते हुए

कहा, "अब यह आधा गिलास हुआ।" नेहरूजी ने रस पी ही लिया, यह देखकर हम सब के चेहरे पर मुस्कराहट दौड़ गई।

फोटोग्राफर को हलकी डांट लगाई

नागालैंड का एक सांस्कृतिक दल राजधानी में आया। दल को ऐतिहासिक स्थानों के अतिरिक्त प्रधानमंत्री भवन भी ले जाया गया जहां उनकी भेंट नेहरूजी व इन्दिराजी से हुई। दल के नेता ने नेहरूजी व इन्दिराजी को सुंदर उपहार भेंट किये। इसके बाद ग्रूप फोटो होना था। नेहरूजी ने मुझसे कहा, "इनको बाहर लॉन में ले जाओ, मैं अभी आता हूं।"

हम सब लॉन में आ गये। फोटोग्राफर ने ग्रूप फोटो के लिये सदस्यों को अपने हिसाब से एक खास तरीके से तैयार कर लिया। जब नेहरूजी आये तो फोटोग्राफर को हल्की-सी डांट लगाते हुए बोले, "यह क्या तरीका है।" किसी ने उत्तर नहीं दिया। 'ठहरो। मैं अभी ठीक करता हूं।' यह कहकर उन्होंने अपने ढंग से कद वगैरा देखकर सदस्यों को एक करीने से तैयार कर दिया। फोटोग्राफर के तो होश हवास गुम से हो गये थे। मैंने उनके कान में धीरे से कहा, "घबराओ नहीं।" नेहरूजी ने अब फोटोग्राफर से पूछा, "मैं कहां पर खड़ा होऊं।" फोटोग्राफर से कुछ उत्तर नहीं बन पड़ा। मैंने तुरन्त उत्तर दिया "आप बीच में खड़े हो जाइये।" नेहरूजी मुस्कराये। वे बीच में खड़े हो गये। फोटोग्राफर की जान में जान आई और कैमरा ने दो बार क्लिक किया। फोटो खिंच गया। सभी ने दोनों हाथ जोड़कर नत मस्तक हो बिदाई ली।

तावांग के लामा गद्गद हो गये

२० अक्तूबर, १९६२ को चीन ने अचानक हमारी सीमाओं पर बर्बर आक्रमण कर दिया। खतरे की गम्भीरता को देखते हुए, तावांग खाली कर दिया गया और तावांग के लामा आसाम में आ गये। उसके बाद उन्होंने भारत के बौद्ध तीर्थ स्थानों को देखने की इच्छा प्रकट की और उसी प्रकार उनके लिए एक कार्यक्रम तैयार कर लिया गया। शीघ्र ही आक्रान्ता चीन को पीछे हटना पड़ा। तावांग वापिस लौटने से पहले, वे राजधानी में आये। १३ जून, १९६३ को दोपहर के एक बजे उनके दल की नेहरूजी से संसद भवन में भेंट निश्चित हुई। दल को साथ लेकर, मैं निश्चित समय पर संसद भवन पहुंच गया। जैसे ही नेहरूजी लोक सभा से निकलकर हाल में आये, दल के नेता श्री नग्वांग सोनान ने उनको सम्मान सहित स्कार्फ पहिनाया।

उसके बाद नेहरूजी ने सबको बैठने का इशारा किया। फिर नेहरूजी ने उनके रहन-सहन व अन्य कठिनाइयों के विषय में बार-बार पूछा। किन्तु दल के किसी सदस्य ने भी उत्तर नहीं दिया। उनका हृदय तो भारत की पवित्र भूमि व बौद्ध धर्म स्थान को देखकर पहले से गद्गद् हो रहा था। अन्त में श्री सोनाम ने कहा, "हम सब आज आपके दर्शन करके धन्य हो गये। हमको कोई कठिनाई नहीं है। हम साची और बोध गया जायेंगे और उसके बाद शिलांग पहुंचेंगे जहां उनके सर्वोच्च गुरु उनकी प्रतीक्षा में हैं।" नेहरूजी ने मुझसे पूछा, *"इनको कौन-कौन-सी जगह दिखाई हैं।"* मैंने उत्तर दिया कि अशोक विहार, ऐतिहासिक कुतुबमीनार व छतरपुर का विद्यालय देख चुके हैं। शाम को बौद्ध विहार देखने का प्रोग्राम है। अन्त में नेहरूजी ने यह कहकर कि "इनकी सुख-सुविधा का पूरा ध्यान रखा जाय और इनको कोई तकलीफ न हो, दल के सदस्यों से विदाई ली।

अन्तिम दर्शन

नेहरूजी के अन्तिम दर्शनों का सुअवसर राजधानी के नागरिकों को ३० अप्रैल १९६४ को मिला, जब वे गोविन्दवल्लभ पंत अस्पताल का उद्घाटन करने आये। उस समय किसी के मन में यह विचार आ ही नहीं सकता था कि २७ दिन बाद ही हम सब उनके दर्शनों से सदा सदा के लिए वंचित रह जाएंगे।

उस दिन अपने संदेश में उन्होंने जो विचार प्रकट किये, उसमें यह स्पष्ट था कि वे ग्राम विकास को कितना महत्त्व देते थे। उन्होंने कहा, "इस प्रकार के अस्पताल गांव में खुलने चाहिये जिससे गांवों की जनता निरोग रहे और स्वास्थ्यपूर्ण व सुखी जीवन व्यतीत कर सके।"

ऋतुराज लोप हो गया

२७ मई, १९६४ को अपने ७५वें बसन्त में ऋतुराज अचानक इस प्रकार लोप हो गया, कि फिर कभी लौटकर नहीं आएगा। किन्तु वह अपना सौरभ दुनिया को सुंघा गया। उसकी मादक सुगंध भारत और विश्व में जन मानस में सदा के लिए बस गई और [illegible] छाप छोड़ गई।

इतिहास पुरुष [illegible] चला गया। विश्व शान्ति मानवता को नया पथ दिखा।

	लन्दन में राष्ट्रमण्डल प्रधान मन्त्री सम्मेलन में भाग लिया और पेरिस, मिस्र, तुर्की तथा लेबनान की यात्रा की।
१९ सितम्बर १९६०	पाकिस्तान से सिंधु-पानी-संधि की।
१८ जनवरी १९६१	नई दिल्ली में घोषणा की कि चीन ने भारत की उत्तरी सीमा पर हमला किया है और पाकिस्तान को कश्मीर की सीमा निर्धारण के बारे में चीन से वार्ता करने के लिए राजी होना उचित नहीं है।
१२ दिसम्बर १९६१	रूस के राष्ट्रपति ब्रेजनेव से मिले।
२२ अक्तूबर १९६२	चीन के आक्रमण का सामना करने के लिए राष्ट्र को संगठित होने का संदेश दिया।
१३ जनवरी १९६३	लंका, संयुक्त अरब गणराज्य और घाना के प्रतिनिधियों से भारत-चीन विवाद पर कोलम्बो प्रस्ताव पर वार्ता की।
जनवरी १९६४	भुवनेश्वर कांग्रेस अधिवेशन के समय बीमार पड़े।
२३-२६ मई १९६४	आराम के लिए देहरादून रहे।
२७ मई १९६४	पार्थिव शरीर का त्याग किया।

● ● ●

"उन्हें किसी श्रद्धांजलि की, किसी स्मारक की आवश्यकता नहीं है। आधुनिक भारत, नया भारत, जिसका उन्होंने निर्माण किया है, यही उनका अमर स्मारक है।"

सहायक सामग्री

पुस्तकें :

पुस्तक	लेखक
१. मेरी कहानी	श्री जवाहरलाल नेहरू
२. इतिहास के महापुरुष	"
३. हिन्दुस्तान की कहानी	"
४. कुछ पुरानी चिट्ठियां	"
५. नेहरू ही क्यों?	डा० शरद चन्द्र जैन
६. नेहरूजी का विद्यार्थी जीवन	श्री यशपाल जैन
७. जनता के जवाहर	श्री बाबूराम जोशी
८. नेहरूजी की अमर स्मृति	श्री राज शर्मा

पत्रिकायें :

पत्रिका	
१. महिला प्रगति के पथ पर	जून १९६४
२. समाज कल्याण	"
३. आंध्र प्रदेश "नेहरू विशेषांक"	"

समाचार पत्र :

१. नवभारत टाइम्स
२. हिन्दुस्तान
३. आज